पिंगल-प्रकाश

लेखक—

प० रघुबरदयालु मिश्र, 'विशारद'

प्रकाशक—

रत्नाश्रम, आगरा।

थम } १९३३ { मूल्य २)

विषय-सूची

आत्म-निवेदन

श्री वीणापाणि भगवती भारती के पद-कमलो मे यथा-शक्ति अपनी श्रद्धाञ्जलि चढाना प्रत्येक भक्त का कर्त्तव्य है। अपने आप उस श्रद्धाजलि का परिचय देना एक प्रकार मे नितान्त अनावश्यक है। पर परिचय देने की जब एक रूढि सी चल पडी है तब उस पथ का पथिक बनना आवश्यक हो जाता है। इसी रूढि का पालन करने के नाते मैं भी यहाँ प्रस्तुत पोथी के सम्बन्ध मे थोडे शब्दो मे आत्म-निवेदन कर देता हूँ।

जब कि छन्दशास्त्र पर आज हिन्दी मे अनेक पोथियाँ मौजूद हैं फिर नई पोथी की आवश्यकता क्यो हुई ? यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है। बात यह है कि मुझे छुटपन से ही पद्य-भाग से प्रेम है। जब कुछ समझ आई तब, दोहा चौपाइयो जैसे सीधेसादे छन्दो मे तुकबन्दियाँ गढने लगा। धीरे धीरे साहस बढता गया और सवैया, कवित्तों पर भी हाथ माँजने लगा। छन्द ठीक है या नही ? शब्दो का प्रयोग ठीक हुआ है या नही ? इन बातो से कोई सरोकार न था।

आगे चलकर प्रथमा और मध्यमा की सम्मेलन-परीक्षाएँ दी। उत्तीर्ण भी हुआ। पर छन्दशास्त्र मे प्रवेश न पा सका। कारण कि इस विषय के सीखने के उपयुक्त साधन नहीं मिल सके। जब 'साहित्य-रत्न' की तैयारी मे लगा तब आवश्यकता हुई कि छन्दशास्त्र का भलीभाँति अध्ययन किया जाय। परीक्षा मे 'भानु जी' का छन्द प्रभाकर था—जो आज भी है, उस का स्वाध्याय करने लगा। उस की परिभाषाएँ पद्य-बद्ध होने से प्रत्यय-प्रकरण कही तो

समझ मे आ जाना और कही न आता, अत योग्य गुरु की तलाश मे लगा । इधर 'तुलसी-साहित्य' का भी अध्ययन करना था । इस विषय मे **विज्ञान और साहित्य के प्रसिद्ध विद्वान बाबू रामदास जी गौड़** का नाम सुन रखा था ।

सौभाग्य से कानपुर के 'अखिल-भारतवर्षीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन' मे सम्मिलित होने का अवसर मिला । वहाँ स्वर्गीय **लाला भगवान दीन जी 'दीन'** द्वारा श्री गौड जी से परिचय हुआ । मैंने उन मे अपनी बात कही । शकर जी की कृपा से स्वीकृति मिल गई । सम्मेलन समाप्त होने पर मै घर गया । थोडे दिन मे इटावे से काशी जा पहुँचा । कई महीने तक श्री गौड जी का ही अतिथि रहा । आगे चलकर उन्होने म्युनिसिपल स्कूल मे साहित्य का शिक्षक नियुक्त करा दिया । इस तरह निश्चिन्त होकर साहित्य का अध्ययन करने लगा ।

आपने प्राचीन और आधुनिक पिंगल की अनेक पुस्तको से मुझे छन्दशास्त्र पढाया । उस की बारीकियाँ समझाई । प्रत्यय-प्रकरण, जिसे लोग टाल दिया करते थे—भलीभाँति हृदयगम करा दिया । उस समय पिगलसम्बन्धी अनेक बाते मैं ने नोट कर ली । पढ चुकने के बाद इच्छा हुई कि मै भी पिगल पर एक पोथी लिखूँ जिस मे नोट की हुई बाते आ जावे । और प्रत्यय-प्रकरण खूब खोल कर लिखूँ । इधर साहित्य पढाने मे नये नये छन्द मिलने लगे जिन के लक्षण मिलने मे कठिनाई होने लगी । साथ ही **रहस्यवाद के प्रगाढ़ पंडित अ० श्री पं० लक्ष्मणनारायण जी 'गर्दे'** के सत्संग से छायावाद की चरचा भी सामने आई । बस नामी छायावादी—रहस्यवादी—कवियों की रचनाएँ पढ़ने लगा ।

रचनाओ मे रुचि हुई। उन के छन्दो के रहस्य का पता लगाया। इधर उर्दू, बॅगला, मराठी आदि के छन्दो को भी हिन्दी मे देखा तो दृढतम धारणा हो गई कि अब पिंगल पर जरूर एक पोथी लिखनी चाहिए। बस चुपचाप इस काम मे लग गया। कुछ दिनो मे प्रत्यय-प्रकरण तैयार हो गया।

सयोग से उन्ही दिनो एक बार मेरे वयोवृद्ध भाई **अध्यापक रामरत्न** जी काशी पधारे। 'पिंगल पर पोथी' लिखने की मै ने उन से चरचा की अपने नोट दिखलाये, प्रत्यय-प्रकरण उन्होने बहुत पसद किया और कहा कि 'यह गद्य का युग है पद्यो का नही।' इसलिए छन्दो की परिभाषाएँ तो सीधीसादी परिमार्जित गद्य मे लिखो और उदाहरण अर्वाचीन और प्राचीन सुकवियो की ललित-रचनाओ से दो। पर साथ ही ध्यान रखो कि उदाहरण घोरशृगारी न हो। वे ऐसे हो कि जिन्हे माता, पिता और गुरुजन अपनी बहू-बेटियो तक को निस्सकोच पढा सके। आप की अमूल्य सम्मति से मेरा उत्साह और बढ गया और तनमन से इस काम मे लग गया। बस प्रस्तुत पोथी की यह आरंभिक आत्म-कहानी है।

प्रस्तुत पोथी की रूप-रेखा तैयार होने पर उसे श्री **गौड़** जी को दिखाया। उन्हो ने इस शैली को पसद किया और आज्ञा दी कि इस पोथी मे आजतक के प्राय सभी छन्द आ जाने चाहिएँ। उन की आज्ञा शिरोधार्य कर मैंने परिवर्धित छन्द-वश-वृक्ष बनाया, जिसे उन्होने स्वीकारलिया। बस उसी के आधार पर मैंने छन्दो का वर्गीकरण किया। जब पोथी तैयार हो गई तब मैंने श्री **गौड़** जी के सामने रख दी। उन्हो ने उसे ध्यान से सुना और पढा भी, अनेक

समझ मे आ जाना और कही न आता, अत योग्य गुरु की तलाश मे लगा । इधर 'तुलसी-साहित्य' का भी अध्ययन करना था । इस विषय मे **विज्ञान और साहित्य के प्रसिद्ध विद्वान बाबू रामदास जी गौड़** का नाम सुन रखा था ।

सौभाग्य से कानपुर के 'अखिल-भारतवर्षीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन' मे सम्मिलित होने का अवसर मिला । वहाँ स्वर्गीय **लाला भगवान दीन जी 'दीन'** द्वारा श्री गौड जी से परिचय हुआ । मैने उन से अपनी बात कही । शकर जी की कृपा से स्वीकृति मिल गई । सम्मेलन समाप्त होने पर मै घर गया । थोडे दिन मे इटावे से काशी जा पहुँचा । कई महीने तक श्री गौड जी का ही अतिथि रहा । आगे चलकर उन्होने म्युनिसिपल स्कूल में साहित्य का शिक्षक नियुक्त करा दिया । इस तरह निश्चिन्त होकर साहित्य का अध्ययन करने लगा ।

आपने प्राचीन और आधुनिक पिगल की अनेक पुस्तको से मुझे छन्दशास्त्र पढाया । उस की बारीकियाँ समझाई । प्रत्यय-प्रकरण, जिसे लोग टाल दिया करते थे—भलीभाँति हृदयगम करा दिया । उस समय पिगलसम्बन्धी अनेक बाते मैं ने नोट कर ली । पढ चुकने के बाद इच्छा हुई कि मैं भी पिगल पर एक पोथी लिखूँ जिस में नोट की हुई बाते आ जावे । और प्रत्यय-प्रकरण खूब खोल कर लिखूँ । इधर साहित्य पढाने मे नये नये छन्द मिलने लगे जिन के लक्षण मिलने मे कठिनाई होने लगी । साथ ही **रहस्यवाद के प्रगाढ़ पडित अ० श्री पं० लक्ष्मणनारायण जी 'गर्दे'** के सत्सग से छायावाद की चरचा भी सामने आई । बस नामी छायावादी—रहस्यवादी—कवियो की रचनाएँ पढ़ने लगा ।

रचनाओ मे रुचि हुई । उन के छन्दो के रहस्य का पता लगाया । इधर उर्दू, बँगला, मराठी आदि के छन्दो को भी हिन्दी मे देखा तो दृढतम धारणा हो गई कि अब पिंगल पर जरूर एक पोथी लिखनी चाहिए। बस चुपचाप इस काम मे लग गया । कुछ दिनो मे प्रत्यय-प्रकरण तैयार हो गया ।

सयोग से उन्ही दिनो एक बार मेरे वयोवृद्ध भाई अध्यापक **रामरत्न** जी काशी पधारे । 'पिंगल पर पोथी' लिखने की मै ने उन से चरचा की अपने नोट दिखलाये, प्रत्यय-प्रकरण उन्होने बहुत पसद किया और कहा कि 'यह गद्य का युग है पद्यो का नही।' इसलिए छन्दो की परिभाषाएँ तो सीधीसादी परिमार्जित गद्य मे लिखो और उदाहरण अर्वाचीन और प्राचीन सुकवियो की ललित-रचनाओ से दो । पर साथ ही ध्यान रखो कि उदाहरण घोरश्रृगारी न हो । वे ऐसे हो कि जिन्हे माता, पिता और गुरुजन अपनी बहू-बेटियो तक को निस्सकोच पढा सके । आप की अमूल्य सम्मति से मेरा उत्साह और बढ गया और तनमन से इस काम मे लग गया । बस प्रस्तुत पोथी की यह आरंभिक आत्म-कहानी है ।

प्रस्तुत पोथी की रूप-रेखा तैयार होने पर उसे श्री **गौड़** जी को दिखाया । उन्हो ने इस शैली को पसद किया और आज्ञा दी कि इस पोथी मे आजतक के प्राय सभी छन्द आ जाने चाहिएँ । उन की आज्ञा शिरोधार्य कर मैंने परिवर्धित छन्द-वश-वृक्ष बनाया, जिसे उन्होने स्वीकारलिया । बस उसी के आधार पर मैंने छन्दो का वर्गीकरण किया । जब पोथी तैयार हो गई तब मैने श्री **गौड़** जी के सामने रख दी । उन्हों ने उसे ध्यान से सुना और पढा भी, अनेक

स्थलो पर उपयुक्त सशोधन किये और टिप्पणियाँ भी दी। उस के बाद प्रस्तुत पोथी महाकवि हरिऔध जी के सामने ले गया। उन्होंने भी सारी पोथी सुनी और अनेक स्थलों पर अपनी अमूल्य सम्मति और छन्द भी दिये। पीछे से साहित्य के मर्मज्ञविद्वान और प्रसिद्ध समालोचक प० रामचन्द्र जी शुक्ल के सामने पोथी रखी। पुस्तक देख कर आपने अपनी अमूल्य सम्मति और नये छन्द भी दिये। इन तीनो आचार्यों ने एक स्वर से इस शैली को पसद किया। फिर क्या था मेरा उत्साह और बढ गया। जब पोथी एक तरह से तैयार हो गई तब शिक्षा-शैली के मर्मज्ञ अध्यापक रामरत्न जी को पोथी सौंप दी। उन्होंने आद्योपान्त पोथी पढी। पोथी की भाषा का जहाँ तहाँ सशोधन किया, और उसे और भी परिवद्धित करने का आदेश दिया। उन की आज्ञा शिरोधार्य कर क मैने पुस्तक को यह रूप दिया।

छन्दशास्त्र जैसे नीरस और कठिन विषय को सरस और सरल बनाने का मै ने यथाशक्ति प्रयत्न किया है। उपर्युक्त वर्णित सभी बातो का इस मे समावेश किया है। उदाहरण जहाँ तक हो सके है सरस और भावपूर्ण ही रखे हैं। घोरशृगार नही आने दिया है। वीर, वात्सल्य करुणा और शान्त रस के अधिक उदाहरण है। प्रकृति-वर्णन पर भी अनेक पद है।

बँगला, मराठी, अँग्रेजी आदि के प्रभाव से हिन्दी मे जो नये छन्द व्यवहृत होने लगे हैं उन सब के सोदाहरण लक्षण दिये है। उर्दू और मुक्तकाव्य पर अलग से भी चरचा की गई है। प्रसिद्ध छायावादी कवि प्राय जिन छन्दो का अत्यधिक प्रयोग करते है प्राय वे सब छन्द इसमे आ गये हैं।

प्रस्तारों की उपयोगिता और उनके जानने की परिपाटी सरल और सुबोध गद्य मे विस्तार के साथ समझाने का प्रयत्न किया है। किन किन मुख्य छन्दो मे किस किस रस की रचना अधिक भावपूर्ण बन सकती है इस पर भी सक्षेप मे विचार कर लिया गया है।

छन्दो को नया रूप देने मे हमे स्वर्गीय महाकवि नाथूराम शंकरजी शर्मा की रचनाओ से विशेष प्रकाश मिला है। श्रद्धेय प० हरिशंकरजी शर्मा ने मुझ पर बड़ा अनुग्रह दिखलाया। स्वर्गीय महाकवि के 'अनुराग-रत्न' की फाइल कापी उन्होने मुझे देखने को दी। पुनर्मुद्रण न होने से यह ग्रंथरत्न बाजार मे मिल नहीं रहा है।

जिन दिनो पिंगल-प्रकाश आगरे मे छप रही थी। उन दिनो एक दिन प्रोफेसर श्री बा० हरिहरनाथजी टंडन के दर्शन हुए। आपने पहले उल्लास को देखकर मुझे विशेष उत्साहित किया और अमूल्य परामर्श दिये। उपर्युक्त सहायता और सम्मतियो के फल स्वरूप यह पोथी लेकर मै हिन्दी-जगत् के सामने आ सका हूँ, एतदर्थ मै आपका भी परम कृतज्ञ हूँ।

आचार्य-त्रय गौडजी, हरिऔधजी, शुक्लजी तथा श्रद्धेय अध्यापकजी का मै उसी भाव से कृतज्ञ हूँ जिस भाव मे अपने गुरुजनो क प्रति छोटो को होना चाहिए। यदि आप लोग मुझे सहारा न देते तो मै हिन्दी-ससार के सामने शायद इस रूप मे न आ पाता।

जिन आचार्यों के रीति-ग्रन्थो से इस पोथी के निर्माण मे सहायता मिली है तथा जिन आचार्यो, महाकवि और सुकवियो की सुललित रचनाओ से इस पोथी में उदाहरण दिये गये है उन सब का मैं हृदय से

कृतज्ञ और आभारी हूँ। हाँ, समयाभाव और पता आदि की गडबडी के कारण जिन कविवरो की रचनाएँ मैने उन से विना अनुमति प्राप्त किये ही इस पोथी मे रख ली है उन से करबद्ध क्षमा चाहता हूँ वे मेरी इस ढिठाई को अवश्य क्षमा करेगे ऐसा मुझे दृढ विश्वास है, क्योकि यह उनकी वस्तु उन्ही को भेट है।

हाँ, एक बात और निवेदन कर देनी है, और वह यह कि अनेक झझटो के कारण मैं प्रस्तुत पोथी के अधिक अश का प्रूफ नही देख सका हूँ इस से कहीं कहीं प्रेस सबधी और अन्य भूले रह गई है। मै ने 'शुद्धाशुद्ध पत्र' दे दिया है। पाठक उस से अशुद्धियो को सुधार ले।

मै नही कह सकता कि मैं अपने इस प्रयत्न मे कहाँ तक सफल हुआ हूँ। इस का निर्णय सहृदय पाठको और साहित्य-मर्मज्ञों पर ही छोडता हूँ। हाँ, यदि इससे नवसिख पाठको को कुछ भी लाभ हो सका और साहित्यमर्मज्ञो को सन्तोष हो सका तो मै अपने परिश्रम को सफल समझूँगा। यदि हिन्दी-ससार से मुझे उत्साह मिला और दूसरे सस्करण के प्रकाशन का अवसर मिल सका तो छन्दशास्त्र सबधी वे अनेक बाते भी हिन्दी-ससार के सामने लाने का प्रयत्न करूँगा जो कारणवश इस सस्करण में नही लाई जा सकी। आधुनिक अनेक सुकवियो की ललित रचनाएँ कारणवशात् मुझे प्राप्त नही हो सकी, इसका मुझे दु ख है। यदि दूसरे सस्करण के प्रकाशन का अवसर आया तो आशा है कि भगवान शकरजी मेरी इस आशा को भी अवश्य पूरी करेगे।

श्री काशीधाम	विनीत—
वै० शु० अक्षय ३, १९९०	रघुबर दयालु मिश्र

श्री सीतारामाभ्यांनम.

प्रस्तावना

जैसे अक्षर-विज्ञानके अन्तर्गत वेदका एक अंग शिक्षा और सौवर है, वैसे ही शब्द-विज्ञानके अन्तर्गत वेदके तीन अंग व्याकरण, निरुक्त और छन्द हैं। शब्दोमे विकार-विषयपर व्याकरण, व्युत्पत्तिविषयपर निरुक्त और उनकी योजना-विषयपर छन्द शास्त्र है। इस तरह छन्द.शास्त्र शब्दविज्ञानकी एक शाखा है और वेदके छः अंगोमे से एक महत्त्वका अंग है। किसी वेद-मत्रका पूर्ण परिचय पानेके लिये जैसे उसके ऋषि, देवता और विनियोगके जाननेकी आवश्यकता है, वैसे ही ऋषि वा द्रष्टाके नामके बाद ही छन्दकी जातिका नाम भी लेना आवश्यक होता है। इससे स्पष्ट है कि शब्दविज्ञान और तदन्तर्गत छन्दःशास्त्रका परिशीलन उतना ही प्राचीन है जितना कि वेदोका अध्ययन, और इस शास्त्रका महत्त्व भी उतना ही है जितना कि शिक्षा और व्याकरणका, जिनका कि भाषामात्रसे अटूट और अनिवार्य्य संबन्ध समझा जाता है।

यद्यपि हिन्दी हमारी मातृभाषा है और मातृभाषाके नाते हम शिक्षा और व्याकरणकी ओर बिलकुल ध्यान न भी दें तो भी व्यवहारसे अपनी भाषाके समझने और बोलनेमे, और अभ्यास हो जानेपर लिखनेमे भी, कठिनाई नही पड़ सकती,

तथापि यदि हमको अच्छी तरह हर बातको समझ लेना और सब तरहके विचारोंको सुभीतेसे अच्छेसे अच्छे रूपमे बोल या लिखकर प्रकट करना इष्टहो तो हमे अपनी मातृभाषाकी भी शिक्षा और व्याकरण जाननेकी आवश्यकता पडेगी। अभ्याससे इसी तरह हम पद्यरचनाको भी पढ़ और समझ सकते है, जैसा कि रामचरित-मानस जैसे उत्तम कोटिके महाकाव्यको भी लोग प्राय' समझ ही लेते है, मानसके अक्षरविज्ञान और शब्दविज्ञानको विधिवत् जान लेनेकी आवश्यकता नही पडती। फिर भी सभी तरहके अच्छे और शुद्ध पद्योको भली-भाँति पढ़ और समझ सकनेके लिये कुछ थोडेसे छन्द शास्त्रका ज्ञान तो परमावश्यक है। सुतरां, जो स्वय पद्यरचना करना चाहे उसके लिये तो इस विज्ञानका विधिवत् जानना अनिवार्य्य है। इसीलिये काव्यसाहित्यके रीतिग्रन्थोमे शब्दशक्ति, भाव-भेद, रसभेद, अलकार आदि के साथही साथ छन्द-शास्त्रकी शिक्षा भी अनिवार्य्य समझी जाती है।

यह तो सच है कि कविताका प्रथम आविर्भाव आदिकवि-के चोट खाये हुए हृदयसे हुआ है और आज भी हृदयहीन कभी कवि नही बन सकता। किन्तु हृदयसे निकलकर वाग्यंत्रमे प्रवेश करके कविता जिस साँचेमे ढल जाती है, उसका उत्तरोत्तर विकास होता आया है और उसके रूपरग को सॅवारने मे आज लोकानुभव और रीतिज्ञान दोनो बडे सहायक हुए हैं। छन्दःशास्त्र भी इसी बनावसँवार का साधन है।

परन्तु यह साँचा भी प्रदेशोकी विविधतासे विविध हो गया है। हृदय की भाषा तो एक ही है, परन्तु साँचोंके भेदसे उसके प्रकट होनेके रूप विविध है।

देशकाल-भेदसे उच्चारणमे भेद पड जाता है और इस उच्चारण-भेदसे भी शब्दोंकी गति और अर्थमे अन्तर पड़ जाता है। जब इस अन्तरके कारण वेदोंमे ही शाखाएं और प्रतिशाखाएं बन गयी है तो लौकिक भाषाओंके लिये कहना ही क्या है। इसीलिये धीरेधीरे भारतकी प्रादेशिक भाषाओमे भी उच्चारणके प्रभेद पड गये हैं। जहाँ मराठीमे सस्कृतके उपयुक्त वर्णिक और मात्रिक छन्दोंकी अधिक चाल है, वहाँ बँगलामे इनका समावेश ही असंभव है। बँगलामे मात्राओंकी गणना चल नही सकती, क्योंकि वहाँ शब्दोंकी गति संस्कृतसे इतनी भिन्न हो गयी है कि जहाँ हिन्दीमे लघुको गुरु और गुरुको लघु उच्चारण करना अपवादस्वरूप है वहाँ बँगलामे यही नियम बन गया है। इसीलिये बँगलामे गणो या मात्राओंकी गणनाकी प्रथा उड़ गयी और वर्णों की गणनामात्र रह गयी है। ब्रजमंडल मे आज भी शब्दके अन्तिम अक्षरका स्वर पूरा पूरा कहा जाता है, ह्रस्वका लोप नही कर देते और उसके बदले हलन्त नही बोलते। उसीके उत्तर मेरठप्रदेशमे अन्तिम ह्रस्वका लोप तो नही करते परन्तु अन्तिम दीर्घोंको ह्रस्व कर दिया करते हैं। और अधिक उत्तर तथा पूरबके देशो मे अन्तिम ह्रस्वका लोप करके उसके

स्थानमे हलन्त बोलते है। पहाड़ी कवियोने तो इस प्रकारके लोकव्यवहारमे बरते जानेवाले शुद्ध उच्चारणके ही आधारपर हलन्तोका प्रयोग करके संस्कृतके गणछन्दोमे काव्य लिख-डाले है। उर्दू के शेरोमे ऐसी ही कठिनाइयाँ पडती परन्तु फारसी अरबीके छन्दोके व्यवहारके साथही साथ उन्होने उसके वजनोसे काम लिया जिनमे मात्राओ और वर्णोंका पूरा समावेश हो जाता है। वज़न ठीक वही चीज है, जो हमारे यहाँ गण है। "यगण" और "फऊलिन्" 'रगण" और "फायलुन" एक ही है। हमारे छन्द शास्त्रमे अधिक वैज्ञानिक रीतिसे मात्राओके पाँच और वर्णोंके आठ गण स्थिर करके कुल तेरह गणो या "वजनो"से काम लिया है। उर्दू वालोने वज़नोमे वर्ण और मात्राका कोई भेद नही किया क्योकि जिस वर्ण-मालाके हुरूफ तहज्जीके, आधारपर उनकी सारी कायनात है वह विदेशी और अवैज्ञानिक है, क्रमहीन और नियमहीन है उसमे वर्णिक और मात्रिक भेद अत्यन्त कठिन है। अंग्रेजी और बँगला दोनोमे उच्चारणकी एक विशिष्ट गति है जिसे जोर देना कहते है, परन्तु जिसे "उदात्त" कहना ही अधिक वैज्ञानिक है। साधारण बोलचालमे भी उदात्त, अनुदात्त और स्वरित तीनो उच्चारणोसे हम काम लेते रहते है परन्तु भाषाके व्याकरणो मे किसीने इस विषयपर न तो ध्यान दिया है और न अंग्रेजी कोषोकी तरह "सिलेबिल" और 'एक्सेंट" दिखाने की हमे जरूरत पड़ी, क्योकि हमारी वैज्ञानिक वर्णमाला

और लिपि हमारी वर्त्तनीको सुसंगत और सुबोध बनाती है, "सिलेबिल"के व्यर्थ विभागका काम ही क्या है ? और जब सभी स्वरित है तो उदात्त अनुदात्तके चिह्नभेदसे प्रयोजन ही क्या है ? अंग्रेजीमे जैसे "फिलास्सफर" को "फिलऽसोफ् फर" कहना अशुद्ध समझा जायगा उसी तरह बँगलामे "कलिकत्ता" कहकर हिन्दीकी तरह "कत्ता"पर जोर देना अशुद्ध माना जायगा। शुद्ध उच्चारण बंगलामे "कोलिकाता" होगा जिसमे "कोली"पर ही अधिक जोर दिया जायगा। इस बातको कोषमे चिह्न देकर व्यक्त करनेकी आवश्यकता नही है। अन्य प्रदेशवाला भी सुनकर अभ्यास करके शुद्ध उच्चारण सीख लेगा।

पद्यरचनामे इस तरह छन्दोके निर्म्माणके नियम सभी भाषाओके एकसे नही हो सकते। उच्चारणकी परिपाटीके अनुसार पद्यके रूप भी प्रत्येक भाषाके लिये विशिष्ट होगे। परन्तु वैज्ञानिक नियम तो ऐसे होने चाहिये जो संसारकी भाषामात्रपर प्रयुक्त हो सके। तभी तो हम छन्द शास्त्रको विज्ञान कह सकेंगे।

इस तरहके वैज्ञानिक नियमका आविष्कार जिस ऋषिने किया उनका नाम पिगल था। यह नाग जातिके थे। इनके और नाम भी इसी बातकी सूचना देते हैं। कहते है कि गरुडजीने इन्हे खानेके लिये पकड़ा था। उनसे शास्त्रार्थ हुआ। पिगलने प्रस्तारकी रीतियाँ गरुड़जीको बतलायी। प्रस्तारके रूप अनन्त है। इन रूपोके नियम बतलाये। फिर इसी शिक्षाके प्रसादसे

गरुडजीसे अभय पाकर पाताल चले गये। अंतिम छन्द जो इन्होने कहा उसका नाम "भुजंग-प्रयात" था। छंद शास्त्रको इन्हीके नाम से "पैंगल" कहने लगे।

लोग प्रत्ययोको बेकार समझते है, परन्तु प्रत्ययोका समझना पद्यरचना वा पद्यके शाब्दिक ढाँचेको खडे करनेके वास्तविक तत्त्वको समझना है। जिसने एकबार इसके गणितको और तत्त्व को समझ लिया उसके लिये मनुष्य की वाणी-मात्रमे, फिर चाहे वह संसारके किसी कोनेकी क्यो न हो, पद्यार्थ अक्षरयोजनाका क्रम सरल हो गया। वह अग्रेजीकी या युरोपीय किसी भाषाकी "प्रासोडी" और अरबी फारसी, आदिका "उरूज़" बिना पढ़े इन भाषाओके पद्यके लिये नियम निश्चय कर सकता है, पैंगलप्रत्ययोके काँटेपर उन्हे तोलकर उनका ठीक मूल्य लगा सकता है। बिलकुल नये ढंगके पद्य गढ़ सकता है। उनके नामकरण कर सकता है।

यह सच है कि नये ढंगके पद्य वह भी गढ़ सकता है जिसको स्वरतालकी परख है, जो गा सकता है और जिसकी जिह्वा और कान छन्दरसका आस्वादन करना जानते है। जिस कविको पद्यरचनामे मात्रा या वर्णोके गिननेकी आवश्यकता न पड़े, छंदकी गति और यतिके स्थानमे जिससे कभी चूक न हो, वह नये ढगके पद्य भी गढ़ ले सकेगा। परन्तु उसे पैंगलज्ञानके अभावमे यह न पता होगा जो पद्य गढ़ा गया है वह एकदम अनूठा है अथवा पूर्वके आचार्य्योंने वैसा पद्य कभी लिखा है

और उस जातिका वा वृत्तका नामकरण कर रखा है। अत रीतिका पूरा अनुशीलन किये विना वह भी नये ढंगके छंदके निर्म्माणका अधिकारी नहीं है। उसे किसी जाननेवालेसे पूछना, अर्थात् सीखना, पड़ेगा।

निदान अच्छे साहित्यिक होनेके लिये पैंगलशास्त्रका अध्ययन आवश्यक है और अच्छे कविके लिये तो अनिवार्य्य ही है। परंतु यह खेदके साथ कहना पडता है कि छंदःशास्त्रका अध्ययन बहुत कम लोग करते है। अनेक अच्छी पद्यरचना करलेनेवाले भी इस विषयमे कोरे देखेगये है। कविसम्मेलनोमे जो अपनी रचना सुनानेको लाते है, उनमेसे बहुत कम ऐसे होते है जिन्होने विधिपूर्वक छंद शास्त्र पढा है या जो किसी अच्छे आचार्य्यसे संशोधन कराके लाते हों। फल यह होता है कि हर अहम्मन्य कवि अपनी सडीगली जैसी ही हो सभी रचना सुनानेको उत्सुक होता है और ऊबे हुए सुननेवालोको असंगठित कविसम्मेलन मे आनेका दंड भोगना पड़ता है। आधुनिक रीतिग्रंथोतकमें गतिविहीन मनहरण देखनेमे आये हैं, और सम्मेलनोमें तो इकतीस अक्षरोकी गिनतीका भी ध्यान रखना अनावश्यक समझा जाता है, गति और यतिकी तो बात ही न्यारी है।

यह शिकायत भी एक हद तक ठीक है कि "पिगल बहुत कठिन है।" और वह कठिनाई पद्यमे परिभाषा होने से बढ़ जाती है। पैंगलशास्त्रकी प्रकृत कठिनाई प्रत्ययोंमे है। परि-

भाषाकी कठिनाई तो गद्य से दूर हो जाती है । मेरे मित्र पं० रघुबरदयालुजी ने इन दोनो कठिनाइयो का बड़ा अच्छा परिहार किया है । परिभाषाएं तो स्पष्ट गद्यमे दी ही गयी हैं। और प्रत्ययका प्रसंग एक तो औरोकी तरह आरंभमे नही छेड़ा है, अन्तमे दिया है, दूसरे उसे स्पष्ट और सरल गद्यमे विस्तारसे समझाया है। अबतक ऐसा सरल विवरण किसी पिंगलग्रन्थ-में नही दिया गया है । साथ ही प्रस्तुत ग्रन्थमे आजतकके व्यवहृत सभी तरहके पद्योका समावेश हुआ है और उसके उदाहरण भी आधुनिक कवियोसे ही दिये है । अबतक इन विशेषताओके साथ कोई पैंगलग्रंथ मेरे देखनेमें नही आया है। पिंगल-प्रकाशसे एक बड़े अभावकी पूर्त्ति होती है । आशा है इससे छन्द शास्त्रके पढ़नेवाले पूरा लाभ उठावेंगे और लेखकके कठिन परिश्रमको सार्थक करेंगे ।

अड़ीपियरी, बनारस शहर ।
विजया १०, १६६० } रामदास गौड़

बनारस

२२-६-३३

मै ने पं० रघुबरदयाल मिश्र की बनाई पिगल-प्रकाश, नामक पुस्तक देखी । यह पुस्तक नये ढंग से लिखी गई है, और लगभग उन सब छन्दों का वर्णन भी इस मे कर दिया गया है, जो अन्य भाषाओं से आजकल हिन्दीसंसार में गृहीत है । यह एक बहुत बड़ी विशेषता इस ग्रन्थ की है। यह पुस्तक सामयिक है, और सामयिकता पर दृष्टि रखकर ही इस की रचना की गई है, अतएव इस की उपयोगिता बढ़ गई है । ग्रन्थकार ने इस के निर्माण में बड़ा परिश्रम किया है, यह बात पुस्तक देखने से स्पष्ट हो जाती है । मेरा विचार है कि यह ग्रन्थ इस योग्य है, कि पिंगल पठन का प्रत्येक अनुरागी इस का आदर करे और थोडे समय में इस से बहुत कुछ सीख ले । मै ऐसी पुस्तक लिखने के लिये पं० जी को धन्यवाद देता हूँ, और आशा करता हूँ, कि हिन्दीसंसार इस का उचित आदर करने मे कदापि संकोच न करेगा । इस पुस्तक की रचना में ग्रन्थकार ने मुझ से भी समय समय पर उचित सम्मति ली है ।

—अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'

———

बनारस
२४-६-३३

पं० रघुवरदयालु मिश्र ने छन्द.शास्त्र पर 'पिंगल-प्रकाश' नाम का यह सर्वांगपूर्ण और समयोपयुक्त ग्रंथ लिख कर सचमुच बड़ा भारी काम किया है। पुराने पद्यबद्ध ग्रंथो से काम चलता न देख कर बा० जगन्नाथप्रसाद 'भानु' ने छन्द प्रभाकर की रचना की जो अब तक छात्रों का काम देता आ रहा था। पर गद्य मे होने पर भी उसका ढग पुराना है। दूसरी बात यह है कि हिन्दी-काव्य की वर्त्तमान गति का उसमें कुछ भी विचार नही किया है।

पं० रघुवरदयालु जी ने अपने ग्रंथ की रचना नए ढग पर की है। इसमें छन्दो के भेद, लक्षण आदि बहुत ही सुबोध और सरल प्रणाली से लिखे गए है और प्रस्तार का विषय भी बहुत ही स्पष्ट कर के समझाया गया है। छन्दों के कुछ विभाग नई पद्धति पर किए गए है। मात्रा-मुक्तकों पर एक स्वतंत्र अध्याय ही है। छन्दो के नए नए योग, जो आधुनिक कवियो की रचनाओ में पाए जाते हैं, उदाहरण सहित दिखाए गए है। आजकल के 'स्वच्छन्द छन्दों' को भी मिश्र जी ने छन्दोविधान के शासन के भीतर कर के दिखा दिया है। उदाहरण उन्होने आजकल के प्राय सब प्रसिद्ध कवियों की रचनाओं से दिए हैं जिससे आधुनिक काव्यक्षेत्र का विस्तृत परिचय प्रकट होता है। स्कूलों के अतिरिक्त विश्वविद्यालयों के छात्रों के लिए भी यह ग्रन्थ बड़ा उपयोगी होगा। वास्तव में हमारे छन्दो की अच्छी जानकारी इस ग्रन्थ से हो सकती है।

—रामचन्द्र शुक्ल

छन्द-सूची

पिंगल-प्रकाश

मंगलाचरण

जो अभिषेक की बात सुनी,
तौ प्रसन्नता नेकु परी न दिखाई ।
औ बनबास की आयसु पै,
नहि रेख कछू दुख की तहँ आई ॥
जो दुख मे न मलीन भई,
सुख मे नहि जो कछु हू हरषाई ।
सो मुख-श्री रघुनन्दन की,
सुभ होहु हमे नित मंगलदाई ॥

—श्रीधर

पिंगल-प्रकाश

पहला उल्लास

काव्य

काव्य क्या है ? इस सबंध मे विद्वानो के भिन्न भिन्न मत हैं। परन्तु भाव सबके एक ही है। सबके मतो का निष्कर्ष यही है कि "लोकोत्तर आनन्द देनेवाले रसात्मक वाक्य को काव्य कहते है।"

काव्य-भेद

काव्य-रचना की दो शैलियाँ है। एक का नाम है 'गद्य-शैली' और दूसरी का नाम है 'पद्य-शैली'। संस्कृत मे 'कादम्बरी', हिन्दी मे इसका अनुवाद और अनेक मौलिक गद्य-काव्य की रचनाएं हैं। आजकल 'गद्य-गीति' नाम से भी रचनाएं की जाने लगी हैं, ये गद्य-काव्य हैं। पद्य-काव्य के

विषय मे कहना ही क्या है ? सारा प्राचीन साहित्य पद्य-शैली से ओतप्रोत है। रामायण, महाभारत आदि इनमे मुख्य है।

गद्य और पद्य

अब जानना यह है कि गद्य और पद्य कहते किसे है ? साधारणतया "जिस रचना-शैली के वाक्य-समूहो मे बोल-चाल का ही ढग बरता गया हो, अर्थात् जिस रचना के वाक्य-समूहो मे व्याकरण के नियमो का पूर्णरूपेण पालन किया गया हो, यथा-स्थान विरामादि का भी प्रयोग किया गया हो, किन्तु उसमे मात्राओ या वर्णों का न कोई नियमित क्रम हो और न नियमित संख्या और न यति-गति का ही बंधन हो, वही गद्य है।" परन्तु "जिस रचना-शैली के वाक्य-समूहो मे यथाशक्ति व्याकरण के नियमो की रक्षा करते हुए मात्रा या वर्ण या दोनो का निश्चित क्रम या माप या संख्या हो और जिसमे यति, गति नियमित हो तथा चरणो की संख्या भी निश्चित हो वह पद्य है।"

छन्द और पिंगल

'छन्द' शब्द 'छदि' धातु से बना है, जिसका शब्दार्थ है—'आच्छादन करना' अर्थात् 'ढक लेना'। कहा जाता है कि आदि मे मृत्यु-भय से कुछ देवताओ ने गायत्री आदि मंत्रों मे अपने को ढक रखा था। इसी से ये मंत्र छन्द कहलाये जाने लगे। इसीलिये इस शास्त्र को ही छन्द-शास्त्र कहने लगे। वेद के षडङ्गो (शिक्षा, निरुक्ति व्याकरण, ज्योतिष आदि) मे छन्दशास्त्र एक अंग माना गया है। कहा भी है कि—

'छन्द वेद को अंग है, कहै मुनिन के वृन्द ।
या ते पढ़ियतु प्रात ही, वरणे नाग फनिन्द ।।

'पिगलच्छन्द:सूत्रम्' के वृत्तिकार श्री हलायुध ने लिखा है—
'श्रीमन् पिगल नागोक्त छन्द शास्त्र महोदधी ।'

+ × + +

'पिगलाचार्य्यसूत्रस्य मया वृत्तिर्विधास्यते'

इससे स्पष्ट है कि छन्दशास्त्र के निर्माता 'पिगल' नाम के मुनि है, यही छन्दशास्त्र के आचार्य माने जाते है, इन्ही के नाम पर छन्दशास्त्र को 'पिगल' भी कहने लगे । यह भी कहा जाता है कि आप शेषावतार है, और यो भी 'पिगल' का शब्दार्थ सर्प, नाग है, इसी से छन्द-ग्रन्थो मे जहाँ तहाँ इन्हे, शेष, फणीश, अहिराज, पन्नगराज नामो से संबोधित किया है ।

छन्द और उसकी विशेषताएं

'पद्य' शब्द 'छन्द' का प्राय. पर्य्यायवाची शब्द ही माना जाता है । छन्द का पारिभाषिक रूप पद्य की व्याख्या मे बताया जा चुका है । अर्थात् "जिस वाक्य समूह मे व्याकरण के नियमो की यथाशक्ति रक्षा करते हुए मात्रा या वर्ण या दोनो का निश्चित क्रम, माप या संख्या हो और यति, गति और चरणो की निश्चित्त व्यवस्था हो वह छन्द है ।"

छन्द की अनेक विशेषताएं हैं । और मुख्य विशेषता यही है कि छन्दशास्त्र वेद का एक अंग है । कहा भी है—

"जैसे वेद विहीन द्विज, हीन लोक सो होय।
त्यो ही छन्दोज्ञान बिन, कहै सबै कवि लोय॥"

सचमुच छन्दो की ऐसी ही महिमा है। छन्द संगीत का मुख्य अंग है। और संगीत एक ऐसा विषय है जो प्राणीमात्र को प्रिय है। पद्य मे कोमल-कान्त-कर्ण-प्रिय-पदावली रहती है, जो लोकोत्तर आनन्द-दायिनी होती है, फिर वह प्रिय क्यो न हो! इसके अतिरिक्त पद्यान्तर्गत 'अर्थ अमित अति आखर थोरे' वाले नियम का पूर्ण-रूपेण निर्वाह किया जाता है। इससे बड़े बडे विचारो की माला थोड़े से शब्दो मे कंठस्थ की जा सकती है। नीरस से नीरस विषय छन्द की चाशनी से मीठा बन जाता है और शीघ्र ही हृदयगम हो जाता है। पद्यमय वाक्यावली का मानव समाज पर शीघ्र प्रभाव पड़ता है। यही सब कारण हैं कि हमारे ऋषियो के सभी प्राचीन शास्त्र छन्दोवद्ध है। गद्य मे सरसता, रमणीयता और ये विशेषताएं लाना टेढ़ी खीर है, बिरलो का ही काम है।

छन्दोभंग

छन्द की निश्चित मात्रा या वर्णो की न्यूनाधिकता से छन्द के पढ़ने-सुनने मे एक खटक सी पैदा हो जाती है जिसे छन्दो-भग दोष कहते हैं। इस दोष से बहुत बचना चाहिये।

वर्ण और मात्रा

अकारादि जिनके खण्ड न हो सके, वर्ण या अक्षर कहलाते

है। (अ = नहीं + क्षर = नाश) अर्थात् जिसका स्वरूप सदा एक रहे। वह अक्षर दो तरह के है—स्वर और व्यजन।

जिन वर्णों का उच्चारण बिना किसी दूसरे वर्ण की सहायता के होता है वे स्वर कहलाते है, जैसे—अ, इ, उ[1] आदि। और जिन वर्णों का उच्चारण स्वरो की सहायता से होता है वे व्यंजन कहलाते है। जैसे—क, ख, ग, आदि।

प्रत्येक वर्ण के उच्चारण मे जितना काल लगता है उसे मात्रा कहते है।

मात्रा-भेद से अक्षर या वर्णों के दो और भेद हो जाते है—(१) ह्रस्व और (२) दीर्घ।

जिन वर्णों के उच्चारण मे एक मात्रा-काल लगता है वे सब ह्रस्व कहलाते है। यथा—अ, इ, उ, क, ल, स आदि, और जिन वर्णों के उच्चारण मे दो मात्रा-काल लगता है वे सब दीर्घवर्ण कहलाते है। यथा—आ, ई, ए, अं आदि।[2]

१—अ, इ, उ, ऋ, ये चार मूलाक्षर है। आ, ई, ऊ आदि इन्ही स्वरो के मेल से बने है, यथा—अ + अ = आ, इ + इ = ई, उ + उ = ऊ, इत्यादि।

२—जिन वर्णों पर अ, इ, ए, औ, आदि की मात्राएं लगती हैं वे वर्ण भी उसी मात्रा के उच्चारण के अनुसार ह्रस्व और दीर्घवर्ण कहलाते हैं, यथा—ह्रस्व क, कि और दीर्घ कू, को आदि।

लघु और गुरु *

छन्दशास्त्र में ह्रस्व को लघु और दीर्घ को ही गुरु कहते है। अथवा यों कहिये कि पिंगल में एक मात्रावाले वर्ण लघु और दो मात्रावाले वर्ण गुरु माने जाते है। लघु का चिन्ह [।] पूर्ण विराम के आकार का है और गुरु का चिन्ह (ऽ) अंग्रेजी वर्ण 'एस्' के आकार का है। लघु चिन्ह से एक मात्रा का और गुरु चिन्ह से दो मात्राओ का बोध होता है।

यथा

ऽ । । । । । ऽ । । । । । ऽ ऽ । । । । । । । । । । । । ऽ
'जे गुरु चरन रेनु सिर धरहीं। ते जनु सकल विभव बस करहीं।'

ऊपर की अर्द्धाली के शब्दो पर गुरु-लघु के चिन्ह लगाने से तुरत गिनती हो जाती है कि इस छन्द के प्रत्येक चरण मे सोलह मात्राएं है।

छन्दशास्त्र मे गुरु-लघु का विशेष ध्यान रखना पड़ता है। इससे यह जानना भी बहुत जरूरी है कि कहाँ-कहाँ लघु आता है और कहाँ-कहाँ गुरु।

---

* कठस्थ करने योग्य पद्य—

अ इ उ ऋ ये स्वर चारि अरु, सब व्यजन लघु मान।
आ ई ऊ ए ऐ ओ औ अं अः गुरु जान॥
लघु स्वर के सयुक्त जो, व्यजन सो लघु होय।
गुरु स्वर के संयुक्त जो, व्यजन गुरु है सोय॥

लघु—१. ह्रस्व स्वर लघु होते है और इन स्वरो के मेल से व्यजन भी लघु हो जाते है। जैसे—अ, इ, उ, ऋ, क, कि, कु, कृ आदि।

२. सम्पूर्ण व्यंजन लघु है।

३ सयुक्ताक्षर के पहले का वर्ण जिस पर जोर नही पडता वह लघु ही माना जाता है। यथा 'कन्हैया' मे 'क' लघु है।

४ यदि गुरु वर्ण लघुवत् पढ़ा जाय तो उसकी गणना भी लघु वर्ण मे होती है। यथा—'जामवन्त के बचन सोहाए' मे 'सो' का उच्चारण लघुवत् 'सु' की तरह होने पर लघु माना गया।

गुरु—१ दीर्घ-स्वर गुरु होते है और उन स्वरो के मेल से व्यजन भी गुरु हो जाते है। यथा—आ, ई, ऊ, ए ऐ, ओ, औ, अं, अः, का, की, कू, के, कै, को, कौ, कं, कः

अनुस्वार युत वर्ण जो, वा विसर्ग युत जौन।
स्वर अथवा व्यजन रहे, गुरू होत है तौन॥
सयोगी के आदि लघु, अरु पदान्त लघु कोइ।
कहुँ दीर्घ हू गनात है, कवि इच्छा जब होइ॥
यथा 'सरस्वति' से विनय, करत 'कन्हैया' टेर।
यहाँ 'सरस्वति' मे 'र' गुरु, 'क' लघु 'कन्हैया केर॥
'जु' लघु 'जुन्हैया' शब्द मे, 'द' लघु 'मोद प्रद' माहि।
सयोगी के आदि हैं, तौ हू लघू गनाहि॥

२. संयुक्ताक्षर मे हलन्त के पहिले का लघु वर्ण गुरु हो जाता है (क्योकि उस पर उच्चारण का जोर पडता है,) यथा—'विष्णु' मे 'वि' लघु होने पर भी गुरु है।

३ हल् 'र्' (रेफ) के पहले का लघु वर्ण गुरु हो जाता है। यथा--'कर्म', 'धर्म' मे 'क', और 'ध' गुरु वर्ण माने जायँगे।

'बुधावतशा कविराज सत्तम् ।
या मैं धरे ह्रस्व पदान्त वर्णम् ॥
ताकी कला दीर्घ यहाँ परे गने ।
'वशस्थ' के लक्षण में यथा भने ॥

लघु मात्रा करि पढत ही, गुरु हू लघू गिनाहि ।
त्यों लघु को गुरु लिखत है, कहूँ छन्द के माहिं ॥

'जेहि' सुमिरत सिधि होय' यह, चरण सोरठा ख्यात ।
'जेहि' मे 'जे' गुरु प्रकट है, यहि थल लघू गनात ॥

गुरु सिर गुरु, लघु सीस लघु, अर्द्धचद्र युत बिन्दु ।
ताकी गिनती अलग नहि वर्णहि कविकुल इन्दु ॥

'काँस', 'बाँस' मुँह, पोहडा, काँच, कोहडो दाँत ।
चन्द्र बिन्दु युत वर्ण के, उदाहरण हैं ख्यात ॥

१, 'अ और अ इन्हें अनुस्वार और विसर्ग भी कहते हैं। 'अ' की मात्रा भी गुरु मानी जाती है। परन्तु अर्द्धचन्द्र मे गुरु लघु का कोई प्रभाव नही रह जाता। यथा मुँह, बाँस आदि। 'अ ' की मात्रा भी गुरु है। यथा—कोई दुःख न हमे दिखावे, में दु के आगे ( ) विसर्ग होने से 'दु' लघु होने पर भी गुरुवत् पढा गया।

४. कभी कभी लघु वर्ण को भी गुरु मान लिया जाता है। यथा—'लीला तुम्हारी अति ही विचित्र' इसके पदान्त के 'त्र' को गुरु मान लिया गया क्योंकि इसका उच्चा-रण 'त्रा' गुरुवत् हुआ है।

लघु के सांकेतिक नाम—१ कोहल, २. शब्द, ३ रूप, ४ रस, ५. गंध, ६ रेखा, ७. सर, ८ मेरु और ९ लघु।

गुरु के सांकेतिक नाम—१ नूपर २ रसना, ३. चामर, ४ कुण्डल, ५ कनक, ६. वक्र, ७ मानस, ८ वलय, ९. हारावलि, १०. हार, ११ ताटक, १२ केयूर, १३ दीघ, १४ दुकल।†

द्विगुरु के नाम—१ कमल, २ पान, ३ करदड, ४ वज्र, ५ गजपति।‡

यद्यपि आजकल रीतिकार इन सांकेतिक शब्दो से काम नही लेते पर प्राचीन कवियो ने इनसे काम लिया है। 'भिखारी दास जी' ने भी अपने छन्दोर्णव पिगल मे इनसे काम लिया है।

---

* कोहल, शब्द, रूप रस, गध।
रेखा, सर, लघु, मेरु प्रबन्ध॥

† नूपुर, रसना नाम कहि, चामर, कुण्डल देखि।
कनक, बक्र, मानस, वलय, हारावलि पुनिलेख॥
हार और ताटक कहि पुनि, केयूर बखान।
दीह, दुक्ल हरदेव, यह नाम गुरू के जान॥

‡ कमल, पान, करदड कहि, औरो बज्र बखान।
गजपति, कविहरदेव यह, नाम द्विगुरु के जान॥

—हरदेव

छन्द की मात्राएं गिनना

किसी छन्द के प्रत्येक चरण मे कितनी मात्राएं है, इसकी गणना इस प्रकार करनी चाहिये कि छन्द के प्रत्येक चरण के गुरु वर्णों पर गुरु का (ऽ) यह वक्राकार चिन्ह और लघुवर्णों पर लघु का खड़ी पाई जैसा पूर्ण विराम का (।) यह चिन्ह रखता जाय। सब बर्णों पर चिन्ह रखने के बाद गुरु चिन्हों की दो दो और लघु चिन्हो की एक एक मात्रा गिनता जाय और प्रत्येक चरण के आगे योगफल रखता जाय। बस प्रत्येक चरण की मात्राए ज्ञात हो जायँगी।

वर्णों पर गुरु लघु के चिन्ह रखते समय इस बात का भी ध्यान रखे रहे कि धारा-प्रवाह (गति) के साथ पढ़ने मे जिस वर्ण का उच्चारण लघुवत् हो उस पर लघु और जिसका उच्चारण गुरुवत् हो उस पर गुरु चिन्ह ही रखे। "जैसा लिखा जाय वैसा पढ़ा जाय" नागरी लिपिका यह नियम सर्वत्र लागू नही है। जैसे कि लिखा जाता है 'सोहाए' और पढ़ा जाता है 'सुहाए' इसलिये 'सो' पर लघु चिन्ह ही रखा जायगा।

यथा

ऽ।ऽ। ऽ।।। ।ऽऽ
(१) जामवंत के बचन सोहाए। '१६ मात्राए'

।। ।।ऽ। ।।। ।। ऽऽ
सुनि हनुमान हृदय अति भाए॥ १६ मात्राए'

ऽ ऽ। ऽऽ ।। ऽ ।ऽऽ
(२) लीला तुम्हारी अति ही विचित्र। ''१८ मात्राएं

यति

छन्द-शास्त्र मे विराम का भी नियम होता है। छन्द का प्रत्येक चरण एक वा अधिक स्थानो मे टूटता है । अथवा यो कहना चाहिये कि छन्द-शास्त्र के अनुसार शब्द-योजना इस प्रकार से होती है कि पढ़ते-पढ़ते नियमित स्थान पर थोड़ा-सा रुककर तब आगे बढ़ना पड़ता है। इसे ही विराम, विश्राम, या यति कहते हैं। संक्षेप मे यति का लक्षण यह भी हो सकता है कि 'छन्द मे जिह्वा के इष्ट-विश्राम स्थान को यति कहते है।'

यथा

'भे प्रगट कृपाला, दीन दयाला, कौसल्या हितकारी।'

यह छन्द का एक चरण है जो 'कृपाला' और 'दयाला' पर टूटता है। यहाँ जिह्वा कुछ विश्राम लेती है । अतः इन शब्दो के आगे विराम-चिन्ह लगा दिये जाते है जो रुकने के लिये सकेत करते है।

यति-भंग

यति के स्थान पर यदि कोई शब्द विभाजित हो जाय तो वहाँ यति-भंग दोष कहा जाता है । कवि को इस दोष से बचना चाहिये।

यथा

हर हरि केशव मदन मो,—हन घन श्याम सुजान।
ज्यो ब्रजवासी द्वारिका,—नाथ रटन दिन मान॥

'मदनमोहन' एक शब्द है। पर यहाँ 'मदन मो-' पहले चरण मे और 'हन दूसरे चरण मे चला गया । इसी तरह 'द्वारिकानाथ शब्द के भी दो टुकड़े होकर दोनो चरणो मे बँट गये है। यही यति-भंगदोष है। यति-भंग दोष से पदो का अर्थ समझने मे उलझन पड़ जाती है। यथाशक्ति इस दोष से बचना चाहिये।

गति

प्रत्येक छन्द मे एक प्रकार की गति अर्थात् पाठ-प्रवाह का भी ढंग होता है। इसका कोई मुख्यत. नियम नही कहा जा सकता, अभ्यास पर निर्भर है।

यथा

'लषन सकोप बचन जब बोले'

यह सोलह मात्रा की चौपाई है। इसकी गति ठीक है।

गति-भग

जहाॅ छन्द के सब नियम पूरे-पूरे उतरते है परन्तु गति ठीक नही होती, वहाॅ गति-भंग दोष कहा जाता है।

यथा

'लषन जब सकोप बचन बोले'

इस चरण मे सोलह मात्राए' तो है परन्तु चौपाई की गति ठीक नही है। इसलिये यहाॅ गति-भंग दोष माना जायगा। छन्द में मुख्य और प्रधान बात है उसकी गति का ठीक होना । लय छन्द का साँचा है, वह झट बतला देती है, कि छन्द की गति ठीक है अथवा नही। इसके अतिरिक्त गति का कोई मुख्य नियम नही कहा जा सकता।

गण

छन्द के चरणो की रचना गणो के अनुसार होती है। 'मात्रा या वर्णों के निश्चित समूह को गण कहते हैं'। गण दो प्रकार के होते है—मात्रिक और वर्णिक। आजकल लोग मात्रिक गणो से प्राय' काम नही लेते। मात्रिक छन्दो मे इनकी आवश्यकता पड़ती है, इनकी जगह सख्या-सूचक-शब्दो और वर्णिक गणो से ही काम निकाल लेते है, और काम निकल भी जाता है। परन्तु कही कही मात्रिक गणो की बड़ी आवश्यकता पड़ जाती है; यथा 'सोरठा' और 'रोला' छन्दो की यति और मात्राओ मे समता है, परन्तु गति मे अन्तर है। मात्रिक गणो से इसका निर्णय ठीक हो जाता है। रोला के प्रसंग में इस बात को भलीभाँति स्पष्ट कर दिया गया है।

मात्रिक गण*

टगण, ठगण, डगण, ढगण और णगण यह पाँच भेद मात्रिक गणो के है जो क्रमश' ६, ५, ४, ३ और २ मात्राओ के सूचक है। अर्थात् टगण से ६, ठगण से ५, डगण से ४, ढगण से ३ और णगण से २ मात्राओ का बोध होता है। प्रस्तारानुसार टगण के १३, ठगण के ८, डगण के ५, ढगण के ३ और णगण के २ रूप होते है। इस तरह कुल ३१ रूप होते है इन रूपो की कोई कोई संज्ञाएं वर्णिक गणो से कही-कही मेल खा जाती है, यथा मगण से तात्पर्य ऽ ऽ ऽ तीन गुरु से है। यहाँ टगण के

---

*मात्राओ के निश्चित समूह को मात्रिक गण कहते हैं।

प्रथम रूप का नाम 'हर' है। जिसका रूप ऽऽऽ तीन गुरु है। नगण ।।। का रूप यहाँ ढगण के ।।। वलय या भाव नामक रूप से मिलता है। मात्रिक और वर्णिक गणो मे बहुत अन्तर है। वर्णिक गण तीन वर्णो के होते हैं जिनके कुल रूप आठ ही है और मात्रिक के टगण से णगण तक ३१ रूप हैं। वर्णिक गण तीन लघु वर्णो तक के ही सूचक है और मात्रिक दो मात्रा तक के सूचक है।

किस नाम से गुरु लघु का कैसा क्रम समझना चाहिये यह आगे के इस नकशे से स्पष्ट है—

टगण (छः कल)*

क्रम सख्या,	रूप,	सज्ञा,	उदाहरण
१	ऽऽऽ	हर	सीताजी
२	।।ऽऽ	शशि	गिरधारी
३	।ऽ।ऽ	रवि	उमापती
४	ऽ।।ऽ	सुरपति	पारवती
५	।।।।ऽ	अहिप	जनकसुता
६	।ऽऽ।	अहि	कृपासिन्धु
७	ऽ।ऽ।	पकज	दीनबन्धु
८	।।।ऽ।	अज	जगतनाथ
९	ऽऽ।।	कलि	राधापति

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९
* शिव, ससि, रवि, सुरपति अहिप, पकज, अज, कलि, चद।

१०	।।ऽ।।	चन्द्र	मुरलीधर
११	।ऽ।।।	ध्रुव	रमारमण
१२	ऽ।।।।	धर्म	नंदसुवन
१३	||||||	शालिकर	जलजनयन

ठगण (पंचकल)*

क्रम संख्या,	रूप,	संज्ञा,	उदाहरण
१	।ऽऽ	इन्द्रासन	पुरारी
२	ऽ।ऽ	शूर	राधिका
३	।।।ऽ	चाप	लखपती
४	ऽऽ।	हीर	गोपाल
५	।।ऽ।	शेखर	सुरपाल
६	।ऽ।।	कुसुम	रमापति
७	ऽ।।।	अहिगण	शोकहर
८	।।।।।	पाप गण	मनहरण

---

११   १२   १३
ध्रुव, धरमउ अरु सालिका, छकलनाम सुखकंद ॥

१   २   ३   ४   ५
*इन्द्रासन अरु सूर, चाप, हीर, सेखर गनो ।
६   ७   ८
कुसुमो अहिगन रूर, पाप गनो पँचकल्ल कहे ॥

सूचना—इन रूप-संज्ञाओं के पर्यायवाची शब्द भी इन शब्दों की जगह प्रयोग किये जाते हैं ।

डगण (चौकल)१

क्रम संख्या	रूप	संज्ञा	उदाहरण
१	ऽ ऽ	सुरतलता, कर्ण	श्यामा
२	। । ऽ	कमल	विमला
३	। ऽ ।	भूपति	रमेश
४	ऽ । ।	चरण	मोहन
५	। । । ।	विप्र	रघुवर

ढगण (त्रिकल)२

क्रम संख्या,	रूप,	संज्ञा,	उदाहरण
१	। ऽ	ध्वजा	उमा
२	ऽ ।	सुरपति, पौन, नद, ग्वाल, ताल	श्याम
३	। । ।	भाव, वलय	अमर

णगण (द्विकल)३

क्रम संख्या,	रूप,	संज्ञा,	उदाहरण
१	ऽ	हार, चौर, नूपुर, कुंडल,	श्री
२	। ।	सुप्रिय	शिव

१—सुरतलता[1], अरु कमल[2] बखान। भूपति[3], चरण[4], विप्र[5] उर आन।

२—धुज[1], सुरपात[2], अरु भाव[3] कहि, तीन त्रिकल के नाम।

३—नूपुर[1] प्रिय[2] द्वै णगण के गण इकतीस बखान॥

मात्रिक गण और उनकी संज्ञाओ के प्रयोग प्राय मात्रिक छन्दों मे पुराने आचार्यों ने किये है, यथा—

प्लवंगम छन्द लक्षण

(१) छकल, द्विकल पुनि दोय त्रिकल गण ठानिये।
दै इक कमल रसाल धुजा पुनि आनिये।
यो कल कर इकईस चार पद बानिये।
छन्द प्लवगम नाम धाम बुध मानिये ॥

अर्थात् प्लवगम छन्द के प्रत्येक चरण मे टगण (छकल) णगण (द्विकल), दो ढगण (दो त्रिकल) और अन्त मे कमल (।।ऽ) अर्थात् डगण का दूसरा रूप और ध्वजा (।ऽ) अर्थात् ढगण का पहला रूप, इस तरह रखना चाहिये।

दूसरे शब्दो मे भानुजी कहते है —

गादि बसू दिसि, राम, जगत प्लवंग मे,

अर्थात् बसु (आठ) और दिसि-राम (तेरह) के विराम से इक्कीस मात्राओ का प्लवंगम छन्द होता है। उसके प्रत्येक चरण के आदि मे गुरु और चरणान्त मे जगण और गुरु रहता है।

इसी को यो भी कहते हैं—

(२) ग्यारह दस पर विरति, अन्त गुरु आनिये।

अर्थात् ग्यारह और दस के विराम से इक्कीस मात्रा का प्लवंगम छन्द होता है, अन्त मे गुरु रहना चाहिये।

यथा

(१)

ऽ। ऽ। ऽ ऽ। ।ऽ ।।ऽ। ऽ
रूप रंग, की, खानि, भरी, अलसा,नि है।
६ २ ३ ३ कमल ध्वजा
लखिये श्याम सुजान नेह सरसानि है।
आनन अमल अनूपम अलक विराजती।
जनु अलि अवलिरसाल कंज पर राजती॥

(२)

ऽ। ।ऽ ।। ऽ। ।ऽ। ।ऽ। ऽ
* गादि बसू दिसि, राम जगंत प्लवंग में।
धन्य वही जो, रँगै राम रस रग में।
पावन हरि जन, संग सदा मन दीजिये।
राम कृष्ण गुण, ग्राम नाम रस भीजिये॥

—भानु

(३)

फिरि बदनेस कुँवार, बियो सु फतेह अली।
बैठे इकले जाय, करनि मसलति भली।
घरी दोय बतराय, दुहूँ के मन रले।
कौल बचन करि एक, दोऊ डेरा चले॥

—सूदन

---

* गादि यह नियम सकुचित है। आदि मे गुरु की कोई आवश्यकता नहीं।

ऊपर के तीनो लक्षणो से यह तात्पर्य निकलता है कि प्राचीन कवियो ने प्राय मात्रिक गणो से काम लिया है। आजकल सख्या सूचक शब्दो और वर्णिक गणो से अथवा सीधी संख्याएँ ही लिखकर काम लेते है। मात्रिक छन्द रचना मे इनमे से किसी भी ढग से काम लिया जा सकता है, यह ठीक है। परन्तु मात्रिक-गणो से काम लेने से गति-भंग दोष की आशंका कम रहती है। साथ ही ऐसे अनेक छन्द है जिनकी मात्राएँ बराबर हैं, यति मे समता है परन्तु गति भिन्न है। इसके कोई नियम न बताकर चुप रहना पड़ता है। परन्तु मात्रिक गणो से काम लेने से ऐसी शंकाएँ नही उठती और उनका निराकरण भी सहज ही मे हो जाता है। उदाहरणार्थ 'सोरठा' और 'रोला' की प्रत्येक पक्ति मे ग्यारह और तेरह के विराम से चौबीस मात्राएँ रहती है। केवल गति मे अन्तर है यही कह कर सतोष करना पड़ता है। इसी को मात्रिक गणो की कसौटी पर कसते है तो स्पष्ट अन्तर मालूम हो जाता है। यह अन्तर रोला छन्द के वर्णन मे दूसरे उल्लास मे स्पष्ट किया गया है।

संख्या सूचक सांकेतिक शब्द

ऊपर मात्रिक गणो की चर्चा इसलिये और कर दी है कि आगे चलकर यदि काव्य-रसिक प्राचीन रीतिग्रन्थो को पढ़ना चाहे तो उनके लक्षण समझने मे उन्हे आसानी हो। ऊपर कहा जा चुका है कि मात्रिक गणो के अतरिक्त एक प्रणाली मात्रिक

छन्दो मे यह बरती जाती है कि सख्यासूचक सांकेतिक शब्दो से मात्रा गिनने का काम निकाल लिया जाता है; यथा—'लहो कल लोक की 'प्रतिभा' अर्थात् प्रतिभा छन्द मे लोक (चौदह) मात्राएँ रहती है और आदि मे 'ल' अर्थात् 'लघु' रहता है। यो तो संख्यासूचक सांकेतिक शब्दो की बडी सूची बन सकती है। स्थानाभाव से यहाँ थोडे सांकेतिक शब्द लिखे जाते है।

०—नभ।
१—शशि, भू।
२—नयन, भुज, पक्ष, कर्ण, पद।
३—राम, अग्नि, काल, ताप, गुण।
४—वेद, वर्ण, फल, युग, आश्रम, अवस्था।
५—गति, बाण, पाण्डव, शिव, कन्या, तत्व, यज्ञ, वर्ग।
६—शास्त्र, राग, रस, ऋतु, वेदांग, ईति।
७—मुनि, स्वर, ताल, लोक सिधु, द्वीप, पुरी, वार।
८—बसु, सिद्धि, योग, याम, अंग, दिग्गज, अहि।
९—भक्ति, निधि, अंक, ग्रह, नाडी, भूखण्ड।
१०—दिशा, दोष, दिगपाल, अवतार।
११—शिव,
१२—रवि, राशि, भूषण, मास।
१३—भागवत, नदी।

१४—रत्न, मनु, विद्या, भुवन (लोक)।

१५—तिथि।

१६—कला शृंगार।

१८—स्मृति, पुराण।

२०—नख।

२५—प्रकृति।

२७—नक्षत्र।

२८—योग।

३२—लक्षण, दाँत।

३३—देवता।

३६—रागिणी।

४६—पवन।

५६—भोग।

६३—वर्णमाला।

६४—कला।

इनके सिवा आगे की संख्याओ के भी साकेतिक शब्द है। परन्तु कविगण संख्यासूचक शब्दो के योग से काम ले लेते है, यथा 'राग[६] वेद[४] कल प्रतिचरण' अर्थात् प्रत्येक चरण मे ४६ मात्राएँ। यदि सांकेतिक संख्याओ को क्रम से रखे तो ६४ होना चाहिए परन्तु इनका क्रम उलटने की कविपरम्परा है।

शुभाशुभ और दग्धाक्षर*

काव्य मे शुभाशुभ वर्णों का भी ध्यान रखना पड़ता है। प्राय स्वर सभी शुभ है। व्यंजनो मे क, ख, ग, घ, च, छ, ज, ड, द, ध, न, य, श, स, क्ष ये पन्द्रह वर्ण शुभ है। और शेष ङ, झ, ञ, ट, ठ, ढ, ण, त, थ, प, फ, ब, भ, म, र, ल, व, ष, ह ये उन्नीस वर्ण अशुभ कहलाते है। इनमे भी झ, भ, र, ष, ह ये पाँच तो इतने अशुभ है कि इन्हे दग्धाक्षर कहते है। इन्हे भूलकर भी कविता के आदि मे नही रखना चाहिए। पर बहुतो का कहना है कि नर-काव्य मे इन वर्णों से बचना चाहिये। आशीर्वादक, मांगलिक, सुर-वाची और आदर्शवादी महात्माओ के संबंधी पदो के आदि मे

---

* कठाग्र करने के लिये —

१ क ख ग घ च छ ज ड द ध न य श, स क्ष अक्षर शुभ आहि।
ङ झ ञ ट ठ ढ ण त थ प फ ब भ, म र ल व ष ह शुभ नाहि॥

२ एक कवर्ग के अत को वर्ण[1] चवर्ग के द्वै[2] 'मनीराम' गनीजै।
चारि टवर्ग के बीच बिना[3] तजि जानि थकार पवर्ग[4] न कीजै॥
तीन यवर्ग के छॉडि यकार[5] ते और सकार[6] हकार[7] न कीजै।
वर्ण सदोष विचारि के चित्त पे मित्त कवित्त के आदि न दीजै॥
अर्थात् (१) ङ, (२) झ ञ, (३) ट ठ ढ ण, (४) प फ ब भ म, (५) र ल व, (६) ष और (७) ह ये अशुभ वर्ण है।

I देहु छन्द के आदि नहि भूलि 'झ ह र भ ष भाइ।
आदि गुरु वरण मांगलिक, सुर वाची सुखदाइ॥

रखने से दोष नही होता। और अशुभ वर्ण को गुरु कर देने पर भी उस दोष का मार्जन हो जाता है। अक्षरो के शुभाशुभ का अधिक विचार मात्रिक छन्दो मे होता है। वर्णिक छन्दो मे वर्णिक गणो का।

अलग अलग प्रत्येक वर्ण का फल इस प्रकार है—

छन्द के आदि मे अ आ रखने से सम्पत्ति, इ ई से सुख उ ऊ से धन ए ऐ से सिद्धि, ओ औ से शुभफल, क ख ग घ से लक्ष्मीलाभ, च से सुख, छ से स्नेह, ज से लाभ, ड से सौंदर्य और शोभा, त से तेज और सुख, द ध से धैर्य, न से सुख, य से मंगल, श से सुख, श्री स से सम्पत्ति और क्ष से सुख लाभ होता है। ये सब शुभ वर्ण है।

अशुभ वर्णों मे झ भयदायक है। ट ठ से दुख, ढ से सौंदर्य-नाश, थ से युद्ध, प फ ब भ म से भय, र से दाह, ल व से संघर्ष, ष से दुख और ह से हानि होती है।

ङ ञ ण ये अशुभ है पर आदि मे नही आते। स्वरो मे 'ऋ' को कोई शुभ और कोई अशुभ मानते है पर शुभ अधिक मान्य है। अ बीच मे आता है।

दग्धाक्षरों के दोषो का निराकरण ऊपर बतला आये है। इनके उदाहरण इस प्रकार है—

झ—झाँझ मृदंग संख सहनाई ['झ' गुरुवर्ण है।]
ह—हरि ब्यापक सर्वत्र समाना ['हरि' सुरवाची है।]
र—रमानाथ जहँ राजा, सो पुर बरनि कि जाइ ['रमा' सुर बाची]

"—रचहु मंजु मनि चौके चारू [रचहु मंगल वाची]

भ—भरत महा महिमा जलरासी ['भरत' सुखाची]

ष—षनमुख जनम सकल जग जाना ['षनमुख' सुखवाची]

वर्णिक गण

तीन वर्णों के समूह को वर्णिक गण कहते है। प्रस्तार के अनुसार आदि मध्य और अन्त के लघु-गुरु के विचार से उन के आठ रूप है—

क्रम सख्या	रूप	सज्ञाएँ	उदाहरण
१	SSS	मगण	गोस्वामी
२	ISS	यगण	यशोदा
३	SIS	रगण	कालिका
४	IIS	सगण	यमुना
५	SSI	तगण	गांगेय
६	ISI	जगण	विवेक
७	SII	भगण	वालक
८	III	नगण	नयन

किस गण का क्या नाम है, सोदाहरण इन को स्मरण रखने के लिये यह सूत्र बहुत उत्तम है—

'यमाता राजे भान सलगम्"

इस सूत्र का प्रत्येक वर्ण एक एक गण का बोधक है। 'ल' लघु का और 'ग' गुरु का सूचक है। यह सूत्र आठ गण और

लघु, गुरु का बोधक है। ये दशाक्षर छन्द-शास्त्र मे इसी तरह व्याप्त है जैसे कि भगवान् विष्णु विश्व मे।

इस सूत्र से प्रत्येक गण का उदाहरण और रूप मालूम हो जाता है। यथा—'य' यगण का बोधक है। 'यगण' का रूप जानने के लिये उसके आगे के दो वर्ण 'मा' और 'ता' को इसके साथ मिलाने से 'यमाता' हुआ। इसे ही उदाहरण समझ लो। इस उदाहरण से ही यगण का । ऽ ऽ रूप सिद्ध हो गया। इसी प्रकार 'मगण' के लिये 'मा' के आगे के दो वर्ण मिला लो । 'मातारा' होगा। इससे मगण का ऽ ऽ ऽ यह रूप मालूम हो गया। ऊपर कहा जा चुका है कि इस सूत्र का प्रत्येक वर्ण एक एक गण का बोधक है अर्थात् सूत्र का प्रत्येक वर्ण प्रत्येक गण के आदि वर्ण का बोधक है। इसी नियम से सब गणो के नाम, रूप और उदाहरण मालूम हो सकते है। 'सलगम्' मे 'स' 'सगण' नाम का बोधक है। स (।) लघु, ल (।) लघु और गम् मे म् हलन्त होने से 'ग' (ऽ) गुरु का बोधक है। अर्थात् 'सलगम्' से सगण का । । ऽ यह रूप स्पष्ट हो जाता है। ल (।) लघु का और 'ग' (ऽ) गुरु का बोधक है।

इसके अतिरिक्त गणबोधक और भी छन्दोवद्ध लक्षण अन्य विद्वानो ने बतलाए है उनमे से दो यहाॅ उद्धृत कर दिये जाते है। रुचि के अनुसार इन्हे स्मरण कर लेना चाहिये।

(१)

आदि, मध्य, अवसान मे, भ, ज, स गुरू ते जान।
य, र, त लघू ते जानिये, म, न क्रमते ग, ल मान॥

अर्थात् भगण के आदि मे, जगण के मध्य मे और सगण के अंत मे गुरु रहता है। इसी तरह यगण के आदि मे, रगण के मध्य मे और तगण के अंत मे लघु रहता है। और मगण मे तीनो गुरु तथा नगण मे तीनो लघु रहते हैं।

(२)

तीन गुरु जामे सोई 'मगन' बखाने गन,
नगन सो तीन लघु जामे सो प्रमान है।
आदि गुरु जा मे सोई 'भगन', 'यगन' जा मे
आदि लघु सोई चारु सुख के निधान है॥
मध्य गुरु जा मे सोई 'जगन' जहान जाने,
'रगन' सु मध्य जा मे लघुता विधान है।
अत गुरु जा मे सोई 'सगन' सराहे ताहि,
'तगन' सु अंत लघु अशुभ महान है॥

इस पद्य का भाव स्पष्ट है।

देवता और फल

इन गणो के देवता और फल भी भिन्न-भिन्न है। यही नहीं बल्कि प्रत्येक गण का स्वामी, फल, मास, पक्ष, तिथि, वार, नक्षत्र, वर्ण (जाति) रंग, वस्त्र, भूषण, कुल, माता, पिता, लोक भी अलग अलग हैं। लघु गुरु समेत ये दशाक्षर दशो अवतार के सूचक है। (१) मगण—मत्स्य, (२) यगण—कच्छप, (३) रगण—वाराह, (४) सगण—नृसिह, (५) तगण—वामन, (६) जगण—परशुराम, (७) भगण—राम और (८) नगण—कृष्ण-

वतार के सूचक है। (९) गुरु—बौद्ध और (१०) लघु—कल्कि के दसवे अवतार के सूचक है। जो हो, पर इन्ही दशाक्षरो पर छन्द शास्त्र की निर्भरता है।

प्रत्येक गण के सभी अंग जानने की आवश्यकता नही है। साधारणतया प्रत्येक गण का देवता और उसका फल जानना आवश्यक है उसमे भी मुख्यत फल। जिससे कि छन्द के आदि मे अशुभ फल देने वाले गण का ध्यान रखा जा सके। देवता और फल-सूचक दो पद दिये जाते हैं। अपनी रुचि के अनुसार उन्हे कंठ कर लेना चाहिये।

(१)

तीनो 'गो' 'मगन' मे 'मही' है सुर 'लक्ष्मी' फल,
'नगन' त्रिलघु सुर 'नाक' वर बुद्धिदान।
आदि गुरु 'भगण' है चन्द्र सुर 'मंगल दा'
लघु आदि यगन 'जल' आनँद अनेक जान।
'जगन' गो मध्य 'सूर' स्वामी सुख दूर करे,
मध्य 'ल' रगन 'अग्नि' स्वामी दुख को निदान।
सगन मे अन्त गुरु स्वामी 'वायु' भ्रमन है,
'ल' अंत तगन 'व्योम' स्वामी सून्य फल मान॥

अर्थ स्पष्ट है।

(२)

मगण पृथ्वी तासु फल श्री, यगण जल आयु प्रदं।
रगण पावक दाह ता फल, सगण वायु विदेशदं।

तगण व्योम तु शून्य फलयुत, जगण आदित रुज फल।
नगण स्वर्ग सदा सुखप्रद भ शशि देवै यश फल।

भाव स्पष्ट है।

यद्यपि गणो के देवता, फल आदि के सबंध के दो पद लिख दिये है। फिर भी यह स्पष्ट करने के लिये कि किस गण का क्या रूप, उदाहरण, देवता और फल है यह गण-फलक दिया जाता है।

गण-फलक

गण	रूप	उदाहरण	देवता	फल	शुभाशुभ
मगण	SSS	माता जी	पृथ्वी	लक्ष्मी	शुभ
नगण	।।।	पवन	स्वर्ग	सुख	
यगण	।SS	भवानी	जल	आयु	
भगण	S।।	बालक	चन्द्रमा	यश	
जगण	।S।	ब्रजेश	सूर्य	रोग	अशुभ
रगण	S।S	देवता	अग्नि	दाह	
तगण	SS।	गोविद	आकाश	शून्य	
सगण	।।S	यमुना	वायु	विदेश	

ऊपर के फलक से शुभ और अशुभ गण स्पष्ट हो जाते है। आचार्यों का कहना है कि केवल छन्द के पहले पद मे अशुभ गण नही पड़ना चाहिये। और यदि पहला चरण भी मगल-वाची या सुखवाची हो तो अशुभ गण का भी कोई दोष नही माना

जाता। कुछ का कहना है कि गणो के शुभाशुभ का विचार भी मात्रिक छन्दो मे ही किया जाता है वर्णिक मे नही। फिर भी जहाँ तक हो वर्णिक छन्दो के आदि चरण मे अशुभ गण नही रखने चाहिये और यदि रखने ही पडे तो देववाची या मगल-वाची बनाकर ही रखना चाहिये।

द्विगण-विचार

जिस तरह दग्धाक्षरो को हम गुरु करके या सुर और मगल-वाची शब्दों मे प्रयोग कर लेते है। उसी तरह यदि हमे अशुभ गण रखना ही पड़े तो इसके आगे दूसरा शुभ गण रखने से उस दोष का परिहार हो जाता है। इस नियम को द्विगण-विचार कहते है। इन आठो गणों मे मगण और नगण की मित्र, भगण और यगण की दास, जगण और तगण की उदासीन तथा सगण और रगण की शत्रु सज्ञा है। द्विगणों के संयोग और फलाफल का यह फलक दिया गया है।

द्विगण-फलक

गण सज्ञा	सयोग	फल
१. मित्र	मित्र + मित्र	सिद्धि
मगण, नगण	मित्र + दास	विजय
	मित्र + उदासीन	हानि (गोत्र-दुखद)
	मित्र + शत्रु	प्रिय नाश (बंधु-हानि)
२. दास	दास + मित्र	सिद्धि (कार्य सिद्धि)
भगण, यगण	दास + दास	सर्व जीववश (कोई कोई हानि मानते है)
	दास + उदासीन	पीड़ा (धन नाश)
	दास + शत्रु	पराजय (मित्र भी शत्रु हो)
३. उदासीन	उदासीन + मित्र	अल्प-फल
जगण तगण	उदासीन + दास	प्रभुता प्राप्ति (कोई दुख मानते हैं)
	उदासीन + उदासीन	विफल
	उदासीन + शत्रु	दु ख
४. शत्रु	शत्रु + मित्र	शून्य
रगण, सगण	शत्रु + दास	प्रिय-नाश (नारि-नाश)
	शत्रु + उदासीन	शंका (कुल-नाश)
	शत्रु + शत्रु	पराजय (नायक-नाश)

इस फलक से स्पष्ट हो गया कि द्विगण मे किस गण के साथ किस गण का सयोग शुभ है और किस के साथ किस गण का अशुभ। कंठाग्र करने के लिये इस फलक को छन्दोवद्ध दे दिया है।

मगन, नगन ये मित्र हैं, भगन, यगन ये दास।
उदासीन ज त जानिये, र स रिपु केशवदास ॥

मित्र ते जु होय मित्र बाढै बहु रिद्धि सिद्धि,
मित्र ते जु दास त्रास युद्ध ते न जानिये।
मित्र ते उदास गन होत गोत दु:ख देत,
मित्र ते जु शत्रु होय मित्रबधु हानिये।
दास ते जु मित्रगण काज सिद्धि केशोदास,
दास ते जु दास बस जीव सब मानिये।
दास ते उदास होत धन नास आसपास,
दास ते जु शत्रु, मित्र शत्रु सो बखानिये ॥१॥

जानिये उदास ते जु मित्रगन तुच्छ फल
प्रकट उदास ते जु दास प्रभुताइये।
होय जो उदास तें उदास तो न फलाफल,
जो उदास ही ते शत्रु तो न सुख पाइये।
शत्रु ते जु मित्रगन ताहि सो अफल गन,
शत्रु ते जु दास आशु बनिता नसाइये।
शत्रु ते उदास कुल नाश होय केशोदास,
शत्रु ते जु शत्रु नाश नायक को गाइये ॥२॥

नर-काव्य मे गणागण का विचार अवश्य करना चाहिये। हाँ, देववाची, मंगलवाची शब्दो तथा देवकथा प्रसंग मे मात्रिक

या वर्णिक छन्दो के अन्तर्गत गणागण, और दग्धाक्षरो के विचार की विशेष आवश्यकता नही। परन्तु ग्रन्थारंभ मे ऐसा विचार करना उत्तम है। प्राचीन आचार्यों ने ऐसा ही किया है। रामचरितमानस का आरंभ—श्लोक 'वर्णानां' मगण तथा सोरठा 'जेहिसु' नगण से हुआ है। आजकल भी विचारशील कवि इसी शैली पर चल रहे है। कविवर मैथिलीशरण जी ने 'साकेत' का 'जयति' नगण से, सिरस जी ने 'भरत भक्ति' का 'अचल' नगण से और महाकवि 'हरिऔध' जी ने 'प्रियप्रवास' का दिवस' नगण से ही आरंभ किया है।

तुक

छन्द रचना मे तुक का जानना भी बहुत आवश्यक है। यों तो कान इतने अभ्यस्त होते हैं कि छन्द सुनते ही तुक को पहचान लेते हैं। वास्तव मे तुक मे ऐसा ही आकर्षण है कि वह श्रोता को मुग्ध कर देती है। यद्यपि यह नही कहा जा सकता कि बिना तुक के कविता हो ही नही सकती ! फिर भी यह स्वयं-सिद्ध बात है कि तुक से पद मे लयगत-सौंदर्य, कर्ण-माधुर्य और विचित्र आकर्षण आजाता है। लय अथवा धारा-प्रवाह छन्द का प्राण है, तुक उसका सहोदर है।

कहा जा सकता है कि संस्कृत मे तो प्रायः अतुकान्तो का ही साम्राज्य है, फिर भी संस्कृत मे पदलालित्य, कर्ण-प्रियता, लयगत-सौंदर्य बेजोड़ है। ठीक है, इसका कारण है कि

सस्कृत मे प्रायः चुने हुए वृत्तो मे ही पद्य-रचना की जाती है। और उन वृत्तो के कुछ ऐसे अनूठे गठे हुए-वर्ण-क्रम से साँचे तैयार किये गये है कि जिनमे ढलते ही पद अनोखे सरस और कर्ण-मधुर हो जाते है। हिन्दी मे भी चुने हुए संस्कृत के वर्ण-वृत्तो मे अतुकान्त रचना बुरी नही जॅचती। महाकवि हरिऔध जी का 'प्रिय-प्रवास' अतुकान्त वर्ण-वृत्तो का ही महाकाव्य है, पर वह सरसता, लालित्य और कर्ण-प्रियता मे अपने ढंग का बेजोड़ है। हिन्दी के मात्रिक छन्दो मे अतुकान्त अच्छे नही जँचते, सुनते ही कान मे खटक पैदा कर देते है।

हिन्दी मे तुक कहाॅ से आई ? इसके जन्मदाता हमारे अपढ़" ग्रामीण हैं। उनकी बात-बात मे तुक चलती है। उनके गीतो मे तुकबंदी का ही बाहुल्य होता है। "मरे जायॅ मलारे गायँ" "ऊधो का लेना न माधो का देना" ऐसी ही तुकमय उनकी कहावते है। हिन्दी-साहित्य मे चारण और भाटों के द्वारा गीति-काव्य और वीर-गाथाओं से 'तुक' का प्रवेश हुआ। और चिरकाल से तुकमय पद सुनते आने से वह हमारे कानों का विषय बन गया है।

संस्कृत मे भी जो छन्द तुकमय है, उनका कहना ही क्या ? जयदेव जी के सस्कृत काव्य गीतगोविद मे तुको के दर्शन होते हैं; यथा—

'पतति पतत्रे विचलित पत्रे, शंकित भवदु पयानम्।
रचयति शयनं सचकित नयनं, पश्यति तव पंथानम्॥"

तुकांत ने इस पद्द मे कितना आकर्षण ला दिया है। प्राकृत भी तुक से खाली नहीं है—

"पिंग जटा बलि ठाविअ[१] गगा

धारिअ णाअरि[२] जेण[३] अधगा[४]।

चंद कला जसु[५] सीसहि णोक्खा[६].

सो तुम्ह सकर दिज्जउ[७] मोक्खा[८]।

उर्दू में भी काफिया और रदीफ दोनो का नियम होता है। हाँ, किन्ही शेरो के तुकांत मे सम-स्वर-वर्ण-समता होती है और किन्ही में नहीं, यथा—

सम-स्वर-वर्ण-समता

खींचो न कमानो को न तलवार निकालो।

जब तोप मुक़ाबिल है तो अखबार निकालो॥

सम-स्वर-वर्ण-असमता

क़र्ज़ की पीते थे मय लेकिन समझते थे कि हॉ।

रंग लायेगी हमारी फाकामस्ती एक दिन॥

जो हो, हिंदी का पुराना साहित्य भी तुकमय है; और आजकल की खडी बोली की रचनाओ में भी तुक का प्राधान्य है। लोकमत तुको के ही पक्ष में है। हॉ अंग्रेजी और बंगला के प्रभाव में आकर हिन्दी के कुछ कविगण अतुकांत रचनाओ की ओर झुक गये है।

---

१ स्थापित २ नागरि ३ येन ४ अर्धंग ५ यस्य ६ अनोखा ७ दीजिये ८ मोक्ष।

तुक है क्या ? छन्द के चरणांत में आने वाला अनुप्रास ही वास्तव में तुक है। जिसे सीधे-सादे शब्दों मे यों कह सकते है—छंदों के चरणांत में रहने वाले समस्वर-वर्णों की समता ही तुक है।"

तुक के सम्बध में हमें दो बाते बतलानी है—एक यह कि उत्तमता की दृष्टि से तुकों के कितने प्रकार है ? उनके क्या नियम है ? दूसरे यह कि सम, अर्द्धसम, आदि छंदों के अंतर्गत—सम, विषमादि चरणो में—आने के कारण चरणो के इन नाम-भेदो से तुकों के नाम और प्रकार क्या है ?

पहले हमें उत्तमता की दृष्टि से तुकों का निर्णय करना है। उत्तमता की दृष्टि से तुकों में प्रकारांतर से दो ढग बरते गये है—एक समस्वर गुरु लघु का आधार लेकर और दूसरा समस्वर-वर्ण-समता के सहारे पर। पर वास्तव में दोनों एक ही है।

१. समस्वर गुरु-लघु का आधार

१—यदि छन्द के चरणान्त मे दो गुरु आवे तो वहाँ पाँच मात्राओ के समस्वर मिलने से तुक उत्तम, चार के मिलने से मध्यम और चार से कम मिलने से तुक निकृष्ट हो जाती है।

उत्तम

जौ तपु करइ कुमारि तुम्हारी।
भाविउ मेटि सकहि त्रिपुरारी॥

मध्यम

पुत्रों को नत देख धात्रियाँ बोली धीरा—
जाओ बेटा, 'रामकाज' क्षण-भंग शरीरा।

—मैथिलीशरण गुप्त

निकृष्ट

महा तुच्छ यम कोटि तिहारे आगे पुत्री
सती-सिरोमनि उभय लोक महँ तुही भवित्री॥

यहां केवल 'त्र' मे स्वर-साम्य है।

७—यदि छन्द के चरणान्त मे लघु-गुरु (। ऽ) या गुरु-लघु (ऽ ।) आवे तो पॉच मात्राओ के समस्वर के मिलने से उत्तम, चार के मिलने से मध्यम इस से कम के मिलने से तुक निकृष्ट कहलाती है।

उत्तम

(१) सरस सारस सारस सोहते।
कमलिनी अलिनी सर जोहते॥

—'सिरस'

(२) मृत्यु ? उसमे तो सहज ही मुक्ति।
भोग तू निज भावना की भुक्ति॥

—मैथिलीशरण गुप्त

मध्यम

(१) परकाजहि देह को धारे फिरौ परजन्य जथारथ ह्वै दरसौ ।
निधिनीर सुधा के समान करौ सब ही विधि सज्जनता सरसौ ।।
घन आनंद' जीवन दायक हौ कछु मेरियौ पीर हिये परसौ ।
कबहूँ वा बिसासी सुजान के, आँगन मो अँसुवान को लै बरसौ ।।

—घनानंद

(२) सियापति छाँडि न कोई सहाय ।
उमापति सेवक क्यो न कहाय ।

—मान

निकृष्ट

(१)

होता है हित के लिये सभी ।
करते है हरि क्या अहित कभी ?

—मैथिलीशरण गुप्त

(२)

चरन सेवा करत निसि दिन, रामकी करि प्रीति ।
कछु न चाहिय मोहि आनहु, भई प्रभु परतीति ।।

—'सिरस'

(३)

निन्दा अस्तुत उभय सम, ममता मम पदकञ्ज ।
ते सज्जन मम प्रान प्रिय, सुख मंदिर सुखपुञ्ज ।।

३ यदि छन्द के चरणान्त मे दो लघु आ पडे तो चार मात्राओ का सम-स्वर मिलना उत्तम दो का मध्यम और एक का निकृष्ट है।

उत्तम

गुरु पद-रज-मृदु मजुल अंजन।
नयन अमिय दृग दोष विभजन।

मध्यम

धन्य धन्य तै धन्य विभीपन।
भयेहु तात निसिचर-कुल-भूषन।

—रामचरित-मानस

निकृष्ट

फिरहु तोष मम हृदय, भयो तू मेरो ही सुत।
पुष्प गुलाब प्रभाव न कोउ कंटक सन रूसत॥

—'सिरस'

२. सम-स्वर वर्ण-समता का आधार

छन्दों के चरणान्त मे अधिक सम-स्वर-वर्णों की समता होने से उत्तम, न्यून समता होने से मध्यम और अनियमता होने से निकृष्ट तुक होती है।

उत्तम तुक के सम-सरि, विषम-सरि, कष्ट-सरि, मध्यम के असंयोग-मीलित, स्वर-मीलित, दुर्मिल और निकृष्ट तुक के अमिल-सुमिल, आदि-मत्त-अमिल और अन्त-मत्त-अमिल ऐसे तीन-तीन भेद हैं।

मध्यम

असंयोग-मीलित १

रित होती चले वेद की वाणी।
गूँजै गिरि-कानन-सिधु-पार कल्याणी।
—साकेत

स्वर-मीलित २

ठाढ़े है नव द्रुम डार गहे,
धनु कांधे धरे कर शायक लै।
बिकटी भृकुटी बड़री अखियाँ,
अनमोल कपोलन की छबि है।
तुलसी असि मूरति आनि हिये,
जड़ डारु दै प्रान निछावरि कै।
श्रम-सीकर साँवरि देह लसै,
मनो रारि महा-तम तारक मै॥
—कवितावली

दुर्मिल ३

प्रभु को निष्कासन मिला, मुझको कारागार।
मृत्यु दण्ड उन तात को, राज्य तुझे धिक्कार॥

---

१ तुक के सयुक्त वर्ण का समता मे न गिना जाना असयोग मीलित तुक है। ऊपर की तुक 'वाणी' 'ल्याणी' मे 'ल्या' के साथ यदि 'व्या' जैसा वर्ण होता तो 'य' और 'ण' की समस्वर-वर्ण समता होने से तुक उत्तम हो जाती।

२ चरणों के सर्वान्त्य वर्ण मे केवल समस्वर समता है।

३ सर्वान्त्य समस्वर सहित वर्ण की समता है।

निकृष्ट

अमिल-सुमिल १

चँद भगीरथ की की शुचि चाँदनी, कै शिव की भल कीरति छावै।
चदन खौर लगाव मही, किधौ चौर सुहात, बयारि डुलावै।
धाव सुधा-सरिता जग बीच, किधौं यश-चादरि स्वच्छ बिछावै।
क्षीर-पयोधि बह्यो बहु क्षीर किधो अघ-भगनि गंग सुहावै॥

—भरत-भक्ति

आदि मत्त अमिल २

मुनि जेहि ध्यान न पावहि, जाहि न जानत बेद।
कृपा-सिधु सोइ कपिन्ह सन, करत अनेक विनोद॥

—रामचरित मानस

अन्त मत्त अमिल ४

ठेलि ठेलि कै कायरनि, तुही नरक मे देति।
असि तू ही वर-वीर की, होति स्वर्ग की हेतु॥

अतुकान्त

छन्दो के चरणान्त मे स्वर और वर्ण समता न होना ही अतुकान्त अथवा भिन्न तुकान्त है।

---

१ छन्द मे चरणान्त के एक दो समस्वर वर्णों की दो या तीन चरणों मे समता होना ही अमिल सुमिल तुक है ऊपर के पहले और तीसरे चरण में समता की झलक है।

३ चरणान्त के तुक वाले आदि वर्ण के स्वरो मे विषमता होना।

३ चरणो के सर्वान्त्य बर्णों के स्वरों में विषमता का होना।

विलसित उरमे है जो सदा देवता लो ।
वह निज-उर मे है ठौर भी क्यो न देता ।
नित वह कलपाता है मुझे कान्त हो क्यो ?
जिस बिन कल, पाते है नही प्राण मेरे ॥
—प्रिय प्रवास

सूचना—छन्दो के चरणान्त मे वीप्सा, यमक और लाट अलकार के पदो की आवृत्ति होने वीप्सा, यामिका और लाटिया ये भी उत्तम तुको के भेद किये जा सकते है ।

चरण भेद से तुकान्त-वर्गीकरण

सम, अर्ध-सम आदि छन्द-भेदो के अन्तर्गत—सम-विषमादि चरणो मे—आने के कारण चरणो के इन नाम-भेदो से तुको के छ प्रकार है—१ सर्वान्त्य, २ समान्त्य-विषमान्त्य, ३ समान्त्य, ४ विषमान्त्य, ५ सम-विषमान्त्य और ६ भिन्नान्त्य ।

१ सर्वान्त्य-छन्द के चारो चरणों मे तुक साम्य को सर्वान्त्य कहते है ।

मनहरण

सुनिये विटप प्रभु ! पुहुप तिहारे हम,
राखिहौ हमैं तौ सोभा रावरी बढ़ाय है ।
तजि हौ हरषि कै तौ बिलग न मानै कछु,
जहॉ जहॉ जैहै तहॉ दूनो जस गाय है ॥
सुरन चढ़ैंगे नर सिरन चढ़ैगे फेरि,
सुकवि 'अनीस' हाथ-हाथनि बिकाय है ।

देस मे रहैगे परदेस मे रहैगे
काहू भेस मे रहैगे तऊ रावरे कहाय है ॥
—अनीस

२ समान्त्य-विषमान्त्य—अर्द्ध-सम छन्द के सम-सम तथा विषम-विषम दलो मे तुक साम्य को समान्त्य-विपमान्त्य तुक कहते हैं।

सोरठा

जेहि सुमिरत सिधि होय, गननायक करिबर बदन।
करहु अनुग्रह सोय, बुद्धि-रासि सुभ-गुन सदन ॥

३ समान्त्य—अर्द्ध-सम छन्द के सम दलो के तुक-साम्य को समान्त्य कहते है।

दोहा

तुलसी चातक ही फबै, मान राखिबो प्रेम।
बक्र-बुंद लखि स्वाति हू, निदरि निबाहत नेम ॥

४ विषमान्त्य—अर्द्ध-सम छन्द के विषम दलो के तुक-साम्य को विषमान्त्य कहते हैं।

सोरठा

सुर नर मुनि कोउ नाहि, जेहि न मोह माया प्रबल।
अस विचार मन माहि, भजिय महा-माया पतिहि ॥

५. सम-विषमान्त्य—सम-छन्द के सम-विषम चरणो के निकट तम एक एक जोड़े—पहले के साथ दूसरे और तीसरे के साथ चौथे—मे तुक साम्य होना सम-विषमान्त्य तुक कहलाती है।

चौपाई

पुलकि गात हिय सिय रघुबीरू । जीह नाम जप लोचन नीरू ॥
लखन राम सिय कानन बसही । भरत भवन बसि तप तनु कसही ॥

६. भिन्नान्त्य—सम-छन्द के तुकान्तो की पारस्परिक विषमता को भिन्नान्त्य कहते है ।

मन्दाक्रान्ता

शोभा वाले-विटप बिलसे पक्षियो के स्वरो से ।
विज्ञानी है परम-प्रभु के प्रेम का पाठ पाता ॥
व्याधा की है बधन-रुचियाँ और भी तीव्र होती ।
यो दोनों के श्रवण करने में बडी-भिन्नता है ॥

—प्रियप्रवास

छन्द-भेद

छन्द का शब्दार्थ और लक्षण बताया जा चुका है । मात्रा और वर्ण-गणना के भेद से पहले इसके दो भेद है । मात्रिक (जाति) और वर्णिक (वृत्त) । जिन छन्दो मे मात्राओ की संख्या और क्रम आदि का नियम होता है उन्हे मात्रिक अथवा जाति छन्द कहते है और जिन छन्दो मे वर्णों की संख्या और उनके गुरु-लघु के क्रम का भी नियम होता है उन्हे वर्णिक या वृत्त छन्द कहते हैं ।

इन मात्रिक और वर्णिक छन्दो मे से फिर प्रत्येक के तीन-तीन भेद हैं :—सम, अर्द्ध-सम और विषम । फिर इनमें 'सम' छन्दों के 'साधारण' और 'दण्डक' ये दो-दो भेद हो जाते है ।

इसके पश्चात् इन साधारण, दण्डक, अर्द्ध-सम और विषम मात्रिकों के मूल और 'मुक्तक' ये दो-दो भेद हो जाते हैं और वर्णिकों में 'सम' के अन्तर्गत साधारण के मूल और उपजाति, तथा दण्डकों के 'गणवद्ध और मुक्तक' दो-दो भेद हो जाते हैं। इसी तरह वर्णिक अर्द्ध-सम और विषम छन्दों के भी गणवद्ध और मुक्तक ये दो-दो भेद हो जाते हैं। स्पष्ट समझने के लिये अन्त में छन्द-वश-वृक्ष भी दे दिया है।

मात्रिक-छन्दों के भेद

सम—जिन छन्दों के चारों चरणों में मात्राओं की संख्या और उनके क्रम की समता हो उन्हें मात्रिक छन्द कहते हैं, यथा—चौपाई।

अर्द्ध-सम—जिन छन्दों के विषम-विषम (पहले-तीसरे) और सम-सम (दूसरे-चौथे) चरणों मे मात्राओं की संख्या और उनके क्रम की समता होती है, उन्हें मात्रिक अर्द्ध-सम छन्द कहते हैं, जैसे—सोरठा।

विषम—मात्रिक सम और अर्द्ध-सम छन्दों के अतिरिक्त छन्द विषम कहलाते हैं। जैसे—आर्या, गाथा, मिलिन्दपाद आदि।

सम छन्दों के अन्तर्गत—

साधारण—जिन सम छन्दों के प्रत्येक चरण मे वत्तीस मात्राएं तक रहती हैं वे साधारण मात्रिक कहलाते हैं। जैसे—समान-सवैया, आदि।

दण्डक—जिन सम छन्दो के प्रत्येक चरण मे बत्तीस से अधिक मात्राएं रहती हैं वे मात्रिक-दण्डक कहलाते हैं। जैसे—करखा आदि।

इ न सम-साधारण, दण्डकों तथा अर्द्ध-सम और विषमो के भी दो-दो भेद हैं—मूल और मुक्तक।

मूल—मूल छन्द वे है जिनकी मात्रा-गणना सम्पूर्ण चरणो मे समान रहती है। जैसे—चौपाई, सोरठा, मिलिन्द-पाद आदि।

मुक्तक—जिन छन्दो के चरणो मे एक दो-मात्रा के घट-बढ़ जाने से अवान्तर-भेद हो जाते है वे छन्द मात्रा मुक्तक कहलाते है, जैसे--रूप चौबोला, छपदी आदि।

वर्णिक छन्दो के भेद

सम—जिन छन्दो के चारो चरणो मे वर्णों की संख्या और गुरु-लघु का क्रम अथवा गण-समानता रहती है वे वर्णिक-सम छन्द कहलाते है, जैसे—मन्दाक्रान्त, सवैया, दण्डक आदि।

अर्द्ध सम—जिन छन्दो के सम-सम (दूसरे-चौथे) और विषम-विषम (पहले-तीसरे) चरणो मे वर्ण क्रम और उन चरणो की वर्ण-संख्या मे समानता होती है वे वर्णिक अर्द्ध-सम कहलाते है[*]।

---

[*] बगला, मराठी, अंग्रेजी आदि भाषाओ के प्रभाव के कारण हिन्दी मे अब अनेक नये नये छन्दो की रचना होने लगी है। इसीलिये गणबद्ध और मुक्तकों के भेद मे वृद्धि करनी पडी है।

विषम—वे वर्णिक छन्द हैं जिनके चरणो मे से हर एक चरण की वर्ण संख्या और उनके गुरु-लघु के क्रम मे परस्पर समता न हो।

सम छन्दों के अन्तर्गत—

साधारण—छब्बीस वर्ण तक के छन्द साधारण वृत्त कहलाते है जैसे—सवैया।

दण्डक—छब्बीस वर्ण से अधिक के छन्द दण्डक कहलाते है। जैसे— मनहरण'।

इन सम-साधारण और दण्डको तथा अर्द्ध-सम और विषमो" के भी दो-दो भेद है। सम-साधारण के मूल और उपजाति ये दो भेद हैं और अर्द्ध-सम तथा दण्डको के गण-वद्ध और मुक्तक ये दो-दो भेद है।

मूल—वे छन्द हैं जिनकी चारो चरणो मे वर्ण-गणना सम और गण-वद्ध होती है। जैसे—मन्दाक्रान्ता।

'उपजाति—वे सम-वृत्त हैं जो भिन्न दो सम-वृत्तो के मेल से बनते हैं। किसी विशेष छन्द की जाति के अन्तर्गत होने के कारण वे उपजाति कहलाते हैं। यथा—मत्तगयंद उपजाति।

"गणवद्ध—जिन छन्दो मे गण तथा गुरु-लघु आदि का क्रम रहता है वे गण-वद्ध कहलाते हैं। जैसे—सवैया, अनंग-शेखर आदि।

मुक्तक—जो छन्द गण तथा गुरु-लघु आदि के नियमो से मुक्त रहते हैं वे मुक्तक कहलाते हैं। जैसे—मनहरण।

इन भेदोपभेदो के अन्तर्गत छन्दो के नाम, लक्षण और उदाहरण आदि का दूसरे उल्लास मे विस्तार से वर्णन है। अधिक स्पष्टता के लिये यहाँ छन्द-वंश-वृक्ष दिया जाता है।

छंद-वंश-वृक्ष
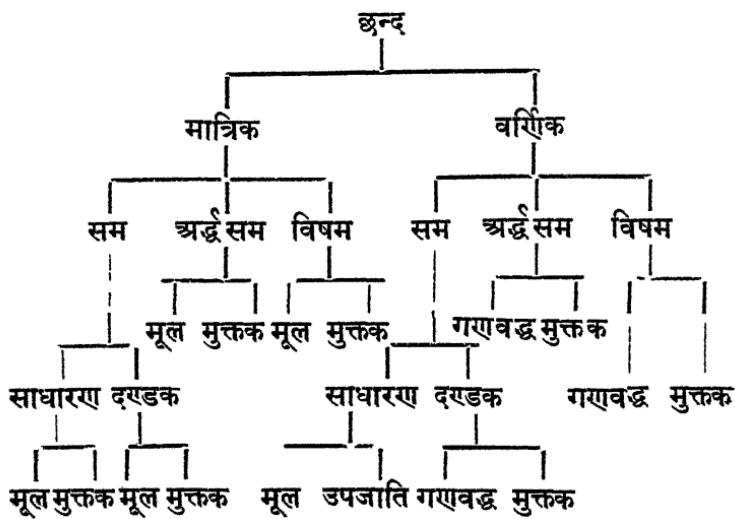
मात्रिक तथा वर्णिक छन्दों की पहचान

अमुक छन्द वर्णिक है या मात्रिक? इसके पहचानने का सरल ढंग यह है कि छन्द के वर्ण गिन डालो। यदि चारो चरणो मे वर्ण-समता है तो वह वर्णिक है अन्यथा मात्रिक। वर्णिको मे साधारण है या मुक्तक? इसके लिये गुरुलघु के क्रम पर ध्यान दे लेना चाहिये। ध्यान रहे कि वर्णिक छन्दो के वर्ण

गिनने मे सयुक्ताक्षरो की गणना नही की जाती। यथा 'इन्द्र' मे 'इ' और 'न्द्र' दो ही वर्ण गिने जावेगे।

यह दोहा भी छन्द पहचानने के लिये उपयोगी हो सकता है—

लघु गुरु चारो चरण मे क्रम ते मिले समान।
वर्णिक है वह, अन्यथा मात्रिक छन्द प्रमान॥

अर्थात् 'यदि छन्द के चरणो मे गुरु-लघु का वर्ण-क्रम मिले तो वर्णिक अन्यथा मात्रिक।' पर इस ढग मे गणना करने से वर्णिक मुक्तको मे गडबड हो सकती है क्योकि वहाँ वर्ण-सख्या की ही समता होती है गुरु-लघु का कोई क्रम नही होता। इस से पहला ही ढग उत्तम है।

दूसरा उल्लास

मात्रिक सम छन्द

५ मात्राओं के छन्द-८*

वीर

इस छन्द के चरणान्त मे गुरु लघु।

भव-भीर। हरु पीर।
हे धीर। रघुबीर ॥

—दास

६ मात्राओ के छन्द-१३

बगहस

चरणान्त मे गुरु लघु।

कृष्ण पास। तबहि दास।
दिय पठाय। रन सुनाय ॥

—सुजान चरित

---

* जितनी मात्राओ का छद है। शुरू में शीर्षक दे दिया गया है उस शीर्षक के भीतर उतनी ही मात्रा के छंद समझने चाहियें।

हर छन्द

चरणान्त मे नगण ।

जगत जननि । दुखी जननि ।
छोह करहि । व्यथा हरहि ॥

—दास

७ मात्राओं के छन्द-२१

शुभ गति (अन्य नाम—सुगति)

प्रत्येक चरण मे चार और तीन के विराम से सात और चरणान्त मे प्राय गुरु रहता है —

(१)

आलस तजो । हर हर भजो ।
छल ते लजो । गुन से सजो ॥

—नायक

(२)

शिव शिव कहो । जो सुख चहो ।
जो सुमति है । तो सुगति है ।

—भानु

(३)

लाल गोपाल । प्रभा विशाल ।
जसुमति नंद । आनँद कंद ॥

—दास

४ मात्राओं के छन्द-३४

छवि (अन्यनाम—मधुभार)

प्रत्येक चरण मे चार-चार मात्राओ पर विराम और चरणान्त मे जगण रहता है —

(१)

प्रभु हो प्रवीन। नर है जो दीन।
तिनकी सम्हार। तुम्हरे अधार॥

(२)

बसि हिय प्रदेश। हे हरि हमेश।
नाशै कलेश। गावे सुरेश॥

६ मात्राओं के छन्द-५५

हारी (अन्य नाम—गंग)

चरणान्त मे दो गुरु।

धन-धान्य पाना। हो यश कमाना।
धर वीर-बाना। कुछ कर दिखाना॥

—मान

वसुमती

चरणान्त मे एक गुरु।

पर दु:ख हरना। शुभ काम करना।
हरि नाम जपना। संसार अपना॥

—मान

निधि

चरणान्त में लघु।

निज हिये विचार। यह जगत असार।
गुरु भयो अधार। सुख लह्यो अपार॥

१० मात्राओं के छन्द—८९

दीपक

चरणान्त मे गुरु लघु।

(१)

जो मान का ध्यान। रखते सु मतिमान।
जो ठानते ठान। रखते सो दे प्रान॥

—मान

(२)

वह राउ बुधवान। करि सूर सनमान।
जे जहाँ इहँ ज्वान। तहँ थापि बलवान॥

—काव्य कुसुमाकर

कमल

प्रत्येक चरण के आदि मे त्रिकल और अन्त मे प्राय रगण रहता है :—

रँगीलो साँवरो। गयो जब द्वारिका।
विकल कल ना हिये। कृष्ण रटना लगी॥

—सत्यनारायण कविरत्न

कमला

प्रत्येक चरण मे आठ लघु और चरणान्त मे एक गुरु रहता है —

कब अँखियन लखि हों। अरु भुज भरि रखि हो।
शशि धरि विमल कला। हृदय कमल कमला ॥

—दास

११ मात्राओं के छन्द-१४४

हंसमाला

चरणान्त मे दो गुरु।

इह आरण्य माही। सर मानुष्य नाही।
विकसे कंज आला। कुरैं हंस माला ॥

—दास

आभीर (अन्य नाम—अहीर)

चरणान्त में प्राय. जगण।

(१)

सुरभित मंद बयार। सरसे सुमन सुडार।
रहे मधुप गुंजार। धन्य बसंत बहार ॥

(२)

पर है कौन उपाय ? नृपति करे सो न्याय।
न्याय यही यदि, हाय ! तो क्या है अन्याय ?

—अनघ (मैथिलीशरण गुप्त)

१२ मात्राओं के छन्द-२३३

तोमर (अन्य नाम—वामन)

चरणान्त मे गुरु लघु।

(१)

प्रस्थान—वन की ओर। या लोक-मन की ओर ?
होकर न धन की ओर। है राम जन की ओर॥

—साकेत

(२)

तब चले बान कराल। फुंकरत जनु बहु व्याल।
कोपेउ समर श्रीराम। चले बिसिष निसित निकाम॥*

—रामचरित मानस

(३)

है वर्ग जिनका सैन्य। अनुचित उन्हे है दैन्य।
यह है उन्ही की रीति। मेटे अधर्म अनीति॥

—अनघ

लीला

प्रत्येक चरण के अन्त मे जगण रहता है।

यथा

अवध पुरी भाग भारु। दसरथ गृह छबि अगारु।
राजत जहँ विस्वरूप। 'लीला' तनु धरि अनूप॥

—'दास'

* युद्ध विषयक रचनाएँ इस छन्द मे विशेष रुचिकर जँचती है।

ताण्डव

प्रत्येक चरण के आदि मे एक लघु और अन्त मे एक लघु रहता है —

रचै ताण्डव सुख रासि। ललित भावहि परकासि।
सिवासंकर कैलास। सदा पूजै जन आस॥

—भानु

१३ मात्राओं के छन्द—३७७

चन्द्रमणि (अन्य नाम उल्लाला‡)

चरण के अन्त मे गुरु लघु का कोई नियम नहीं है —

(१)

भजहु सदा राधारमन। गावहु गुन गन ह्वै मगन।
वृन्दावन वासी बनौ। लहौ नित्त आनँद घनौ॥

(२)

काव्य कहा बिन रुचिर मति। मति सु कहा बिनही बिरति।
बिरतिउ लाल गुपाल भल। चरननि होय जु रति अचल।

—भानु

चण्डिका (अन्य नाम—धरणी)

प्रत्येक चरण मे आठ, पाँच पर विराम और अन्त मे रगण रहता है :—

आदि-शक्ति-रण-चण्डिके। भक्त-अटल-प्रण मण्डिके।
नव-जीवन-संचालिका। जय-जग-जननी कालिका।

—मान

‡ दो दल वाला उल्लाला मात्रिक अर्द्ध-सम छन्दो मे देखो।

१४ मात्राओं के छन्द—६१०

प्रतिभा (अन्य नाम— विजात)

प्रत्येक चरण के आदि मे लघु और चरणान्त मे गुरु रहे तो अच्छा है :—

चरित है मूल्य जीवन का। बचन प्रतिबिम्ब है मन का।
सुयश है आयु सज्जन की। सुजनता है प्रभा धन की।।

—रामनरेश त्रिपाठी

स्वरूपी

चरणान्त मे गुरु लघु का कोई नियम नहीं है। चरण के आदि मे द्विकल होना चाहिये —

श्री मनमोहन की मूरति। है तुव सनेह की सूरति।
मैं निज मन यह अनुरूपी। तू मोहन प्रेम 'स्वरूपी' ।।

— दास

सखी

चरणान्त मे यगण या मगण रहता है —

सब घर घर ते ब्रज नारी। दधि गोरस बेचन हारी।
सब जूथ जूथ मिलि चीह्ना। जमुना तट मारग लीह्ना ।।

—दान लीला

मनमोहन।

प्रत्येक चरण में आठ और छ पर विराम और अंत में नगण रहता है :—

रखते है जो सदय हृदय । मनको समता-मय निरभय ।
परहित मे दे तन-मन-धन । जीवन-मुकत वही सतजन ॥

—मान

हाकलि*

प्रत्येक चरण मे प्राय तीन चौकल अन्त मे एक गुरु ।

(१)

मै भी कहती हूँ जाओ । लक्ष्मण को भी अपनाओ।
धैर्य सहित सब कुछ सहना । दोनो सिह-सदृश रहना ॥

—साकेत

(२)

बनकर तुम्ही उजड़ते हो । बनकर स्वयं बिगड़ते हो ।
मानो, अब यो पिछडो मत । उठो विश्व से बिछडो मत‡ ॥

—वैतालिक

---

* किसी किसी का मत है कि यदि हाकलि के चारो चरणो मे तीन-तीन चौकल न पडें तो उसे 'मानव' छन्द समझना चाहिये । उदाहरण के दूसरे छन्द का चौथा चरण ऐसा ही है कि उसके आदि मे चौकल नहीं पडता ।

‡ हिन्दी में शब्द के अन्त्य अकारान्त वर्ण को प्राय हलवत् ही उच्चारण करते हैं । 'मत' को 'मत्' ऐसा उच्चारण करने पर 'म' का गुरुवत उच्चारण हो जाता है ।

मनोरम

प्रत्येक चरण के आदि मे द्विकल तथा अन्त मे यगण अथवा भगण रहता है —

लोक-हित करना सदाई। बस यही सच्ची कमाई।
पूज गुरु-गोविंद को नित।'मान' है जो चाहता हित॥

— मान

मोहन (अन्यनाम-सरस)

प्रत्येक चरण मे द्विकल, त्रिकल, जगण रहित चौकल, पच-कल का क्रम और तुकान्त में नगण रहता है।

यहु पाइ कै नर तन रतन।
कर ले अरे भगवत भजन।
जो चाहता भव-नद तरन।
गुरुदेव की तो ले सरन॥

सुलक्षण (अन्यनाम-संयुक्ता, मधुमालती)

मोहन के चरणान्त में रगण आने पर सुलक्षण हो जाता है।

(१)

जिसमें न कोई पाप हो। हिंसा असत्य न ताप हो।
वह काम करने में कहीं। उनको घृणा होती नहीं॥

(२)

वे सब स्वयं दुख झेल कर। जी जान पर भी खेलकर†॥
करते सभी का हैं भला। कोई गया उनसे छला?

—अनघ।

---

† हिन्दी शब्द का अन्त्य अकारान्त वर्ण हलवत् पढा जाता है।

पन्द्रह मात्राओं के छन्द—९८७

उज्वला

प्रति पद मे दस और पाँच पर विराम, अन्त मे रगण ।

धवल रजत परबत हो तबै । अरु पयनिधि को बरनै सबै ॥
तबहि बिमल ही ससि की कला । जब न हुत्यो तो जस उज्जला ॥

—दास

हंसी (अन्य नाम—चौबोला)

प्रत्येक चरण के अन्त मे लघु-गुरु रहता है —

मसक समान रूप कपि धरी । लकहि चलेउ सुमिर नरहरी ॥
नाम लकिनी एक निसिचरी । सोकह चलेसि मोहि निदरी ॥

—रामचरित मानस

चौपई (अन्य नाम—जयकरी)

चरणान्त मे गुरु लघु ।

(१)

चहहु जो साँचो निज कल्यान । तौ सब मिलि भारत सतान ।
जपौ निरंतर एक जबान । हिन्दी हिन्दू हिन्दुस्थान ॥

—प्रतापनारायण मिश्र

(२)

हम चौधरी डोम सरदार । अमल हमारा दोनो पार ।
सब मसान पर हमरा राज । कफन माँगने का है काज ।

—सत्य हरिश्चन्द्र नाटक

(३)

जिनके बल पर खडा समाज। रहती है शुचिता की लाज।
उनका त्राण न करना खेद। है अपना ही मूलोच्छेद।

—अनघ

गोपी

इस छन्द के प्रत्येक चरण मे त्रिकल, द्विकल, छकल और चौकल का क्रम रहता है और चरणान्त मे एक गुरु रहता है —

धरम को चीन्ह अरे भाई। लोक सेवा करि मन लाई।
जनम क्यो व्यर्थ गमावै है। क्यो नही हरि गुन गावै है ॥

—मान

पुनीत

प्रत्येक चरण के आदि मे सम कल के बाद विषम कल तथा अन्त मे तगण रहता है . —

जब तक करे न पूरा काम। तब तकन ले कभी विश्राम।
जो श्रम करें सुनो हे तात ! होते वही बड़े विख्यात।

—मान

१६ मात्राओ के छन्द—१५९७

पादाकुलक

प्रत्येक चरण मे चार चौकलों का क्रम रहता है —

संभु प्रसाद सुमति हिय हुलसी। राम चरित मानस कवि तुलसी ॥
करइ मनोहर मति अनुहारी। सुजन सुचित सुनि लेहु सुधारी ॥

—रामचरित मानस

पादाकुलक के अन्तर्गत —

पद्धरि (अन्य नाम–प्रज्वलय, प्रज्वलिया)

प्रत्येक चरण मे आठ-आठ पर विराम और अन्त मे जगण होता है —

तुम अमल अनत अनादि देव। नहि वेद बखानत सकल भेव।
सब को समान नहि बैर नेह। निज भक्तन कारन धरत देह॥

डिल्ला

प्रत्येक चरण मे आठ-आठ पर विराम और अन्त मे भगण होता है :—

पुनि मन बचन करम रघुनायक। चरण कमल बंदउँ सब लायक॥
राजिव नयन धरे धनु सायक। भगत-विपति-भंजन सुख दायक॥

—रामचरित मानस

अरिल्ल

प्रत्येक चरण के चौकलो मे जगण का निषेध है। अन्त में यगण या दो लघु रहते है —

गुजत मधुकर मुखर मनोहर। मारुत त्रिविधि सदा बहसुन्दर॥
नाना खग बालकन्हि जिआये। बोलत मधुर उड़ात सुहाये॥

—रामचरित मानस

पज्झटिका

प्रत्येक चरण मे दो चौकल फिर एक गुरु तथा एक चौकल फिर एक गुरु का क्रम रहता है। चौकलों मे जगण का निषेध है।

समता रख कर एक भलाई—, करना ही है शुद्ध कमाई ।
दुनियाँ ममता-मोह-मई है । अपना शत्रु नहीं कोई है ॥

मान

उपचित्रा*

प्रत्येक चरण मे दो चौकल फिर एक गुरु तथा एक चौकल फिर एक गुरु का क्रम रहता है। चौकलो मे कम से कम एक जगण अवश्य रहना चाहिये —

कभी न उसको है सुख मिलता । जो चित मे दीनो के खलता ।
रखो न रंचक मित्र विषमता । सब के हित हो सच्ची ममता ॥

—मान

चौपाई § (अन्य नाम—रूपचौपाई)

प्रत्येक चरण के अन्त मे जगण और तगण का निषेध है अर्थात् पदान्त मे गुरु के बाद एक लघु नही आता।

---

*मात्राओ के गुरु-लघु के क्रम से चौपाइयो के अनेक सूक्ष्म भेद किये जा सकते है ।

§ चौपाइयो की रचना मे द्विकल और त्रिकल वाले शब्दो का ही प्रयोग करना चाहिये । त्रिकल (विषम) वर्ण समूह के बाद त्रिकल वर्ण समूह ही रखना चाहिये समकल (द्विकल या चौकल) नही । जिससे चौपाइयो की गति न बिगडने पावे । हाँ, त्रिकल के बाद जगण (चौकल) रखा जा सकता है क्योकि उसके आदि के दो वर्ण

(१)

नहि सतसंग जोगु जपु जागा। नहि दृढ कमल चरन अनुरागा॥
एक बानि करुना निधान की। सो प्रिय जाके गति न आनकी॥
—रामचरित मानस

'त्रिकल' का काम दे देते है—यथा 'हृदय विचारि सभु प्रभुताई' मे 'हृदय' त्रिकल के बाद 'विचारि' जगण (चौकल) के आदि के दो वर्ण 'विचा' मे त्रिकल के नियम का पालन हो गया।

समकलवाली चौपाइयाँ पढने मे और सुनने मे भली लगती हैं। चौपाई के दो चरण अर्द्धाली कहलाते है।

पादाकुलक और चौपाई मे केवल इतना अतर है कि पादाकुलक के प्रत्येक चरण मे चार चौकलो का होना आवश्यक है और चौपाइयो मे होने न होने का नियम नही है। पादाकुलक वास्तव मे चौपाई का ही एक विशेष रूप है। प्राय पादाकुलक और चौपाइयो का समिलित प्रयोग पाया जाता है। यथा—

'उमा राम सुभाव जेहि जाना। ताहि भजनु तजि भाव न आना॥
सरन गये प्रभु ताहु न त्यागा। बिस्व-द्रोह-कृत अघ जेहि लागा॥

इसके दूसरे और तीसरे चरण मे पादाकुलक और पहले-चौथे मे चौपाई के चरण है। फिर भी चारो चरण मिलकर चौपाई कहलाते हैं। तात्पर्य यह है कि 'पादाकुलक' को चौपाई कह सकते है पर चौपाई को पादाकुलक नही कह सकते।

(२)

देहु भगति रघुपति अति पावनि। त्रिविधि ताप-भव-दाप-नसावनि ॥
प्रनत काम सुर धेनु कल्पतरु। होइ प्रसन्न दीजइ प्रभु यह बरु ॥
—रामचरित मानस

इन्दुकला* (अन्य नाम-पदपादाकुलक)

प्रत्येक चरण के आदि मे एक द्विकल, इसके पश्चात् क्रमशः अन्त तक प्राय द्विकल रहते है। जहॉ द्विकल के बाद त्रिकल आ जाता है वहॉ आगे एक त्रिकल और रख देते हैं।

तुलसी, यह दास कृतार्थ तभी। मुँह मे हो चाहे स्वर्ण न भी।
पर एक तुम्हारा पत्र रहे। जो निज मानस कवि कथा कहे ॥
—साकेत

प्रसाद (अन्य नाम-शृंगार)

प्रत्येक चरण के आदि मे त्रिकल (III, SI, IS) इसके पश्चात् द्विकल तथा अन्त मे गुरु-लघु या लघु-गुरु।

---

* इन्दुकला और चौपाई की गति मे अतर है। इस गति के अतर का कारण मात्रा-क्रम है। चौपाई के आदि मे सम कल के बाद सम कल और विषम कल के बाद विषम कल रहते है। परन्तु इन्दुकला के आदि मे सदा द्विकल रहता है और शेष चौदह मात्राओ मे द्विकल तो आ सकते हैं पर अत तक चौकल नही आ सकते। चरण मे जहॉ द्विकल के बाद त्रिकल आता है वहॉ गति ठीक रखने के लिये एक त्रिकल और रखना पडता है।

(१)

धरा पर धर्मादर्श-निकेत, धन्य है स्वर्ग-सदृश साकेत।
बढ़े क्यो आज न हर्षोद्रेक ? राम का कल होगा अभिषेक ॥

(२)

देव ! वे कुंजे उजडी पडी। और वह कोकिल उड़ ही गई।
हटाई हमने लाखों बार। किन्तु वे घड़ियाँ जुड़ ही गई॥

सिंह विलोकित*

इस छन्द मे प्रत्येक चरण के कुछ अन्त्यवर्ण क्रमश उसके आगेवाले चरण के आदि मे आ जाते है।

जब सखि मोहन गमनत बनको।
बन को बरनत गिरि उर छनको॥
छन को तकि न जात ब्रज तन को।
तनको रहै सँभार न तन को॥

—समनेस

१७ मात्राओं के छन्द–२५८४

धीर

प्रत्येक चरण मे द्विकल, त्रिकल, चौकल, त्रिकल, सगण या दो गुरु और एक लघु का क्रम रहता है। चौकलो मे जगण का निषेध है।

---

*सिंह का स्वभाव है कि वह अपनी गर्दन मोड-मोड दायें-बायें देखता हुआ चलता है। इस छन्द का रचना-क्रम सिंह विलोकित ढग का है। प्रत्येक चरण के दाहिनी ओर के कुछ अन्त्य वर्ण बाई ओर दूसरे चरण के आदि में चले जाते है।

बत्स रे आजा जुड़ा यह अंक। भानुकुल के निष्कलंक मयंक।
मिल गया मेरा मुझे तू राम। तू वही है भिन्न केवल नाम॥

—साकेत

मधुप (अन्य नाम—चन्द्र)

प्रत्येक चरण के आदि मे त्रिकल और द्विकल फिर क्रमश द्विकल के आगे द्विकल और त्रिकल के आगे त्रिकल, का क्रम और अन्त मे कम से कम एक गुरु रहता है —

(१)

चाहता हूँ कि मनुष्य रहूँ मैं। और अपने को वही कहूँ मैं।
बनूँ बस मनुष्यता का मानी। यही हो मेरी एक निशानी॥

(२)

प्रकृति है गीली मिट्टी ऐसी। पका लो गढ़कर चाहे जैसी।
धूम से तरु भी तो जलते हैं। पथिक ऐसे मे भी चलते हैं।

(३)

स्वयं मैं नही जानता क्या हूँ। मानता आत्मा की आज्ञा हूँ।
समय-भागी हूँ नहीं समय हूँ। नही मारुत, पर मारुत-मय हूँ॥

—अनघ

(४)

चले फिर रघुवर मा से मिलने। बढ़ाया घन सा प्राणानिल ने।
चले लक्ष्मण भी पीछे ऐसे। भाद्र के पीछे आश्विन जैसे॥

—साकेत

१८ मात्राओं के छन्द—४१८१

गुरुपाद

चौपाई के आदि मे द्विकल (णगण) बढ़ा देने से इस छन्द का चरण बन जाता है। पदान्त मे तगण और जगण का निषेध है —

(१)

जब रहेउ एक दिन अवध अधारा।
तब समुझत मन दुख भयेउ अपारा॥
हा कारन कवन नाथ नहि आयेउ।
प्रभु जानि कुटिल किधौ मोहि बिसरायेउ॥

माली

प्रत्येक चरण के आदि मे द्विकल, फिर क्रमश जगण रहित चौकल और अन्त मे कम से कम एक गुरु —

मुरली अधर मुकुट सिर, दीन्हे है।
कटि पटपीत लकुट कर, लीन्हे है।
को जाने कब आयो, सुनि आली।
उर ते कढ़त न केहूँ बन माली॥

—दास

१९ मात्राओं के छन्द—६७६५

रति लेखा

प्रत्येक चरण के आदि मे सगण फिर ग्यारह लघु वर्ण और अन्त मे दो गुरुहोतेहै —

सब देव अरु मुनिन मन तुलनि तोल्यो।
तब 'दास' दृढ़ वचन यह प्रगट बोल्यो।
इक ओर महि सफल जप तप बिसेखो।
इक ओर सियपति-चरन बिरति लेखो॥

—दास

२० मात्राओ के छन्द—१०९४६

हसगति

ग्यारह और नव मात्राओ पर विराम होता है। पदान्त में गुरु लघु का कोई नियम नही है —

जगत ईस नर भूप, सिया ढिग सोहत।
गर बैजन्तीमाल, सुजन मन मोहत॥
चरन चारु की सोभा निरखि पुरन्दर।
मगन नयन है गये, प्रमुद कर सुन्दर॥

—गदाधर

(२)

शंसित योगी जटिल सुभिक्षुक मुंडी।
वर्णि तपस्वी यती, साधु मुनि दंडी।
व्रती तापसी जपी ऋषी निर्वानी।
संन्यासी संयमी, अष्टदश ज्ञानी॥

—विष्णु विलास

२१ मात्राओ के छन्द--१७७११

प्लवंगम (अन्यनाम—प्लवंगा, चान्द्रायण, अरल)

प्रत्येक चरण मे छकल, द्विकल, दो त्रिकल जगण रहित चौकल और लघु गुरु का क्रम रहता है —

(१)

मेरा प्रिय हिंडोल निकुंजागार तू।
जीवन-सागर, भाव-रत्न-भांडार तू॥
मै हूॅ तेरा सुमन चढ़ूॅ-सरसूॅ कही!
मैं हूॅ तेरा जलद, बढ़ूॅ-बरसूॅ कही॥

(२)

जय गंगे, आनंद-तरंगे, कलरवे,
अमल अंचले, पुण्य जले दिवसम्भवे!
सरस रहे यह भरत-भूमि तुमसे सदा।
हम सब की तुम एक चलाचल सम्पदा।

—साकेत

२२ मात्राओं के छन्द-२८६५७

लावनी (अन्य नाम—राधिका)

प्रत्येक चरण मे तेरह और नव मात्राओ पर विराम और चरणान्त मे प्राय. मगण रहता है '—

(१)

तरु-तले विराजे हुए,—शिला के ऊपर,
कुछ टिके,—धनुष की कोटि टेक कर भू पर

निज लक्ष-सिद्धि-सी, तनिक घूम कर तिरछे,
जो सींच रही थी पर्ण कुटी के बिरछे,

(२)

उन सीता को, निज मूर्तिमती माया को,
प्रणयप्राणा को और कान्तकाया को,
यों देख रहे थे राम अटल अनुरागी,
योगी के आगे अलख-ज्योति ज्यों जागी।

—साकेत

(३)

सबने सब दोष विसार दिव्य गुण धारे।
तज बैर निरंतर प्रेम-प्रसंग प्रचारे।
चेतन जीवित ऋषि देव पितर सत्कारे।
कर दिये दूर खल खर्व कुमति के मारे॥

—नाथूराम 'शंकर' शर्मा

कुण्डल

प्रत्येक चरण मे बारह और दस मात्राओ पर विराम और चरणान्त मे दो गुरु होते हैं:—

तू दयालु दीन हौ तु दानि हौ भिखारी।
हौ प्रसिद्ध पातकी, तु पाप पुंज-हारी॥
नाथ तू अनाथ को, अनाथ कौन मो सो।
मो समान आरत नहि, आरतहर तोसो॥
ब्रह्म तू हौ जीव तू, ठाकुर हौ चेरो।
तात मात गुरु सखा तु, सब विधि हित मेरो॥

तोहि मोहि नाते अनेक, मानिये जु भावै।
ज्यो त्यो तुलसी कृपालु, चरन सरन पावै॥

—विनय-पत्रिका

उड़ियाना*

कुण्डल के पदान्त मे केवल एक गुरु रहने पर उड़ियाना छन्द हो जाता है —

ठुमकि चलत रामचन्द्र बाजत पैजनियाँ।
धाय मातु गोद लेति दशरथ की रनियाँ॥
तन मन धन वारि मृदुल बोलती बचनियाँ।
कमल बदन बोल मधुर, मंद सी हँसनियाँ॥

—गोस्वामी तुलसीदास

२३ मात्राओं के छन्द—४६३६८

हीरक (अन्य नाम—हीर)

इस छन्द के प्रत्येक चरण मे टगण की धर्म संज्ञा (ऽ।।।।) की तीन बार आवृत्ति होती है और अन्त मे रगण रहता है —

दण्डक बन पावन वर ध्यावन हर युक्त के।
विप्र घरन भील तरन गीध करन मुक्त के॥
राम चरन ताक सरन वाकवरन मान के।
दोषदमन सोकसमन मोक्षभवन आनके।

—हरदेव

*कुण्डल और उडियाना को गाने वाले प्राय प्रभाती राग मे गाते हैं।

२४ मात्राओं के छन्द-७५०२५

रोला*

इस छन्द के प्रत्येक चरण मे (छकल, द्विकल, और त्रिकल के क्रम से) ग्यारह तथा (त्रिकल, द्विकल, छकल और द्विकल के क्रम से) तेरह के विराम से चौबीस मात्राएं होती है। चरणान्त मे गुरु लघु का कोई नियम नही है। फिर भी दो गुरु रखना अच्छा है —

---

* अधिकाश प्रमुख कवियों ने रोला की जैसी रचना की है उससे स्पष्ट होता है कि बहुमत रोला की इसी परिभाषा के पक्ष मे है कि "रोला छन्द के एक चरण मे ग्यारह मात्राओ पर यति हो और फिर तेरह पर पदान्त।" इसी तरह "सोरठा" छन्द का पहला और तीसरा चरण ग्यारह मात्राओ का होता है तथा दूसरा और चौथा तेरह का, यह सर्व-सम्मत परिभाषा है। फिर रोला छन्द के दो चरणो मे और सोरठे के चार चरणो मे अन्तर क्या रहा? पिगल-ग्रंथो मे इस प्रश्न पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया है। प्रत्युत सोरठे की परिभाषा "दोहा उलटे सोरठा" कह कर दोहे के गले वृथा ही बाँध रखी है। रोला छन्द के पदान्त की तेरह मात्राओ मे और सोरठे के दूसरे-चौथे चरणो मे की तेरह मात्राओ के टगणादि की स्थिति मे अन्तर है। रोला मे क्रमश त्रिकल, द्विकल, छकल, और द्विकल समूहो पर गति-विराम होना चाहिए। सोरठे मे क्रमश छकल, चौकल, एककल और द्विकल मात्रा समूहो पर गति विराम होना चाहिये। सोरठे के पहले और तीसरे

(१)

धर्म तुम्हारी ओर तुम्हे फिर किस का भय है।
६ २ ८ ३ २ ६ २
जीवन मे ही नही, मरण मे भी निज जय है।
मरे भले ही अमर, भोगते है जी जी कर,
मर मर कर नर अमर, कीर्त्तनामृत पी पी कर।

—साकेत

(२)

हे देवो, यह नियम सृष्टि मे सदा अटल है।
रह सकता है वही सुरक्षित, जिस मे बल है।
निर्बल का है नही जगत मे कहीं ठिकाना।
रक्षा साधन उसे प्राप्त हो चाहे नाना।

—कामताप्रसाद गुरु

चरणो का अन्त नंद (गुरु-लघु) से होना जरूरी है। रोला के प्रथम यन्यन्त मे नन्द हो तो बहुत अच्छा होता है, परन्तु आवश्यक नही है।

दोहे से सोरठे का यही सबध है कि हर सोरठे का उलटा दोहा हो सकता है परन्तु हर दोहे का उलटा सोरठा नही हो सकता, क्योंकि दोहे के पहले और तीसरे चरण सदा तेरह मात्राओ के ही नही होते। बारह मात्राओं के भी होते हैं। इसीलिये "दोहा उलटे सोरठा" कहना उलटी बात है। "सोरठा उलटे दोहा" कहना चाहिये।

—रामदास गौड

(३)

मन प्रसन्न थिर सौम्य †, तुम्हे क्षण एक न भूले,
प्रभु का रहे प्रकाश, कमल सा नित नित फूले।
माने सदा विभूति, तुम्हारी सचराचर को,
तुम्हे जान सर्वत्र न समझे कुछ भी डर को॥

—रामदास गौड

शोभन (अन्य नाम—सिंहिका)

चौदह, दस पर विराम और पदान्त मे जगण।

देखु गुरु की ओर कवि तू, भरत बंधु, निषाद।
चले जावै चढ़े परबत, मन न नेकु विषाद॥
स्वेद-बुंद लखात मस्तक, हॅफत पॉव बढ़ाव।
सिद्ध कारज दिखत जब जन, बढ़त मन त्यहि चाव॥

—शिवरत्न शुक्ल

रूपमाला (अन्य नाम – रामगीतिका, मदन)

चौदह, दस पर विराम और पदान्त मे गुरुलघु।

वेद जिसको 'नेति' कह कर हो रहे है मौन।
मूढ़ ऐसे राम का तू, नाम रटता क्यो न?
भाव के भगवान भूखे, चाहते क्या और?
पाय ऐसे नाथ को मत, पड़ पराई पौर।

—मान

† यदि रोला की ग्यारहवी मात्रा चारो चरणों मे लघु रहे तो कोई कोई उसे काव्य छन्द कहते हैं।

२५ मात्राओं के छन्द—१२१३९३

गगनाङ्गना

सोलह, नव पर विराम, और अन्त मे रगण रहता है —

निरखि सौतिजन हृदयनि रहै गरउ को ढंग ना।
पटतर हित सतकवि के मन को, मिटै फलंगना ॥
बदन उघारि दुलहिया छनकु बैठि करि अंगना।
चंद पराजय साजहि लजित करहि गगनांगना ॥

मुक्तामणि

प्रत्येक चरण मे तेरह, बारह पर विराम और अन्त मे दो गुरु होते है :—

कुण्डल ललित कपोल पर, सुछबि देत है ऐसे।
घन मे चपला दमकि अति, लग नीकी दुति जैसे ॥
चन्दन खौर बिराज शुचि, मनु लछमी अति राजै।
सब आभा तिहुँ लोक की, मुख के आगे लाज ॥

—नायक

२६ मात्राओं के छन्द—१९६४१८

विष्णुपद

प्रत्येक चरण मे सोलह, दस पर विराम, चरणान्त मे गुरु।

मेरे कुँवर कान्ह बिनु सब कछु, वैसहि धरयो रहै।
को उठि प्रात होत ल माखन, को कर नेति गहै ॥

चित्त-वृत्ति उदार, भाव-विशाल, मित्र जहान हो।
धीरता, गंभीरता, आदर्श उच्च-महान हो।
भीष्म-अर्जुन के सदृश कर्तव्य-पालन- ज्ञान हो।
सत्य-पथ से डिग न पावे वह हृदय बलवान हो॥

—मान

२७ मात्राओ के छन्द—३१७८११

हरिपद* (अन्य नाम—कबीर, समुन्दर—सरसी)

सोलह, ग्यारह पर विराम चरणान्त मे गुरु लघु।

(१)

काम-क्रोध-मद-लोभ-मोह की, पँचरंगी कर दूर।
एक रंग तन-मन-वाणी मे, भर ले तू भरपूर॥
प्रेम प्रसार न भूल भलाई, बैर बिरोध बिसार।
भक्ति-भाव से भज 'शंकर' को, भक्ति दया उर धार॥

—नाथूराम 'शंकर' शर्मा

---

*इसी छन्द के दो चरणो के साथ एक और टुक्डा जोड कर लोग होली के कबीर गाते हैं —

चाल ढाल अपनी सब छोडी, डटे साहिबी ठाट।
गिटपिट बाबू देहातिन मे समझे आप कों लाट।
खूब अब रँग लाई अँगरेजी है।

(२)

डूब बची लक्ष्मी पानी में सती आग में पैठ।*
जिये उर्मिला करे प्रतीक्षा सहे सभी घर बैठ॥
दहन दिया तो भला सहन क्या होगा तुझे अदेय।
प्रभु की ही इच्छा पूरी हो जिस में सब का श्रेय॥

—साकेत

२८ मात्राओं के छन्द—५१४२२९

सार (अन्य नाम—दोवै, ललित पद, नरेन्द्र)

(१)

सोलह, बारह पर विराम, अन्त मे प्राय दो गुरु।
हम है वाहि पवन की बानी जो इत उत नित धावै,
हा हा करति विराम हेतु पै कतहुँ विराम न पावै।
जैसो पवन गुनौ वैसोई जीवन प्राणिन केरो,
हाहाकार उसासन को है झंझावात घनेरो॥

—रामचन्द्र शुक्ल

(२)

तन तज देना, धर्म न तजना, यही वीर गौरव है।
धर्म-कर्म से हीन मनुज जीवन जग मे रौरव है।

---

*कोई कोई रीतिकार इस छन्द के दो चरणों के दो दल मानकर 'हरिपद' कहते हैं।

जीवन-पथ पर बढ़, कर क्षण मे छिन्न मोह के बंधन।
फड़क उठे फिर दृढ़ शरीर, फिर हो प्राणो मे स्पन्दन ॥
—प्रवासीलाल वर्मा

हरिगीतिका

सोलह, बारह पर विराम, चरणान्त मे लघु गुरु रहता है पर रगण प्राय कर्ण-मधुर होता है। मात्रा-क्रम से पाँचवी, बारहवी, उन्नीसवी तथा छब्बीसवी मात्राएँ लघु रहती है —

मन जाहि राचेउ मिलिहि सो बरु सहज सुंदर साँवरो।
करुनानिधानु सुजानु सीलु सनेहु जानत रावरो ॥
एहि भाँति गौरि असीस सुनि सिय सहित हिय हरषित अली।
तुलसी भवानिहि पूजि पुनि पुनि मुदित मन मदिर चली ॥
—रामचरित मानस

शुद्धगा (अन्य नाम-विधाता, वेतवै)

चौदह, चौदह पर विराम, इसके चरणान्त मे प्रायः मगण रहता है। मात्रा-क्रम से इसकी पहली, आठवी और पन्द्रहवीं मात्राएं लघु रहती है .—

जतीले जाति के सारे प्रबन्धो को टटोलेगे।
जनो को सत्य सत्ता की तुला से ठीक तोलेगे ॥
बनेगे न्याय के नेगी खलो की पोल खोलेगे।
करेगे प्रेम की पूजा रसीले बोल बोलेगे ॥
—नाथूराम शंकर शर्मा,

झूलनाद

इस छन्द का प्रत्येक चरण चौदह मात्रा के स्वरूपी छन्द का दूना होता है —

यह ज्योति नही ज्वाला की है मनोमोहिनी माया,
रजनी रवि की अनुगामिनि तम है प्रकाश की छाया।
क्षण-भंगुरता ही जीवन की है सच्ची परिभाषा,
अनुभूति निराशा है यदि जीवन विभूति है आशा ॥

— बालकृष्ण राव

यह रात मौन व्रत धारे, ओढ़े यह चादर काली,
लक्षावधि झिलमिल आँखें क्यो दिखा रही मतवाली !
अंतर तर का अँधियारा यह फैल पडा भूतल मे,
सब .. . छाया बन-उपवन मे जल-थल मे ॥

—नवीन

२९ मात्राओं के छंद ८३२०४०,

मरहटा

इस छन्द के प्रत्येक चरण मे दस आठ और ग्यारह पर विराम चरणान्त मे गुरु लघु रहता है —

मन दया-मया-मय, शुचि-समता-मय, रख दीनो का ध्यान।
मुख से निकले बच पाले सच-सच, हो सम्मान कहाँ न !
वश मे रख मन को, भूल न पन को, कर भगवत-गुन-गान।
स्वाहा हो सर्वस रह मत परबस, रख मानी बन 'मान' ॥

—मान

३० मात्राओ के छन्द—१३४६२६९

चवपैया

दस, आठ और बारह पर विराम, चरणान्त मे एक गुरु रहता है। यो तो कई गुरु रह सकते है पर एक सगण और एक गुरु कर्ण-मधुर होता है:—

(१)

सिर मोर पखौना, बनो सुठौना, मंजु मुरलिया बाजै,
अति छूटी अलके, मुख पर झलके, तिन पर गोरज भ्राजै।
गौवन के पाछे, कछनी काछे, हाथ लकुटिया सोहै,
चलि निरखो माई, कुँअर कन्हाई, मन्मथ को मन मोहै॥

—हरदेव

(२)

भये प्रगट कृपाला, परम दयाला, कौसल्या-हितकारी।
हरषित महतारी, मुनि-मनहारी, अद्भुत रूप बिचारी॥
लोचन अभिरामं, तनु घनस्यामं, निज आयुध भुज चारी।
भूषन बनमाला, नयन बिसाला सोभा सिंधु खरारी॥

—रामचरित मानस

चौबोला

सोलह और चौदह पर विराम, चरण के अन्त मे लघु गुरु।

(१)

बायी ओर धनुष की शोभा, दायी ओर निषंग छटा,
बाम पाणि मे प्रत्यंचा है, पर दक्षिण मे एक जटा।

आठ मास चातक जीता है, अपने घन का ध्यान किये;
आशा कर निज घनश्याम की, हमने बरसो बिता दिये।

(२)

दीन-भाव से कहा उन्होने—बहन, एक दिन बहुत नही;
बरसो निराहार रहकर ये आँखे क्या मर गई कही।
विवश लौट आई रोकर मै, लाई हूँ नैवेद्य यहाँ।
आता हूँ मै—कहकर देवर, गये उन्ही के पास वहाँ॥

—साकेत

(३)

हृदय-सिधु की किस भँवरी मे नाच रहे हो जीवन धन ?*
जीवन की नैया को खेते, बहक रहे किस ओर सजन ?
झीनी-झीनी झाँकी-सी कुछ, आँख मिचौनी सी करती;
तेरी सुछबि छबीली 'नटवर' झाँक रही लजती डरती।

—'नटवर'

ताटंक

सोलह और चौदह पर विराम, चरणान्त मे मगण।

ग्रास हुआ आकाश, भूमि क्या, बचा कौन अँधियारे से ?
फूट उसी के तनु से निकले तारे कच्चे पारे-से!
विकच व्योम-विटपी को मानो मृदुल बयार हिलाती है,
अंचल भर भर कर मुक्ता-फल खाती और खिलाती है।

---

*हिन्दी मे शब्द के अन्त का अकारान्त वर्ण हलवत् पढा जाता है।

लावनी ताटंक का ही एक भेद है। जिस ताटंक के चरणान्त मे लघु गुरु का कोई नियम न हो उसे लावनी समझना चाहिये। ख्याल गानेवाले बाईस मात्रावाली लावनी से पृथक् करने के लिये इसे लॅगडी लावनी कहते है —

(१)

एक न मैं होता तो भव की क्या असंख्यता घट जाती ?
छाती नही फटी यदि मेरी तो धरती ही फट जाती ?
हाय! नाथ, धरती फट जाती हम तुम कही समा जाते
तो हम दोनो किसी तिमिर मे रहकर कितना सुख पाते

(२)

नाथ, न तुम होते तो यह व्रत कौन निभाता तुम्ही कहो ?
उसे राज्य से भी महार्ह धन देता आकर कौन अहो ?
मनुष्यत्व का सत्व-तत्व यों किसने समझा-बूझा है ?
सुख को लात मारकर तुमसा कौन दुखो से जूझा है ?

—साकेत

३१ मात्राओ के छन्द—२१७८३०६

वीर (अन्यनाम—आल्हा छन्द *)

सोलह और पन्द्रह पर विराम, चरणान्त मे गुरु लघु रहता है। एक तरह से चौपाई और चौपई मिलकर वीर छन्द बनता है:—

---

* पहले यह छन्द वीररस मे ही प्रयुक्त होता था। वीररस का छन्द होने से ही आल्हा छन्द इसका नाम भी पडा है। अब दूसरे भावो को भी इस छन्द मे व्यक्त करने लगे हैं।

(१)

राजा हमरे भये कलजुगहा जयचँद और पिथौराराय।
लरि लरि आपुस मे चापर भये मरिगे हमे गुलाम बनाय।
धन बल धरम करम हिन्दुन के बंटाढार भये एक साथ।
राज छुटा अपने हाथे से 'भारत-माता' भई अनाथ॥

—रामनरेश त्रिपाठी

(२)

मानस की फेनिल-लहरो पर किस छबि की किरणे अज्ञात,
स्वर्ण-वर्ण मे लिखती अविदित तारक-लोकों की शुचि बात ?
अलि ? किन जन्मो की सिञ्चित-सुधि बजा सुप्त तंत्री के तार,
नयन-नलिन मे बँधी मधुप-सी करती मर्म मधुर गुंजार।

—सुमित्रानन्दन पंत

३२ मात्राओं के छन्द ३५२४५७८

त्रिभंगी

प्रत्येक चरण मे दस, आठ, आठ, और छ. मात्राओ पर विराम, चरणान्त मे गुरु रहता है। इसके चौकलो मे जगण वर्जित है :—

(१)

परसत पदपावन सोक नसावन प्रगट भई तपपुंज सही।
देखत रघुनायक जन-सुख-दायक सनमुख होइ कर जोरि रही॥
अति प्रेम अधीरा पुलक सरीरा मुख नहि आवइ बचन कही।
अतिसय बड़भागी चरनन्हि लागी जुगल नयन जलधार बही॥

—राम चरित मानस

(२)

बहु श्रृंगे जाकी, मुकट प्रभाकी, नील घटा की, दुति जीते।
सीतल जल वारे, श्रवत अपारे, झरना भारे, लहिरीते ॥
द्रुम पुंज नवेली, जिटी सुहेली, पहुपनि मेली, थिर थहरे।
मकरंद बटोरे, जहँ चहुँ ओरे, झमकि झकोरे, मृदु फहरे ॥

—मालती माधव नाटक,

रूपसवैया

इस छन्द का प्रत्येक चरण चौपाई का दूना होता है .—

(१)

दुख से दग्ध ताप से पीड़ित, चिन्ता से मूर्च्छित मन से कृश।*
श्रम से शिथिल मृत्यु से शंकित, विभ्रम-वश कर पान विषय-विष ॥
जग-प्रपच की घोर दुपहरी,-मे रे पथिक प्यास मे विह्वल!
भक्ति-नदी मे क्यो न नहाकर, कर लेता है जीवन-शीतल ॥

—स्वप्न

(२)

शेष हुआ जाड़े का मौसम, आया है अब समय बसंती।
मगन हुए सारे नर नारी, लता, वृक्ष, पशु, पक्षी कोमल॥
सारी दुनिया मस्त हुई है, मानो सब ने छानी गहरी।
हुआ प्रकृति का रूप निराला, आहा क्या अच्छी है शोभा॥

—जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी,

---

* रूप सवैया के चरणान्त में भगण रहने पर कोई कोई उसे समान सवैया कहते हैं।

मराल

इस छन्द का प्रत्येक चरण प्रसाद छन्द के एक चरण का दूना होता है :—

(१)

ऽ।ऽ।। । ऽ।। ऽ।ऽ
हिमालय के आँगन में उसे, प्रथम किरणो का दे उपहार।
उषा ने हँस अभिनंदन किया, और पहनाया हीरक-हार।
जगे हम लगे जगाने विश्व, लोक मे फैला फिर आलोक।
व्योम-तम-पुंज हुआ तब नाश, अखिल संसृति हो उठी अशोक॥

—जयशंकर प्रसाद

(२)

रचाया था हिल-मिल कर रास, रात परियो ने हो बेहोश।
हार मोती का टूटा गिरा, आप क्यो कहते उसको ओस।
देख ऊषा का राग-सुहाग, उठ चली रजनी भरकर रोष।
चू पड़े नयनो से कुछ बूँद, लोग भ्रम से कहते हैं ओस॥

—बेनीपुरी

(३)

प्रतिज्ञा करि राखी युग मित्र, परस्पर व्याहन निज संतान,
निरंतर सहृदय सरल पवित्र, दिवाबत ताको सुधि मतिवान।
चारु सच्चरित बुद्धि अभिराम, असाधारन गुन मंगल मूल,
पठइ सुत कीन्हो समुचित काम, करन सबंध सुदृढ़ अनुकूल॥

—मालती माधव नाटक

मत्तसवैया

इसका चरण इन्दुकला के एक चरण का दूना होता है।

विचलित हो अमल न मौन रहे निष्ठुर श्रृंगार उतरता हो ।
क्रन्दन, कम्पन, न पुकार बने निज साहस पर निर्भरता हो ।
अपनी ज्वाला को आप पिये नव नील कंठ का छाप लिये ।
विश्राम शान्ति को शाप दिये ऊपर, ऊँचे, सब झेल चले ।।

—जयशंकर 'प्रसाद'

दण्डकला, पद्मावती और दुर्मिल

इन छन्दो मे से प्रत्येक के एक-एक चरण मे दस, आठ और चौदह के विराम से बत्तीस मात्राएं होती है। दण्ड कला के चरणान्त मे सगण पद्मावती के चरणान्त मे द गुरु और दुर्मिल के चरणान्त मे सगण और दो गुरु रहते है। चौकलो मे जगण का निषेध है।

दण्डकला

(१)

जय जय नँदनंदा, आनँदकंदा, असुरनिकंदा देव हरे।
जय जय भव-भजन, जन-मन-रजन, नाम लेत खल कोटि तरे।
जय यदुकुल भूषण, दनुजन दूषण, करुणा कर प्रभु टेर सुनो।
जय संत सहायक, सब सुखदायक, दुख दारिद के सीस धुनो ।।

—हरदेव

(२)

फलफूलनि ल्यावै हरिहि सुनावै, है या लायक भोगनिकी ।
अरु सब गुन पूरी, स्वादनि रूरी, हरन अनेकन रोगनिकी ।

हँसि लेहि कृपानिधि लखि योगी सिधि, निदहि अपने योगनकी।
नभ ते सुर चाहै भाग्गु सराहै, बारन दण्डक लोगनकी ॥
—दास

पद्मावती

यद्यपि जग कर्ता, पालक हर्ता, परिपूरण वेदन गाये।
प्रभु तदपि कृपाकरि, मानुस वपु धरि, थल पूँछन हम सन आये।
सुन सुरवर नायक, राक्षस घायक, रक्षहु मुनि जन यश लीजै।
शुभ गोदावरितट, विशद पंचवट, पर्णकुटी प्रभु तहँ कीजै ॥
—भानु

दुर्मिल

जय जय रघुनदन, असुर निकंदन, कुल मंडन यश के धारी।
जन मन सुखकारी, विपिन बिहारी, नारि अहिल्यहिँ सी तारी।
सरनागत आयो, ताहि बचायो, राज विभीषन को दीन्हो।
दसकंध बिदारो, पंथ सुधारो, काज सुरन जन को कीन्हो ॥
—गोस्वामी तुलसीदास

मात्रिक दण्डक

३७ मात्राओ के छन्द

करखा

आठ, बारह, आठ और नव पर विराम, चरणान्त मे यगण।

नमो नरसिह, बलवंत नरसिह प्रभु,
संत हित काज, अवतार धारो।

खंभ ते निकसि, भू हिरनकश्यप पटक,
भटक दै नखन, भट उर बिदारो ।
ब्रह्म रुद्रादि सिर नाय जय जय कहत,
भक्त प्रह्लाद, निज गोद लीनो ।
प्रीति सो चाटि, दै राज सुख साज सब,
नरायनदास, वर अभय दीनो ॥

—छन्द प्रभाकर

झूलना (२)

दस, दस, दस और सात पर विराम चरणान्त मे यगण ।

जयति खल-खंडिनी, चंड-मुख-मर्दिनी,
भगत-भय-भंजिनी, दु खहारी ।
दुष्ट-दल-गंजनी, दास-मन-रंजनी,
मोह-मद-हारिनी, ज्ञानकारी ।
देव-मुनि-रच्छिनी, दनुज-कुल-भच्छिनी,
कलुष कलि कल्पिनी, शक्तिभारी ।
दीन-जन-पालिनी, घोर-अघ-घालिनी,
धन्य जगदंब जय, जय तिहारी ॥

—काव्य शिच्छक,

४० मात्राओं के छन्द

विजया

दस, दस, दस, दस पर विराम, चरणान्त मे प्राय' रगण रहता है:—

सित कमलबंससी, सीतकर अंससी,
विमल विधि हंससी, हीरवर हारसी।
सत्य गुन सत्वसी, सांतरस तत्वसी,
ज्ञान गौरवत्वसी, सिद्धि विस्तारसी।
कुंदसी काससी, भारतीबाससी,
सुरतरुनिहारसी, सुधारस सारसी।
गग जल धारसी, रजत के तारसी,
कीर्ति तव विजय की संभु आगारसी॥

—दास

मदनहर

इसके प्रत्येक चरण मे दस, आठ, चौदह, आठ पर विराम, आदि में दो लघु और अन्त मे एक गुरु रहता है .—

सखि लखि यदुराई, छबि अधिकाई,
भाग भलाई जान परै, फल सुकृति करै।
अति कांति सदन मुख, होतहि सन्मुख,
'दास' हिये सुख भूरि भरै, दुख दूरि करै।
छबि मोर पखन की, पीत बसन की,
चारु-भुजन की चित्त अरै, सुधि बुधि बिसरै।
नवनील कलेवर, सजल भुवन धर,
बर इंदीबर छबि निदरै, मद मदन हरै॥

—दास

४४ मात्राओं के छन्द.

विनय

बारह, बारह, बारह और आठ पर विराम, चरणान्त मे प्राय रगण रहता है —

जय जय जग जननि देवि, सुर-नर-मुनि असुर-सेवि,
भक्ति-मुक्ति-दायिनि भय, हरनि कालिका।
मंगल-मुद-सिद्धि-सदनि, पर्वसर्वरीस बदनि,
ताप-तिमिरि तरुन-तरनि-किरनमालिका ॥
वर्म-चर्म कर कृपान, सूलसेल धनुषबान,
धरनि, दलनि दानव-दल, रन-करालिका।
पूतना पिशाच प्रेत, डाकिनि साकिनि समेत,
भूत ग्रह बेताल खग, मृगालि-जालिका ॥

—विनयपत्रिका

४६ मात्राओं के छन्द

चंचरी (अन्यनाम-हरिप्रिया)

बारह, बारह, बारह और दस पर विराम, चरणान्त मे गुरु।

जाको नहि आदि अंत, जननि जनक देव कंत,
रूप रंग रेख रहित, व्यापक जग जोई।
मच्छ कच्छ कोल रूप, वामन नर हरि अनूप,
परसुराम राम कृष्ण, बुद्ध कल्कि सोई।
मधुरिपु माधव मुरारि, करुनामय कैटभारि,

रामादिक नाम जासु, जाहिर बहुतेरो।
कोमल सुभ वास मंजु, सुखमा सुखसील गंज,
ताको पद कंज चित्त चंचरीक मेरो॥
—दास

मात्रिक अर्द्धसम*

चारों चरण मिलकर ३८ मात्राओं के छन्द

बरवै (अन्य नाम—मनोहर, ध्रुवा, कुरंग, नंदा)

इस छन्द के विषम (पहले-तीसरे) चरणो मे बारह और सम (दूसरे-चौथे) चरणो मे सात मात्राए होती है। सम चरणो के अंत मे लघु रहता है। परन्तु जगण श्रुति-मधुर जँचता है —

अवधि शिला का उर पर, था गुरु भार।
तिल तिल काट रही थी, दृग जल धार॥
—साकेत

चारों चरण मिलकर ४२ मात्राओं के छन्द

अति बरवै

इस छन्द के विषम (पहले-तीसरे) चरणो मे बारह और सम (दूसरे-चौथे) चरणो मे नव मात्राएँ होती है।

---

*दोहरी पंक्ति वाले (प्रायः अर्द्धसम) छन्दो की प्रत्येक पंक्ति को दल कहते है। प्रत्येक दल मे पहला चरण विषम और दूसरा सम कहलाता है। अर्द्धसम बरवै, दोहा आदि मे दो दल होते है। इन दोनों के पहले और तीसरे चरण विषम और दूसरे-चोथे सम कहलाते हैं।

समचरणो के अन्त मे लघु रहता है परन्तु जगण श्रुति-मधुर होता है —

कवि-समाज को बिरवा, भल चले लगाइ।
सीचन की सुधि लीजो, कहुँ मुरझि न जाइ॥

—छन्दः प्रभाकर

चारों चरण मिलकर ४८ मात्राओं के छन्द

दोहा ‡

इस छन्द के विषम (पहले-तीसरे) चरणो मे तेरह-और सम (दूसरे-चौथे) चरण मे ग्यारह-मात्राएँ होती है। विषम चरणो के आदि मे जगण का निषेध है, सम चरणो के अन्त मे गुरु लघु वा लघु रहता है :—

(१)

दोषहि को उमहै गहै, गुन न गहै खल लोक।
पिये रुधिर पय ना पिये, लगी पयोधर जोक॥

—महाकवि वृन्द

(२)

रहिमन लाख भली करो, अगुनी अगुन न जाय।
राग सुनत पय पियत हूँ, साँप सहज धरि खाय॥

—रहीम

‡ गोस्वामी तुलसीदास तथा जायसी आदि महाकवियो ने तेईस अथवा तेईस और चौबीस मात्रा के मिलेजुले दलोवाले दोहो का भी प्रयोग किया है, इसी लिये इस छन्द का विशेष वर्णन मात्रामुक्तकों में दिया गया है।

(३)

भरित नेह नव नीर नित, बरसत सुरस अथोर।
जयति अपूरब घन कोऊ, लखि नाचत मन मोर ॥

—भारतेन्दु

सोरठा*

इसके विषम (पहले-तीसरे) चरणो मे ग्यारह और सम (दूसरे-चौथे) चरणो मे तेरह मात्राएँ होती है। विषम चरणों मे तुकान्त मिलते है। तुकान्त मे नंद (गुरु-लघु) का रहना आवश्यक है —

रहिमन मोहि न सुहाय, अमी पियावत मान बिनु।
बरु विष देय बुलाय, मान सहित मरिबो भलो ॥

—रहीम।

चारों चरण मिलकर ५२ मात्राओं के छन्द

दोही

दोहे के तेरह मात्रावाले विषम चरणो के आदि मे द्विकल और बढ़ा देने से दोही छन्द बन जाता है .—

जो मुए, मरत, मरिहैं सकल, घरी पहर के बीच।
है लही न काहू आजुलो, गीधराज की मीच ॥

*सोरठे को उलट देने से दोहा बनता है। रोले की टिप्पणी मे देखो।

चारों चरण मिलकर ५६ मात्राओं के छन्द

उल्लाला

इस छन्द के विषम (पहले-तीसरे) चरणो मे पन्द्रह और सम (दूसरे-चौथे) चरणो मे तेरह मात्राएँ रहती है। इसमे सम चरणो के अंत मे गुरु लघु का कोई नियम नही है —

मत चरचा चालो नीति की, जग का ये ही हाल है।
उपकार भुला देना सहज, आजु काल्हि की चाल है॥

—पूर्ण

(२)

जय प्रसव-ज्ञान-पार्थिव-प्रकट, अज्ञ-प्रजा-मन मुग्ध-कर।
जय जयति प्राथमिक भू-प्रभू, भू-विज्ञान-विदग्ध वर॥

—श्रीधर पाठक

चारों चरण मिलकर ५८ मात्राओं के छन्द

चुलियाला*

चौबीस मात्रा वाले दोहे के सम चरणो के अन्त में जगण और एक लघु के रूप मे, पंचकल बढ़ा देने से चुलियाला छन्द बन जाता है —

(१)

तुम समान दाता नहीं, बिपति बिड़ारनहार उमापति।
तव चरननि मे मान की, बरदा के असवार रहे रति॥

---

*कोई कोई इसे चार पद का मानते हैं। चार पद मानने वाले लोग दोहे के सम चरणो के अन्त मे यगण रखते हैं।

(२)

मेरी बिनती मानि के, हरिजू देखो नेक दया कर।
नाही तुम्हरी जान है दुख हरिबे की टेक सदा कर॥

—भानु

दोनों दल मिलकर ६२ मात्राओं के छन्द

घत्ता

प्रत्येक दल मे दस, आठ और तेरह पर विराम, चरणान्त मे नगण रहता है —

मत मद कर धन का, है कुछ क्षण का, किसी का न अपकार कर।
रख ध्यान बात का, देश, जातिका विश्वनाथ का ध्यान धर॥

—मान

घत्तानन्द

प्रत्येक दल मे ग्यारह, सात और तेरह पर विराम; चरणान्त मे नगण रहता है :—

जय कंदिय कुल कंस, बलि विध्वंस, केशिय बक दानव दरन।
सो हरि दीन दयाल, भक्त कृपाल, कवि सुखदेव कृपा करन॥

—छन्दो मंजरी

मात्रिक-विषम

पाँच पद मिलकर १०६ मात्राओं के छन्द

पंचपदी-संकर *

इस छन्द के आदि मे दो चरण रोले के, फिर दो दल दोहे के और अंत में एक चरण 'कमल' छन्द का रहता है :—

(१)

टिमटिमाति जातीय जोति जो दीप-शिखासी।
लगत बाहिरी ब्यारि बुझन चाहत अबला सी॥
शेष न रह्यो सनेह कौ काहू हिय मे लेस।
कासो कहिये गेह को देसहि मे परदेस॥
भयो अब जानिये।

—सत्यनारायण कविरत्न

(२)

ऽ।। ऽ ।। ऽ। ऽ। ।। ऽ ऽ ऽ।।
भंगुर है यह देह, चार दिन का है जीवन।
। ऽ । ।।। ।ऽ। ऽ। ऽ ऽ। ।ऽ।।
करो न कलह-कलंक पंक से अंक विलेपन॥
त्यागो विष सम भाइयो! फूट, द्वेष, छल, क्रोध।

---

* इस तरह हजारो पचपदियाँ बन सकती है। पचपदी को उर्दू मे मुख़म्मस कहते हैं। परन्तु उसमे चारो चरण एक ही छन्द के होते हैं। मुख़म्मस सकर छन्द नही होता। यह पचपदी बहुत प्रसिद्ध है। नददास, सूरदास, सत्यनारायण जी आदि ने इसमे भ्रमरगीत लिखे हैं।

रहो प्रेम से सुख सहित, तजकर वंधु-विरोध ॥

सदा फूलो फलो ।'°

—लोचनप्रसाद पाण्डेय

मिलिन्दपाद संकर छन्द *

छः पद मिलकर ६२ मात्राओ के छन्द

प्रसार,

इस छन्द के आदि मे चार चरण गोपी छन्द के और अन्त मे दो चरण प्रसाद छन्द के रहते है —

खुले दृग देखे दीनो को, ।
स्वेद-सिचित जन मीनो को ॥
श्रान्त श्रमजीवी हीनो को ।
धूल-धूसरित मलीनो को ॥
खड़ा जिन मे तू रज लपटाय ।
मुक्ति! हाँ, मुक्ति मुझे मिल जाय ॥

—गोकुलचन्द शर्मा

---

* महाकवि नाथूराम जी शंकर शर्मा ने छ चरणवाले सभी छन्दो का नाम 'मिलिन्दपाद' बडा ही उपयुक्त नाम रखा है। उर्दू मे मुसद्दस छ चरणवाले छन्दो को कहते हैं। परन्तु छहो चरण एक ही जाति के छन्द के होते हैं।

छः चरण मिलकर १२८ मात्राओं के छन्द

तरंग

इस छन्द के पहले दो चरण चौपाई के, फिर दो चरण रूप सवैया छन्द के और अन्त मे फिर दो चरण चौपाई के रहते है। इस तरह छ चरण रहते हैं .—

तुम भी ग्राम खुले सपने हो।
रूप रंग मे वही बने हो॥
कटी-बँटी हरियाली मे तुम, वैसे ही तो जड़े हुए हो।
उठे तरल-श्यामल-दल-गुफित अंचल मे तुम पड़े हुए हो॥
धरती माता की मटियाली।
रहे गोद यह भरी निराली॥

—रामचन्द्र शुक्ल

छः पद मिलकर १४४ मात्राओं के छन्द

कुण्डलिया

इस छन्द के आदि मे दोहा और अन्त मे रोला होता है। इस तरह इस के प्रत्येक चरण मे चौबीस मात्राएं होती हैं और छः पद रहते हैं। दोहे के चौथे चरण की शब्दावलि ज्यों की त्यो रोले के पहले पद के आदि मे और दोहे के पहले चरण के आदि का शब्द या कुछ वर्ण कुंडलिया के छठे पद (रोले के चौथे पद) के अंत मे ज्यो के त्यो सिहविलोकित ढंग से आते हैं—

कीजै गमन सुमानसर, यह दुखदायक ताल।
हंस बंस अवतंस हौ, मौन गहौ इहि काल॥
मौन गहौ इहि काल काक बक खल या ठावैं।
अति कठोर बरजोर सोर चहुँ ओर मचावैं॥
बरनै दीनदयाल इन्हैं तजि सुख सो जीजै।
सठ संगति अति भीति भूलि तहँ गमन न कीजै॥

—दीनदयालु गिरि

अमृतध्वनि*

इस छन्द के आदि मे दोहा और अन्त मे सिहविलोकित-ढंग से रोला रहता है। इसमे उद्धत वर्ण रहते हैं जिन मे प्राय अनुप्रास की छाया रहती है :—

धुनि धुनि सिर खल तिय गिरहिं, सुनत राम धनु शब्द।
लग्गिय सर झरि गगन महि, यथा भाद्रपद अब्द॥
अब्द निनद करि क्रुद्ध कुटिल अरि युक्ति मरत लरि।
मुंड परत गिरि रुंड लड़त फिरि खड्ग पकरि करि॥
रिच्छ प्रबल भट उद्धत मरकट मर्दत तिहिं ध्वनि।
निर्त्तत सुर मुनि मित्र कहत जय कृत्ति अमृतध्वनि॥

—दास

छः पद मिलकर १४८ मात्राओं के छन्द

छप्पय (अन्य नाम—षट्पद)

इस छन्द के आदि मे चार पद रोला के और अन्त में दो

---

* प्रायः इस छन्द में वीररस का वर्णन किया जाता है।

पद उल्लाला के होते है। इस तरह इस छन्द मे छः पद होते हैं। छब्बीस अथवा अट्ठाईस मात्रावालो मे से कोई भी उल्लाला रोला के अन्त मे रखा जा सकता है—

(१)

जय हिन्दू कुल-तिलक धर्म-रक्षक अरि-घालक।
पालक अबला, वृद्ध और गो, ब्राह्मण, बालक।
दीन दुखी जन प्राण पापियो के उर-शालक।
सब विधि शासक योग्य न्याय प्रिय प्रजा-सुपालक॥
सरजा तेरी रहेगी, तब तक जग मे ख्याति भी।
जब तक इस संसार मे है यह हिन्दू जाति भी॥

—मान

टिप्पणी—इसमे उल्लाला छब्बीस मात्रा का है।

(२)

निज स्वदेश ही एक सर्व-पर ब्रह्म-लोक है।
निज स्वदेश ही एक सर्व-पर अमर-ओक है॥
निज स्वदेश विज्ञान-ज्ञान-आनंद-धाम है।
निज स्वदेश ही भुवि त्रिलोक-शोभाभिराम है॥
सो निज स्वदेश का सर्व विधि प्रियवर आराधन करो।
अविरत-सेवा-सन्नद्ध हो सब विधि सुख साधन करो॥

—श्रीधर पाठक

टिप्पणी—इसमे उल्लाला अट्ठाईस मात्रा का है।

आठ चरण मिलकर १९२ मात्राओं के छन्द

हुल्लास

आदि मे पादाकुलक और अन्त मे त्रिभंगी छन्द ।

कान्ह जनम दिन सुर नर फूले । नभधर निसिवासर सम तूले ।
महिते महरि अबीर उडावै । दिवि ते देव सुमन बरसावैं ॥
सुमनन बरसावै, हरष बढ़ावै, तजि तजि आवै यानन को ।
सजि तिय नर भेषनि, सहित अलेखनि, करहि अशेषनि गानन को ॥
तिन लोगनि की गति, दानन की अति, निरखि सचीपति भूलि रहे ।
ब्रजसोभ प्रकासहि, नंद विलासहि, दास हुलासहि कौन कहै ॥

—दास

मात्रामुक्तक

किसी छन्द के रूप के उसके कला-दो कला घट-बढ़ जाने से जो अवान्तर भेद होते हैं वह सभी भेद उसी छन्द के अन्तर्गत माने जाते है ।*

सम

जातिचौपई

जिस छन्द के कोई दो चरण चौपाई के और कोई दो चौपई के हो वह जातिचौपई छन्द कहलाता है :—

---

*घटे बढे कल दुकल हूँ, वहै भेद अभिराम ।
तेहि गनि मत्ता छन्द के मुक्तक मे गुण धाम ॥

—दास

सच बोले सच बात बिचारे।
खरे काम कर जनम सँवारे॥
राखे देस जाति का मान।
ऐसी मति दीजै भगवान॥

—रामदास गौड़

चितहंस

इसके प्रत्येक चरण मे उन्नीस या बीस मात्राएँ होती हैं, चरण के अंत मे लघु गुरु या गुरु लघु रहते है—

(१)

अयि दयामयि देवि, सुखदे, सारदे,
इधर भी निज वरद-पाणि पसार दे।
दास की यह देह-तंत्री तार दे,
रोम-तारो में नई झंकार दे।

(२)

फूल-फल-कर-, फैल कर जो हैं बढ़ी,
दीर्घ छज्जों पर विविधि बेले चढ़ी।
पौर-कन्याएँ प्रसून-स्तूप कर,
वृष्टि करती हैं यही से भूप पर॥

—साकेत

(३)

गोद मे गिर प्यार के पुतले बने ।*
जंग मे गिरि कर सरग सुख से घिरे ॥
पर उसी दिन सिर ! बहुत तुम गिर गये ।
पाजियो के पॉव पर जिस दिन गिरे ॥

—हरिऔध,

सुमेरु

इस छन्द का प्रत्येक चरण उन्नीस या बीस मात्रा का होता है, चरण के आदि में लघु रहता है । यति. गति पर निर्भर है —

(१)

यही है आज का सा. यह सबेरा
है ॥ राजत्व बन मे भी न मेरा ।
र .नुज ! मुझ से न तुम न्यारे कभी हो,
सुहृत्, सहचर, सचिव, सेवक सभी हो॥

---

*श्री हरिऔध जी ने चोपदो के नाम से अनेक मात्रामुक्तको का प्रयोग किया है । चौपदा उर्दू के चार चरण वाले 'क़ते' के ढग का होता है । प्रत्येक में चार ही चरण होने के कारण चौपदा नाम उपयुक्त ही है । उर्दू मे 'रुबाई' चार चरण वाले विशेष प्रकार के छन्द को कहते हैं । रुबाई का अर्थ है 'चौपदा' ।

—रामदास गौड़,

२)

कहाँ है हा! तुम्हारा धैर्य वह सब?
कि कौसिक संग भेजा था मुझे जब ॥
लड़कपन भूल लक्ष्मण का सदय हो,
हमारा वंश नूतन कीर्ति मय हो।

—साकेत

नांदीमुखी

इसके प्रत्येक चरण मे बीस मात्राएँ होती है, आदि मे पंचलघु और आगे तीन यगण रहते है। चारो चरणो मे यह क्रम न रहने पर भी गति ठीक रहने से नादीमुखी ही होता है -

जनम प्रभु लियो औध मे लूट माँची।
लुट्यो सब सबनि वस्तु एकौ न बाँची ॥
द्विजन किय बिदा वाकवादै सुखी कै।
नृपति जब उठे श्राद्ध नादीमुखी ।

—दास

प्रिया

इस छन्द के प्रत्येक चरण मे बाईस या तेईस मात्राएँ होती हैं, इसकी यति, गति पर निर्भर है :—

होमर जो है यूनान का, कवि आदि कहाया।
उसने भी सुयश वीरो का है जोश से गाया।
फिरदौसी' ने भी नाम अमर अपना बनाया।
जब फारसी वीरो का सुयश गाके सुनाया ॥

—भगवानदीन दीन'

हरिप्रिया

इस छन्द के प्रत्येक चरण मे बीस, इक्कीस या बाईस मात्राएँ होती है , चरण के अन्त मे गुरु लघु या लघु गुरु रहते है:—

(१)

हरति जु है दीनन को संकट बहु है।
बिनवत तेहि चितवनि हित दास दास है।
करनि हरनि पालति तू देवि आपु ही।
शंभुप्रिया ब्रह्मप्रिया हरिप्रिया तुही॥

(२)

करति जु है दीननि के सकट को हीन।
बिनवत तेहि चितवनि हित दास दास दीन।
करनि हरनि पालनि तू देवि सर्व ठौर।
शंभु प्रिया ब्रह्म प्रिया हरि प्रिया न और॥

(३)

हरति जु है दीनन को संकट बहुतेरो।
विनवति तेहि चितवनि हित दास दास तेरो।
करनि हरनि पालनि तू देवि आपु ही॥
शंभुप्रिया ब्रह्मप्रिया हरिप्रिया तुही।

—दास

दिगपाल

इस छन्द के प्रत्येक चरण मे बारह-बारह के विराम से चौबीस मात्राएँ होती हैं। दिगपाल की गति रहने से बाईस और तेईस

मात्रावाले छन्द भी दिगपाल ही कहलाते है। चरणान्त मे गुरु लघु का कोई मुख्य नियम नही है.—

(१)

सो पायँ आजु डौलै महि सीत धूप मे।
विधि बुद्धि तुच्छ जाकी महिमा अनूप मे।
हर जासु रूप राखै हिय बीच सर्वदाहि।
दिगपाल भाल जाकी रज राजती सदाहि॥

—दास

टिप्पणी—इसके पहले दो चरणो मे से हर एक में बाईस और अन्तिम दो चरणों मे से हर एक मे तेईस मात्राएँ है —

(२)

शुचि विश्व-बन्धुता का, है पाठ भी पढ़ाया—
आरम्भ मे हमी ने, जग सभ्य है बनाया॥
विज्ञान-ज्ञान के है, गुरु भी हमी जहाँ के।
आये न सीखने याँ, क्या क्या कहाँ कहाँ के॥

—मान

टिप्पणी—इसके प्रत्येक चरण मे चौबीस मात्राएँ हैं।

जाति चौबोला

चौबोले के रूप के, उसके कला दो कला कम होने से जो अवान्तर भेद होते है वह सभी भेद चौबोले के ही अन्तर्गत हैं।

और सब का सामूहिक नाम जाति चौबोला है। सत्ताइस से लेकर बत्तीस मात्रा तक के चौबोले साधारण गानेवाले लावनियों, फाग के चौबोलों मे और कजली गानेवाले अपने गीतों मे गाते हैं। जहॉ चारो चरण समान नही है वहॉ जाति चौबोला ही कहना चाहिये* —

(१)

घोड़े जहॉ अनेक गधो का वहॉ काम क्या था सच कह?
विदित हो गई तेरी सारी चतुराई तू चुप ही रह।
शुद्धाशुद्ध शब्द तक का है जिनको नही विचार।
लिखवाता है उनके कर से नये नये अखबार॥

—महावीर प्रसाद द्विवेदी

(२)

"अपना स्वार्थ सिद्ध करने को जगत् मित्र बन जाता है।
किन्तु काम पड़ने पर, कोई कभी काम नहि आता है।
भरे बहुत से इस पृथ्वी पर पापो, कुटिल कृतघ्न।
इसी एक कारण से उसपर, उठें अनेकों विघ्न॥

—श्रीधर पाठक

(३)

चाहे कुश-कंटक ही बन, छा जाना जीवन-पथ पर,
पर, प्राणों मे, प्राणेश्वर बसना अक्षय मधु बनकर।

---

*—रामदास गौड

जिससे, घोर निराशा मे भी आशा का मुख म्लान न हो,
सह्य बने सघर्ष, सरसता उर की अन्तर्धान न हो।

—मिलिन्द

(४)

बार बार आती है मुझ को मधुर याद बचपन तेरी।
गया, ले गया तू जीवन की सबसे मस्त खुशी मेरी।
चिन्ता-रहित खेलना-खाना वह निर्भय फिरना स्वच्छन्द।
कैसे भूला जा सकता है बचपन का अतुलित आनंद॥

—सुभद्राकुमारी चौहान

अर्द्ध-सम मात्रा मुक्तक

दोहा*

इस छन्द के विषम (पहले-तीसरे) चरणो मे बारह या तेरह-तेरह और सम (दूसरे-चौथे) चरणो मे ग्यारह-ग्यारह मात्राएं होती हैं। इस तरह प्रत्येक दल मे तेईस-तेईस या

---

* जिस दोहे के आदि मे जगण पड जाता है उसे 'चडालिनी दोहा'
।ऽ।
कहते हैं। यथा—'बखान ना चडालिनी दोहा दुख की खानि।' यदि जगण पडे ही तो पूरे शब्द मे न पडे। जैसे 'समान' 'बिमान' आदि शब्द, और यदि मगलवाची या देववाची पद हो तो यह दोष क्षम्य भी है। यदि जगण पडनेवाले वर्णों मे दो शब्द पड जायॅ तो यह दोष नही रहता है यथा—

चौबीस-चौबीस मात्राएँ होती है। इस के विषम चरणो के आदि मे जगण का निषेध है। सम चरणो के अत मे गुरु-लघु अथवा लघु रहता है —

(१)

सेवक सेव्य भाव बिनु, भव न तरिय उरगारि।
भजहु राम पद पकज, अस सिद्धान्त विचारि ॥
- गोस्वामी तुलसीदास

'करो किसी की दृष्टि को शीतल सदय कपूर।
इन आँखो मे आप ही, नीर भरा भरपूर ॥
—साकेत

ध्यान रहे कि यदि दोहे के प्रत्येक चरण के आदि मे एक समकल-समूह हो तो उस के आगे एक और समकल समूह रखो, और यदि विषमकल समूह हो तो विषम कलो का जोडा रखो। दोहे का शब्दार्थ ही है 'जोडे वाला' अर्थात् जिसके चरणो के आदि मे सम-सम या विषम-विषम मात्रासमूहो का जोडा रहे वह दोहा। यह भी ध्यान मे रखना चाहिये कि चोबीस मात्रा वाले दोहो के विषम (पहले-तीसरे) चरणो के आदिमे जगण न हो और अन्त मे सगण रगण अथवा नगण मे से कोई रहे और सम चरणो के अन्त मे जगण, तगण, अथवा नगण रहे, और तेईस मात्रा वाले दोहों के विषम चरणो के अन्त मे तगण और जगण को छोड शेष छहो गणो मे से कोई रह सकता है ।

(२)

इहाँ उहाँ कर स्वामी, दुऔ जगत मोहि आस ।
पहिले दरस दिखावहु तौ पठवहु कैलास ॥

—जायसी

टिप्पणी—इन दोनों के प्रत्येक दल में तेईस मात्राएँ हैं ।

(३)

जिन दिन देखे वे कुसुम, गई सो बीति बहार ।
अब अलि रही गुलाब की, अपत कटीली डार ॥

—बिहारी

(४)

आवत ही हरषे नहीं, नयनन नहीं सनेह ।
तुलसी तहाँ न जाइये, कचन बरसे मेह ॥

—तुलसी

टिप्पणी—इन दोनो के प्रत्येक दल मे चौबीस मात्राएँ हैं ।

(५)

अब गृह जाहु सखा सब, भजेहु मोहि दृढ़ नेम ।
सदा सरब-गत सरब हित, जानि करेहु अति प्रेम ॥

—तुलसी

(६)

आजु खड़ग चौगान गहि, करौ सीस-रिपु गोइ ।
खेलौ सौह साहसौ, हाल जगत महँ होइ ॥

—जायसी

टि०—पाँचवें दोहे के पहले दलमे तेईस और दूसरे मे चौबीस तथा छठे दोहे के पहले दलमे चौबीस और दूसरे में तेईस मात्राए हैं ।

लघु गुरु की न्यूनाधिकता से दोहो के अनेक भेद हो सकते हैं। इनमे तेईस प्रकार के दोहे बहुत प्रसिद्ध है।* मनोरजनार्थ दो तीन दोहे यहाँ दिये जाते है —

भ्रमर (२६ वर्ण = २२ गुरु + ४ लघु)

कोऊ साँचो ना मिलो, ज्ञानी-मानी मीत।
जे पाये ते स्वारथी-दंभी-मैले-चीत॥

—मान

करभ (३२ वर्ण = १६ गुरु + १६ लघु)

भजन कह्यो ताते भज्यो, भज्यौ न एकौ बार।
दूर भजन जातै कह्यौ, सो तै भज्यो गॅवार॥

—बिहारी

बानर (३८ वर्ण = १० गुरु + २८ लघु)

करत करत अभ्यास के, जड़मति होत सुजान।
रसरी आवत जात ते, सिल पर होत निसान॥

—वृन्द।

---

*भ्रमर सु भ्रामर, सरभ, स्येन, मण्डुक, मरकट कहि।
करभ, सु नर, अरु हस, जानि मदकल, कविजन लहि।
कहूँ पयोधर, चाल, और बानर, जिय जानहु।
त्रिकल, और कहि मच्छ, कच्छ, हरदेव बखानहु।
शार्दूल अहिवर, बरन वायस, बिडाल, सेनक, कहो।
उदर सर्प तेईस ये दोहा नाम सुकवि लहो॥

—हरदेव

विषम

गीत अथवा पद

गीत अथवा पदो की जितनी मुक्तक रचना होती है उतनी अन्य मुक्तक छन्दो की नही होती। इनका सबध राग और रागनियो मे होता है। उन्ही के स्वर और लय विशेष के अनुसार गीतो मे मात्राओ की वृद्धि होती है और उनका ह्रास होता है। यही कारण है कि इनके चरणो मे विषमता रहती है। ऐसी अवस्था मे गीनो के लिये किसी विशेष नियम का निर्धारण नही किया जा सकता। फिर भी समष्टि रूप से गीतो अथवा पदो की रचना पिगल के नियमानुसार ही होती है। हाँ प्राय देखा जाता है कि किसी पद या गीत के आरभ मे जितनी मात्राओ की टेक रखी जाती है, ठीक उसी की दूनी मात्राओ के नीचे के चरण रखे जाते है। पर ऐसा कोई नियम नही है। ऐसा बहुत होता है कि टेक की मात्राएँ कुछ है और नीचे के चरणो की मात्राएँ कुछ, परस्पर कोई संबध नही होता। यही नही बल्कि नीचे के चरणो मे परस्पर भी विषमता होती है। कोई चरण छोटा और कोई बडा होता है। और आजकल के छायावाद मे ऐसे ही गीतो की भरमार है। विषय के हृदयगम कराने के लिये यहाँ कुछ पद उद्धृत कर दिये जाते है* —

(१)

जसोदा हरि पालने झुलावै।
हलरावै, दुलराइ मल्हावै, जोइ सोइ कछु गावै ॥

---

* हरिऔध

वेद बदत गावत पुरान सब तुम त्रय-ताप नसावत ।
सरनागत की पीर तनक हू तुम्हे तीर सम लागत ॥
हम से सरनापन्न दुखी को जाने क्यो विसरायो ।
सरनागत वत्सल 'सत योंही कोरो नाम धरायो ॥

—सत्यनारायण कविरत्न

टिप्पणी—इसकी टेक बारह मात्रा की है। टेक के नीचे का चरण छब्बीस मात्रा का विष्णुपद है। शेष चरण अट्ठाईस मात्रा के सार छन्द के है।

(४)

अब जो प्रियतम को पाऊँ।
तो इच्छा है, उन चरणो की रज मै आप रमाऊँ।
आप अवधि बन सकूँ कही तो क्या कुछ देर लगाऊँ,
मै अपने को आप मिटाकर, जाकर उन को लाऊँ।

—साकेत

टिप्पणी—इसकी टेक मे चौदह मात्राएँ है। शेष चरणो मे टेक की दूनी अट्ठाईस मात्रा का सार छन्द है।

(५)

मो सम को त्रिकाल बडभागी।
तजि साकेत सकेत हिये के भये राम अनुरागी ॥
जिमि प्रभु मोहि राखि सरनागत अपत अघिहि अपनाये ।
तिमि मेरो हिय सदा आपनो मंदिर रखहु बनाये ॥

—रामदास गौड़

टिप्पणी—टेक में चौपाई और शेष चरण सार छन्द के हैं।

(६)

भूतल कब आओगे प्यारे।

गंग-जमुन अब छिन्न-भिन्न हैं, ढूँढत चरन तुम्हारे॥

हेरि हेरि अँखियाँ पथरानी, छतियन परत दरारे।

कहाँ विलमि हा! रहे प्राणधन पीरे पटुका वारे॥

तुमको कहत दयानिध सिगरे, पचि पचि मरत बिचारे।

फिर तुम हा! कत नहीं पसीजत, प्रानतु के आधारे॥

'अनुज' अकिंचन तुम्हे पुकारत हे त्रिभुवन उजियारे।

जाति-जाति कहँ सब कोऊ चाहत हम कारे तुम कारे॥

—महन्त लक्ष्मणाचार्य 'वाणी-भूषण'

टिप्पणी—इसकी टेक चौपाई का एक चरण है। शेष चरण अट्ठाईस मात्रा के सार छन्द के हैं।

(७)

हे अनन्त!

ऊपर सूर्य, चन्द्र, तारागण,

भू पर सागर गिर-रज कण-कण,

तेरी कीर्ति गुँजाते,

जिससे गूँजी दिशा दिगत।

हे अनन्त!

—अवन्त

टिप्पणी—इसकी टेक छ मात्रा की है, टेक के बाद दो चरण चौपाई के, तीसरा चरण बारह मात्रा का और चौथा चरण चौपई का है।

(८)

दो दिन खेल गया उपवन मे ।

रूप अनोखा लेकर आया, खेला-कूदा हँसा-हँसाया ,
दिव्य सुरभि से बन महँकाया ।
इस से बढकर भला और क्या रक्खा है जीवन मे ॥१॥

गुण सौदर्य देख कर प्यारा, रीझ गया माली हत्यारा ,
और किया डाली से न्यारा ।
तोड ले चला दुष्ट बेचने दया न आई मन मे ॥२॥
जीवित सब ने सीस चढाया, मृत हो जाने पर ठुकराया ,
घर से बहुत दूर फिकवाया ।
लगी रही दुनिया सदैव, ही अपने मन के धन मे ॥३॥
दो दिन खेल गया उपवन मे ।

—बदरीनाथ भट्ट

टिप्पणी—इस छन्द की टेक सोलह मात्रा की है । पहला चरण सोलह सोलह के विराम से अडतालीस मात्रा का है और तोड अट्ठाईस मात्रा का सार छन्द का है ।

(९)

ऐ रजकण के ढेर तुम्हारा है विचित्र इतिहास !
तुम मनुष्य की उन अभिलाषाओ के हो उपहास,
कि जिनका असफलता है अंत
और आशा जीवन !

बना अजान खण्ड ही यह लो आज तुम्हारा सदन
कभी उत्थान कभी है पतन।

वासनाओ का यह ससार
भयानक भ्रम का है वंधन,
और इच्छाओ का मण्डल
आदि से अत रुदन है रुदन
एक अनियत्रित हाहाकार
इसी को कहते है जीवन।

—भगवती चरण वर्मा

टिप्पणी—यह सकर पद है। इसमें कई भिन्न भिन्न छदो का मेल है।

(१०)

बादल राग

ऐ निर्बन्ध !
अन्ध-तम-अगम-अनर्गल-बादल !
हे स्वच्छन्द !—
मन्द-चचल समीर रथ पर उच्छृङ्खल ?
ऐ उद्दाम !
अपार कामनाओ के प्राण !
बाधा रहित विराट !
ऐ विप्लव के प्लावन !
सावन-घोर-गगन के
ऐ सम्राट !

ऐ अटूट पर छूट, टूट पड़नेवाले – उन्माद !
विश्व विभव को लूट लूट लडनेवाले—अपवाद !
आ बिखरे, मुख फेर, कली के निष्ठुर पीडन !
छिन्न-भिन्न कर पत्र-पुष्प-पादप-वन-उपवन
वज्र-घोर से ऐ प्रचंड,

आतक जमाने वाले !

कपित जंगम -- नीड-विहंगम,

ऐ न व्यथा पाने वाले !

मय के मायामय आँगन पर ,

गरजो विप्लव के नव-जलधर ?

—सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

टिप्पणी—इस पद मे अनेक छन्दों का मिश्रण है । यह अपने ढग का निराला ही है । पर इस मे भी संगीत की लय है ।

ख़्याल*

ख्याल कम से कम बाईस मिसरे[1] का होता है जिसमे पहले दो मिसरे टेक या धुरपद कहलाते है । फिर चार मिसरो का एक

*संगीत मे पदो की भाँति ख्यालो का भी एक स्थान है । पिछले सौ वर्षों तक उत्तरी भारत मे ख्याल भी खूब गाये गये । ख्याल 'मराठी'

१ पक्ति

चौक[1] होता है। पाँचवा मिसरा उड़ान या मिलान कहलाता है जो धुरपद के दूसरे मिसरे से जोड दिया जाता है। गाने की किसी भी रंगत को चार चौक में बंदिश कर देने से ख्याल माना जाता है यद्यपि चार चौक से अधिक पचास और साठ चौक तक के भी ख्याल देखे गये है। परन्तु मुख्यतया चार चौक को ही महत्व दिया गया है।

कर्मों से ज्ञान हो यही वेद कहते है। } टेक
जब ज्ञान हुआ तब कर्म नही रहते है॥
जैसे वृक्षो पर प्रथम पुष्प आते है।
फल प्रकट होय तब पुष्प सूख जाते है॥
ऐसे ही मनुज कर्मों से ज्ञान पाते है। } चौक
जब ज्ञान हुआ कर्मो को बिसराते है॥

और लावनी नाम से प्रसिद्ध है। ख्याल गानेवालों के दो थोक है कलँगी और तुर्रा। कलँगी के प्रवर्तक श्री शाहअली और तुर्रा के प्रवर्तक महात्मा तुकनगिरि थे। किसी मराठी दरबार ने इन दोनो गायनाचार्यों मे से एक को कलँगी, दूसरे को तुर्रा उपहार प्रदान किया था। इसी से ये नाम प्रचलित हो गये।

ख्याल गानेवालो के दोनो दलो मे प्राय बहुत दिनो तक विवाद चलता रहा है। जिस समय दोनो थोक वाले चग पर चढाउतरी के ख्याल कहते हैं, अच्छा रग जमता है। —स्वामीनारायणानद

१ चार पक्तियो का एक चौक कहलाता है।

कर्मों का संग अज्ञानी जन गहते है ।] ज्ञान या मिलान
जब ज्ञान हुआ तब कर्म नही रहते है ।।] अन्त मे धुरपद
का दूसरा मिसरा

—स्वामी नारायणानद ।

ख्यालो मे रंगते अनेक है । उनमे खडी, लंगडी, छोटी, मेरी जान, डिढखभी तिकडिया, चौताल और महराज आदि प्रसिद्ध है ।

खडी

इसका प्रत्येक चरण तीस से बत्तीस मात्रा तक का होता है —

सुख सुगध लोभी मन मधुकर काम-कमल पर जा बैठा ।
प्रेम पॉखुरी मे फँसकर अपने को आप गँवा बैठा ।।

—स्वामी नारायणानद

लॅगडी

गाना गणनायक बुद्धि विधायक सदा सहायक चाप धृते ।
मब जब बंदन, निकंदन विघ्न राशि आनंदकृते ।।

—स्वामी नारायणानंद

टिप्पणी—इसकी पहली पक्ति बत्तीस मात्रा की और दूसरी सत्ताईस की है ।

तिकाड़िया

जय जय गणेश काटो कलेश विद्या हमेश देना अन धन ।
शिवजी के लाल करो प्रतिपाल, मूरति विशाल गिरिजानंदन ।।

—मक्खनलाल

चौताल

नीके सभी साज, सभी अजूवा अंदाज.

लिये सग मे समाज सखी नदलाला।

नाचे तोडे ताल, गावे रागिनी रसाल,

लिये रग और गुलाल सब व्रजबाला ॥

—स्वामी नारायणानद

छोटी

बाईस मात्रा की लावनो छोटी रंगत कहलाती है।†

डिढखंभी

लखो एक अचरज, सो हम पै कह्यो न जाय।

सिधु सीपी मे गयो समाय।

सिकश्ता और तबील रंगते भी प्राय लोग गाते है जो कि उर्दू की गजल-लहरो से आई है—

रगत सिकश्ता—

लसत है मस्तक पै दिव्य चदा त्रय-नयन बिच ज्योति-ज्वाल की है।

लहरती गगा जटा म सुख से विचित्र छवि चन्द्रभाल की है।

—स्वामी नारायणानन्द जी।

रंगत तबील --

करुणानिधि टेरत हौ तुमको मेरी टेर सुनो कहँ देर करी।

भव-सागर बीच भॅवर मे पडी मेरी नैया को पार लगादो हरी।

—पन्नालाल

---

† बाईस मात्रा की लावनी देखो।

कभी एक ही रंगत मे कई रगतों का सम्मिश्रण हो जाता है। जैसे लगडी रंगत का ख्याल लिखा और उसी चौक के अन्तर्गत जोडा दोहा, चौपाई आदि आदि को भी उसमे मिला दिया, परन्तु उसकी मुख्य रगंत वही मानी जावेगी कि जिस रगत मे टेक या धुरपद हो।

पंच पदी और छपदे आदि।

जिस तरह राष्ट्र-भाषा हिन्दी पर मराठी गुजराती, बगला आदि प्रान्तीय भाषाओ, और अँगरेजी का प्रभाव पडा है। उसी तरह उर्दू— जो खडी बोली का ही एक रूप है—का भी प्रभाव पडा है। बल्कि यो कहना चाहिये कि हिन्दी पद्य पर अरबी, फारसी की बहरो का भी प्रभाव पड़ा है। और जिस तरह वहाँ मुखम्मस और मुसद्दस लिखे जाते है ठीक उसी ढंग पर हिन्दी मे भी पद्य रचना होने लगी है। महाकवि हरिऔध जी ने इस तरह की बहुत रचनाएं की है। ये पचपदियाँ और छपदे हिन्दी के संकर पंचपदी' और 'संकर मिलिदपाद' छन्दो से भिन्न है। इन मे एक ही छन्द के पॉच-पाँच और छ-छ चरण रहते है। पचपदी मुखम्मस का ठीक शब्दार्थ है और छपदे' मुसद्दस का। हम पहले कह आये है कि अरबी-फारसी की अनेक बहरे मात्रामुक्तको के अन्तर्गत आ जाती है। इसी से यहाँ पर चरचा की गई है। पचपदियाँ हिन्दी के मूल छन्दो मे भी लिखी जाने लगी है। पचपदियों और छपदियो के कुछ उदाहरण मनोरजनार्थ दिये जाते है—

पंच पदी

(१)

दुनिया मे जो बादशाह है सो है वह भी आदमी।
और मुफलिसो गदा है सो है वह भी आदमी।
जरदार बेनवा है सो है वह भी आदमी।
नेमत जो खा रहा है सो है वह भी आदमी।
टुकडे जो माँगता है सो है वह भी आदमी ॥१॥

—नजीर

(२)

नव यौवन की चिता बना कर।
आशा कलियो को स्वाहा कर।
भग्न मनोरथ की समाधि पर।
तपस्विनी बैठी निर्जन मे।
जीवन के इस शून्य सदन मै ॥

— दिनकर

टिप्पणी—इस छन्द मे प्रत्येक चरण चौपाई का है।

छपदे

(१)

चमकती हुई धूप किरणे सुनहली।
उगा चाँद और चाँदनी यह रुपहली।
हवा मंद बहती धरा ठीक सँभली।

सभी पौध जिनसे पली और बहली ।
सकल लोक की जिस तरह है कहाती ।
सभी की उसी भाँति है वेद थाती ॥
—'हरिऔध'

टिप्पणी—इसका प्रत्येक चरण बीस मात्रा के नादीमुख छन्द का है ।

(२)

देख कर जो विघ्न बाधाओ को घबराते नहीं ।
भाग पर रह कर के जो पीछे है पछताते नहीं
काम कितना ही कठिन हो पर जो उकताते नहीं ।
भीड पड़ने पर भी जो चचल है दिखलाते नहीं ॥
होते है यक आन मे उनके बुरे दिन भी भले ।
सब जगह सब काल मे रहते है वे फूले फले ॥
— हरिऔध

इसका प्रत्येक चरण गीतिका छन्द का है ।

(३)

वेद कहते है कि निर्धन के है धन गिरधारी ।
सच्चिदानन्द सगुन ब्रह्म है मगलकारी ॥
चश्मये-फैज दा आलम मे है उनका जारी ।
सब्ज रहती है सखावत की सदा फुलवारी ॥
कोई उस बाग से, महरूम नही आता है ।
फूल लेने कोई जाता है तो, फल लाता है ॥
—संतोषी सुदामा

सार-मिलिन्दपाद

भाव-राशि को रूप राशि के अभिनव साँचे ढाली।
नव-रस मय यौवन तरग की लेकर छटा निराली॥
मजु-अलकारो से सजकर जगमग-जगमग करती।
कोमल कलित ललित-छन्दों के नूपुर पहन थिरकती॥
गज-गामिनि! अनुपम शोभा की दिव्य-प्रभा दरसाओ।
छम-छम करती हृदय-कुज मे आओ कविते! आओ!!

—श्यामसुन्दर खत्री

रूपसवैया-मिलिन्दपाद

घर घर मे जगदीशचन्द्र बसु होना काम हमारा ही है।
बन कर कृषक, गर्व से कृषि को बोना काम हमारा ही है॥
शिल्प बढाकर ताजमहल फिर रचकर के दिखलाने होगे।
व्यापारी बन देश देश मे अपने पोत घुमाने होगे॥
रेल तार आकाश-यान ये हम क्या कभी बना न सकेगे।
शुद्ध स्वदेशी पीताम्बर क्या माधव को पहना न सकेगे॥

—भारतीय आत्मा

कलाधरात्मक-मिलिन्दपाद

विरले ध्रुव-धर्म धारते है। शुभ कर्म नही बिसारते है॥
तरसे वह वीर रोटियो को। चिथड़े न मिलें लँगोटियो को॥

कुलबोर-प्रथा पुजा रहे है।
उलटे हम हाय ! जा रहे है॥
—नाथूराम 'शंकर' शर्मा

शुद्धगा-मिलिन्दपाद

बड़ों के मंत्र मानेंगे प्रसगों को न भूलेंगे।
कहो क्या ऊँच ऊँचो की, उँचाई को न छूलेंगे॥
बढेंगे प्रेम के पौधे, दया के फूल फूलेंगे।
भरे आनन्द से चारों. फलों के झाड़ झूलेंगे॥

सबों को 'शंकरानंदी' अनिष्टों से उबारेंगे।
बिगाड़ों को बिगाड़ेंगे, सुधारों को सुधारेंगे॥
—नाथूराम "शंकर" शर्मा

लावनी

कुछ ग्रन्थ किसी भाषा के पढ़ लेते है।
टूटी फूटी कविता भी गढ़ लेते है॥
मिथ्याभिमान-कुजर पर चढ़ लेते है।
लड़भिड़ कलक माथे पर मढ़ लेते हैं॥

इनका घमंड जिसकी ठोकर खाता है।
वह वीर समालोचक पदवी पाता है॥

सखी-मिलिन्दपाद

पत्थर तुम मुझे बनाओ; दृढ़ता का पाठ पढ़ाओ।
साहस सुकर्म सिखलाओ, पथ उन्नति का दिखलाओ॥

हाँ ऐ प्यारी विपदाओ !
आती हो, आओ ! आओ !!
—विपन्न

सरसी-मिलिन्दपाद

जहाँ एक भी जन रोता है पाकर कोई क्लेश,
हो बस उस त्रिभुवर के वर से वही हमारा देश।
पोंछे जहाँ एक स-करुण कर दुःखी के दो नेत्र,
वही हमारा और तुम्हारा बने जीवन-क्षेत्र।
मातृ-भूमि के सहित वही है प्रकृति पुरुष का देश।
नील गगन-सा मुक्त चतुर्दिक् विस्तृत और सु-वेश।।
—भारतीय

प्रसाद-मिलिन्दपाद

(१)

पाप का क्षणिक प्रभाव विलोक,
लोभ यदि सके न कोई रोक।
शोक, तो उसकी मतिपर शोक!
बना क्या, बिगड़ा जब परलोक।।
विजय है वही कि सब संसार—
करे पीछे भी जय-जयकार।।
—मैथिलीशरण गुप्त

(२)

जहाँ अलि गुंजन करता आज,
कूकती पिक छाता ऋतुराज !
वहीं है कल पतझड का राज
नाचता दस-दिशि नाश-समाज ।
क्षणिक है उन्नति-सम्मेलन ।
अरे मेरे अस्थिर जीवन ।।

—अशोक

प्रज्वलया-सप्तपदी

जिन आँखो का नीरव अतीत,
कहता है मिटना मधुर जीत,'
जिन पलको मे तारे अमोल
आँसू से करते है किलोल,
उस चिन्तित चितवन मे विहास
बन जाने दो मुझ को उदार '
फिर एक बार, बस एक बार !

—महादेवी वर्मा

मात्रिक छन्दों के अन्तर्गत

आर्या और गाथा छन्द

बरवै, दोहा, छप्पय, कुण्डलिया आदि के अतिरिक्त संस्कृत मे कुछ मात्रिक अर्द्धसम और विषम छन्द है जिन्हे आर्या कहते

हैं। प्राकृत मे यही गाथा के नाम से प्रसिद्ध हैं। ये दो दलो मे लिखे जाते है। सस्कृत, मराठी और प्राकृत मे इनका विशेष चलन है। अब हिन्दी मे भी इनका व्यवहार होने लगा है। इन के अनेक सूक्ष्म-भेद है। यहाँ मूल और प्रचलित छन्द लिखे जाते है।

इन छन्दो मे चौकलो (डगण) का ही प्रयोग होता है। प्रस्तारानुसार चौकलों (डगण) के SS , IIS, ISI, SII और IIII ये पॉच रूप है।

*आर्या (गाहा, गाथा)

इस के विषम (पहले-तीसरे) चरणो मे बारह-बारह मात्राएँ, दूसरे मे अठारह और चौथे मे पन्द्रह मात्राएँ होती है और

---

* दोहे की भाँति गुरु-लघु के हेरफेर से आर्या के भी छब्बीस भेद होजाते है —

सत्ताइस गुरु तीनि लघु, लच्छी अच्छर तीस।
गुरुहि घटे लघु बिय बढ़े, सो सो नाम छबीस॥
रिद्ध, बुद्धि, लज्जा गनो विद्या, छमा विभॉति।
देही (वैदेही), गौरी, धात्रियो, चुन्ना,छाया, क्रान्ति॥
महामाय पुनि कित्ति, सिधि, मानिन, रामा मानि।
गाहिनि, बिस्वा, वासिता, सोभा, हरिना जानि॥
चक्की, सारसि, कुररि अरु, सिंही, हँसी लेखि।
लच्छि सहित सत्ताइसे, गाहा भेद विशेषि॥

चरणान्त मे गुरु रहता है । इसके विषम (पहले, तीसरे, पाँचवे और सातवे) गणो (चौकलो) मे जगण का निषेध है —

(१)

I I S S S, S S S II S S I S I II II S
पहले + आँखा + मे थे, मानस + मे कूद + मग्न† + प्रिय अब + थे।
१ + २ + ३, ४ + ५ + ६ + ७ +

S S I S I S S I S I S S I S II S
छींटे + कहीं उ + ड़े थे, बडे बड़े + अश्रु* + वे कब + थे ॥
१ + २ + ३, ४ + ५ ६ + ७ +

—साकेत

(२)

कवि निर्धन भी होकर शठ की सेवा कभी न करता है ।
रत्नाकर मे जाकर, हंस कभी क्या विचरता है ?

—रामचरित उपाध्याय

(३)

दल हैं तो बास नही बास नही तो न प्रचुर मकरद ।
मधुप एक कुसुम मे , गुण दो या तीन तो नही मिलते ॥

—चन्द्रधर शर्मा

---

† तीस मात्रा वाले पहले दल के छठे गण में जगण रहता है या चारों ही वर्ण लघु रहते हैं ।

* सत्ताईस मात्रा वाले दूसरे दल में छठा गण एक लघु का ही मान लिया जाता है ।

गीति[1] (उग्गाहा उद्गाथा)

इस के विषम (पहले-तीसरे) चरणो मे बारह-बारह और सम (दूसरे चौथे) चरणों मे अठारह-अठारह मात्राएँ होती हैं। चरणान्त मे गुरु रहता है। प्रत्येक दल के विषम (पहले, तीसरे, पाँचवे, सातवे) गणों (चौकलों) मे जगण का निषेध है। छठे गण मे जगण रहता है अथवा चारों वर्ण लघु रहते हैं —

(१)

रघुबर तव यश समता चन्द करै कहहु कौन भाँतिन तैं[2]।
दोषान्वेषी वह नित, यह निर्मल है प्रकाश कान्तिन तैं ॥

—गदाधर

(२)

करुणे, क्यों रोती है? 'उत्तर' मे और अधिक तू रोई—
'मेरी विभूति है जो, उसको 'भव-भूति' क्यों कहे कोई?

—साकेत

उपगीति (गाह)

इस के विषम (पहले-तीसरे) चरणों मे बारह-बारह और सम (दूसरे और चौथे) चरणो मे पन्द्रह-पन्द्रह मात्राएँ होती

---

१ पथ्या आदि विपुला, आदि गीति के सोलह उपभेद हैं।

२. आर्या छन्द मे पहले उदाहरण मे गुरु-लघु द्वारा चौकलो को दिखा दिया गया है। उसी तरह लक्षण के अनुसार उदाहरणो मे चौकल समझ लेने चाहिएँ।

है। विषम (पहले, तीसरे, पाँचव, सातवे) गणो मे जगण का निषेध है। चरणान्त मे गुरु रहता है —

हरि मुख सुखद ससी सो, हासी मृदु अमिय[1] सी बासी।
नवला नजरि चकोरी, छबि रस पीवै तऊ प्यासी॥
—समनेस

उद्गीति (विग्गा, विगाथा)

इस के विषम (पहले, तीसरे) चरणो मे बारह-बारह दूसरे मे पन्द्रह और चौथे मे अठारह मात्राएँ होती है। विषम (पहले, तीसरे, पॉचवे, सातवें) गणो मे जगण का निषेध है -

मन मे रख समता को, पर-हित कर जीवन[2] सफल हो।
जो प्रश्न सामने हो, हल हो जब तक नही तुझे कल हो॥
—मान

आर्यागीति* (खंधा, स्कंधक, साहिनी)

इसके विषम (पहले-तीसरे) चरणों मे बारह-बारह और

---

१. सत्ताईस मात्रावाले सब दलो मे छठा गण एक लघु का मान लिया जाता है। अत यहाँ 'य' एक लघु वर्ण का ही छठा गण है।

२ देखो टिप्पणी तीसरी।

---

* आर्यागीति (खधा) के सत्ताईस भेद हैं —

राजसेना
णदउ भद्दउ सेस सरग,
सिव बभ बारण वरुण,

सम (दूसरे चौथे) चरणो मे बीस-बीस मात्राएँ होती है। चरणान्त मे गुरु रहता है। विषम (पहले, तीसरे, पाँचवे, सातवे) गणो (चौकलो) मे जगण का निषेध है —

(१)

स्वामि सहित सीता ने, नन्दन माना सघन कानन भी।
बन उर्मिला बधू ने, किया उन्ही के हितार्थ निज उपवन भी ॥

—साकेत

(२)

स्त्री चिन्ता की सीमा, बहुत हुई तो द्वार देहरी तक है।
अगणित चिन्ताओ से, घूमा करता पुरुषों का मस्तक है ॥

—चन्द्रहास

णीलु मअण तालक सेहरु
सरु गअणु सरहु विमई,
खीर णअणु णरु णिद्ध णेहलु।
मअगलु भोअलु सुद्ध सरि
कुभ कलस ससि जाण।
सरह सेस ससहर गुणहु
सत्ताइस खधाण ॥

—प्रा० पि०

अर्थात् नद, भद्र, शेष, सारग, शिव, ब्रह्मा, वारण, वरुण, नील मदनताडक, शेखर, शर, गगन, शरभ, विमति, क्षीर, नगर, नर, स्निग्ध, स्नेहल, मदकल, लोल, शुद्ध, सरि, कुभ, कलश, और शशि ये सत्ताईस भेद खन्धान (आर्यागीति) के है।

गाहिनी और सिंहनी*

गाहिनी

इसके विषम (पहले-तीसरे) चरण मे बारह बारह, दूसरे चरण में अठारह और चौथे चरण मे बीस मात्राएँ रहती है। चरणान्त में गुरु रहता है प्रत्येक दल में मात्राओं के पश्चात् जगण रहता है -

न कुछ कह सकी अपनी, न उन्हो को पूछ मैं सकी भय से,
अपने को भूले वे, मेरी ही कह उठे सखेद हृदय से ॥

—साकेत

---

* पुव्वद्ध तीस मत्ता
पिंगल पभणेइ मुद्धिणि सुणेहि ।
उत्तद्धे बत्तीसा
गाहिनि बिबरीअ सिंहिणी भणु सव्वं ॥

—प्रा० पि०

अनुवाद

पूर्वार्द्धे त्रिंशन्मात्रा पिंगलो भणति हे मुग्धे श्रृणु ।
उत्तरार्द्धे द्वात्रिंशद् गाहिनी, विपरीता सिंहनी भणति सर्वे ॥
अर्थात् गाहिनी का उलटा सिंहिनी छन्द होता है ।

सिंहिनी

इसके विषम (पहले–तीसरे) चरणो मे बारह-बारह दूसरे चरण मे बीस और चौथे मे अठारह मात्राएँ रहती हैं। चरणान्त मे गुरु रहता है। प्रत्येक दल में बोस-बीस मात्राओ के पश्चात् जगण रहता है—

राम हमै हू तारौ, तुम बहु पातकीन कौ करौ उबारौ।
इतनौ नैक बिचारौ, अपने मुख सों आपनौ उचारौ॥

—गदाधर

वर्ण-वृत्त

सम

१ वर्ण के छन्द—२

श्री*

(ग)

सी, धी । री, धी ॥

—रामचन्द्रिका

जितने वर्णो का छन्द है आरभ मे शीर्षक दे दिया है। उस शीर्षक के भीतर उतने ही वर्णो के छन्द समझने चाहिएँ। इसी तरह छन्दो की विस्तृत परिभाषाएँ न लिखकर गुरु, लघु और वर्णिक गणा के आदि के साकेतिक अक्षर दे दिये है। कितने वर्णों पर विराम होगा, इसके लिए अको मे सख्या देदी गई है और दूसरे नाम कोष्ट मे दे दिए गये है। उदाहरणार्थ 'इन्दिरा वृत्त', का लक्षण यो लिखा गया है।

इन्दिरा (कनक मजरी)

(न र र ल ग) ६, ५

इसी की विस्तृत परिभाषा यो हो जाती है—

नगण (।।।), रगण (ऽ । ऽ), रगण (ऽ । ऽ), लघु (।) और गुरु (ऽ) के क्रम से ग्यारह वर्णं का 'इन्दिरा' अथवा कनक-मजरी वृत्त होता है, छ और पॉच वर्णों पर विराम रहता है।

(११ वर्णं के छन्दो के उदाहरण देखो।)

२ वर्ण के छन्द—४

कामा

(ग ग)

ध्याये, राधा । त्यागे, बाधा ॥

—मान

महि

(ल ग)

सबै, तजौ । हरी भजौ ॥

—कन्हैयालाल मिश्र

सार

(ग ल)

(१)

राम, नाम । सत्य धाम ॥

(२)

और, नाम । को न, काम ॥

—रामचन्द्रिका

मधु

(ल ल)

छल, तज । हर, भज ॥

—कन्हैयालाल मिश्र

३ वर्ण के छन्द—८

नारी (ताली)

(म*)

रागी सो, रोगी है। त्यागी सो, योगी है।

—मान

शशी

(य)

दुखी को ?, कुपथी। सुखी को ?, सुपथी॥

—मान

प्रिया

(र)

त्यागिये, काम को। ध्याइये, श्याम को।

—मान

रमण

(१)

जग है, सपना। कब है अपना।

(२)

दुख क्यो, टरि है। हरिजू, हरि है॥

—रामचंद्रिका

---

* यहाँ 'म' मगण का बोधक है। इसी प्रकार आगे सभी छन्दो में 'ल' लघु का 'ग' गुरु का और उनके अतिरिक्त वर्ण अपने गण के बोधक हैं।

पचाल

(त)

जो धीर। सो बीर।

जो दीन। सो हीन॥

—मान

मृगेन्द्र

(ज)

कृपालु, दयालु।

उमेश, रमेश॥

—मान

मदर

(भ)

गावहि, रामहि।

पावहि, धामहि॥

—गदाधर

कमल

(न)

कमल, नयन।

शरण, भय न॥

—मान

५ वर्ण के छन्द-३२

गंभीरा (रति)

(स ल ग)

सुखकंद हैं । रघुनंद जू ।
जग यो कहै । जग वंद जू ॥

—रामचन्द्रिका

हारी

(त ग ग)

गोपाल आओ । गीता सुनाओ ।
वीरत्व जागे । क्लीवत्व भागे ॥

—मान

हंस (पंक्ती)

सूरज बानी । सो सब मानी ।
कूच करायो । देर न लायो ॥

—सुजान चरित्र

जम्बूनद (यशोदा)

(ज ग ग)

दगा न दोगे । सुखी रहोगे ।
भला करोगे । भला भरोगे ।

—मान

रमल

(र ल ल)

बाँसुरी सुर । बेधि कै उर ।
साथ लै मन । जातु है बन ॥

—सुमनेस

यमक

(न ल ल)

हरि भजहु । छल तजहु ।
सरन गहु । मगन रहु ॥

६ वर्ण के छन्द—६४

शेषराज (विद्युल्लेखा)

(म म)

श्यामै श्यामै ध्यावै । सो सौ निद्धै पावै ।
जानो साधो सोई । छाँड़ो माया मोही ॥

—हरदेव

सोमराजी (शंखनारी)

(य य)

गुनो एक रूपी, सुनो वेद गावै ।
महादेव जाको, सदा चित्त लावै ॥

—रामचन्द्रिका

विजोहा (विमोहा, जोहा, विज्जोहा)

(र-र)

शंभु को दण्ड दै। राजपुत्री कितै।
टूक द्वै तीन कै। जाहु लंकाहि लै॥

—रामचन्द्रिका

तिलका (तिल्ला, तिल्लना)

(स स)

हरि को जु भजे। खल संग तजे।
सब काज सरे। भव-सिंधु तरे॥

—गदाधर

मंथान

(त त)

बाणी कही जान। कीन्हीं न सो कान।
अद्यापि आनी न। रे बंदि कानीन॥

—रामचन्द्रिका

मालती

(ज ज)

जपो नित नाम। रमापति राम।
कटै दुख द्वन्द। बढ़ै सुखकंद॥

—हरदेव

मोहन

(स ज)

जन राजवंत । जग योगवंत ।
तिन को उदोत । केहि भाँति होत ।।

—रामचन्द्रिका

अपरमा

(ज स)

दुखी जनन को । सुखी करन को ।
हरी अवतरें । धरा दुख हरें ।।

—मान

शशिवदना (चण्डरसा)

(न य)

शुभ सर शोभै । मुनि मन लोभै ।
सरसिज फूले । अलि रस भूले ।।

—रामचन्द्रिका

७ वर्ण के छन्द—१२८

शीर्षरूप (शिष्या)

(म म ग)

शुद्धात्मा था ज्ञानी था । प्राणों का भी दानी था ।
ऊँचा हिन्दू पानी था । राणा सच्चा मानी था ।।

- मान

मदलेखा

(म स ग)

मैला चित्त न राखे । झूठी बात न भाखे ।
सच्चा है तप ये ही । मानो बात सनेही ॥

—मान

समानिका

(र ज ग)

देखि देखि कै सभा । विप्र मोहियो प्रभा ।
राज-मण्डली लसे । देव-लोक को हँसे ॥

—रामचन्द्रिका

कुमार ललिता

(ज स ग)

विरंचि गुण देखै । गिरा गुणनि लेखै ।
अनंत मुख गावैं । विशेषहि न पावैं ॥

—रामचन्द्रिका

करहंस (करहंच, वीर वर)

(न स ल)

इक दिवस अंत । भज मन अनंत ।
शरण भगवन्त । रहत सब संत ॥

—गदाधर

मधुमती

(न न ग)

भव-भय हरना । असरन सरना ।
हरि गुरु चरना । निसि दिन ररना ॥

—मान

सुवास (सवासन)

(न ज ल)

सब सुख धामहिं। रट मन रामहि।
तज जग कामहि। लहहु अरामहिं॥

—मान

वर्ण के छन्द—२५६

विद्युन्माला

(म म ग ग) ४, ४

मोहै, द्रोहे, कोहै, कामैं। नासै की है शक्ती जामै।
राधे-कृष्ण गाओ गाओ। निश्चै साधो मुक्ती पाओ॥

—मान

मल्लिका (समानी)

(र ज ग ल)

(१)

देश देश के नरेश। शोभिजै सबै सुबेश।
जानिये न आदि अंत। कौन दास कौन संत॥

—रामचन्द्रिका

(२)

बोलि यों मराल राज। साजि कै दुहूँ सुकाज।
माँगि कै विदा विनोद। जाति भो विरंचि कोद॥

—नैषधकाव्य

नगस्वरूपिणी (प्रमाणिका, प्रमाणी)

(ज र ल ग)

(१)

सुनो न ज्ञान कारिका। शुकी पढ़ै न सारिका।
न होम धूम देखिये। न गंध बंधु पेखिये॥

—केशव

(२)

नमामि भक्त वत्सलं। कृपालु शील कोमलं।
नमामि ते पदाम्बुजं। अकामिनां स्वधामदम्॥

—रामचरितमानस

कुमार ललिता† (कुमार लहरी)

(ज स ल ग)

(१)

रटो जु नँद नंद को। तजो जु भव फंद को।
हरो जु दुख द्वंद को। भजो जु सुख कंद को॥

—गदाधर

(२)

भजो जु ब्रजचंद को। तजो जु दुख द्वन्द को।
सजो जु सुख कंद को। लहौ बहु अनन्द को॥

—कन्हैयालाल

---

† कोई कोई 'ज स ग' के क्रम से इसे सात वर्ण का मानते हैं।

(३)

हमे तव बरै यहै । प्रभुत्व जब तो लहै ।
न दीठि यहु धौं परै । सु कौन चरचा करै ॥

—गुमान मिश्र

चित्रपदा

(भ भ ग ग)

सीय जही पहिराई । रामहि माल सोहाई ।
दुंदुभि देव बजाये । फूल तहीं बरसाये ॥

—रामचन्द्रिका

तुरगम (तुंग)

(न न ग ग)

बहुत बदन जाके । विविधि बचन ताके ।
बहु भुजयुत जोई । सबल कहिय सोई ॥

-रामचन्द्रिका

पद्म (कमल, मान, क्रीड़ा)

(न स ल ग)

(१)

हरि हर ररो ररो । भव-नद तरो तरो ।
दुख दल दरो दरो । सुख भल भरो भरो ॥

—हरदेव

तुरद

(ज ज ग ग)

भलो महराज ह्वै है। जिवै हरदेव द्वैहै ॥
करौ तदवीर सोई। नहीं अब ढील होई ॥

—सुजान चरित्र

माणवक (माणव का क्रीड़)

(भ त ल ग) ४, ४

पालक गो विप्रन को। शालक है शत्रुन को।
शत्रु अली, पन्दिन को। राज-सिवा दुष्टिन को ॥

—मान

नराचिका

(त र ल ग)

हो बात सत्य सो कहे। पै स्नेह मे सनी रहे।
पाले सदा स्वधर्म को। औ मानवीय-कर्म को॥

—मान

दिग्गीश (ईश)

(स ज ग ग)

बर मैं गुपाल मागौं। पद-पद्म प्रेम पागौं।
हर ध्याइ जो अनन्दै। दिग ईस जाहि बन्दै ॥

—दास

वितान

(स भ ग ग)

अपनी ही हठ ठाने। पर की बात न माने।
वह है मूरख मानी। निहचै लो यह जानी॥

—मान

९ वर्ण के छन्द—५१२

पाईता

(म भ स)

ताके दोनों कुल गनिये। औ दोनों लोचन मनिये।
जो ते नारी गुण गनियौ। सो हैं लागे श्रुति सुनियो॥

—नैषधकाव्य

बिम्ब

(न स य)

फल अधर बिंब जासो। कहि अधर नाम तासों।
लहत द्युति कौन मूँगा। बरणि जग होत गूँगा॥

—नैषधकाव्य

रतिपद (कमला, कुमुद)

(न न स)

दरस मिलत रवि सों। तपति गहत छबि सो।
परसि परसि हम को। शशि बढ़त तम को॥

—नैषधकाव्य

भुजग शशिभृता (भुजग शुभ्रता, भुजग शिशुसुता युक्ता)

(न न म) ७, २

दुख पर दुख भी पाओ। पर सत-पथ ही जाओ।
भव-भय-हर को ध्याओ। अनत न चित ले जाओ॥

—मान

१० वर्ण के छन्द—१०२४

सयुत (संयुक्ता)

(स ज ज ग)

(१)

हनुमंत लंकहि लाइ कै। पुनि पूँछ सिधु बुझाइ कै।
शुभ देखि सीतहि पाँ परे। मनि पाइ आनँद जी भरे॥

—रामचन्द्रिका

शाश्वती

(भ भ भ ग)

लक्ष्मण हाथ हथ्यार धरो। यत्न वृथा प्रभु को न करो।
हौं हय को कबहूँ न तजौं। पट्ट लिख्यो सोइ बाँचि लजौं॥

—रामचन्द्रिका

अमृत गति (त्वरित गतिः)

(न ज न ग) ५, ५

सुमति महा मुनि सुनिये। जग महँ सुक्ख न गुनिये।
मरणहिं जीव न तजहीं। मरि मरि जन्म न भजहीं॥

—रामचन्द्रिका

वामा (तुष्मा)

(त य भ ग) २, ८

दीनौं-दुखियों से प्रेम करे। सेवा करने का नेम धरे।
आये दिन कष्टों से न डरे। भाखे न कभी यौं 'हाय मरे'॥

—मान

चम्पक माला (रुक्मवती)

(भ म स ग) ५, ५

याचक है तेरे हम आये। देखत ही चारौ फल पाये।
मारग को आयासु वितावै। कारज को तौ आपु बतावैं॥

— नैषधकाव्य

कीर्ति

(स स स ग)

अब देव सँदेस न भाखौ। यह दंतकथा धरि राखौ॥
हम माँगत अंजलि जोरे। यह बोलि रही मुख मोरे॥

—नैषधकाव्य

मनोरमा (सुंदरी)

(न र ज ग) ६, ४

समय-साधता सुधी वही। समय-साध ना कुधी वही।
वचन पालता व्रती वही। वच न पालता व्रती नहीं॥

—मान

मत्ता

(म भ स ग) ४, ६

मोमे होवे अवगुण कोई । काटो, केशो सुमिरहुँ तोही ।
रामा कृष्णा प्रभु कह जोई । होवे ऊँचा सब पर सोही ॥

—गदाधर

शुद्ध विराट्

(म स ज ग)

हे शंभो ! भव-यातना हरो । जी में ये शुभ-भावना भरो ।
दीनों के हित में लगा रहूँ । जीते जी सब का सगा रहूँ ॥

—मान

मयूर सारिणी (मयूरी)

(र ज र ग)

दीनबंधु दीनबन्धु रामे । रामचन्द्र रामचन्द्र नामें ।
कृष्णचन्द्र, कृष्णचन्द्र-धामें । कीजिये सदा सदा प्रणामे ॥

—गदाधर

उपस्थिता

(त ज ज ग) २, ८

वीरा करुणाकर सागरं । धीरा कमलापति आगरं ।
वंशीधर बामन नागरं । धाता धन धाम उजागरं ॥

—गदाधर

पणव

(म न ज ग)

पूर्णानन्दहि हित जो भजै। देवाधीशहि मन से सजै।
क्रोधै कामहि छिन मे तजै। ताके ही घर पद्दहा बजै॥

—गदाधर

११ वर्ण के छन्द—२०४८

शालिनी *

(म त त ग ग) ४, ७

धामै-धामै, रत्न-वेदी सुहावैं।
वेदी-वेदी, भक्त संवाद भावैं॥
वादै ही सों, बोध चित्तै प्रकासै।
बोधै पाये, शंभु की मूर्त्ति भासै॥

—पूर्ण

(२)

कैसी कैसी, ठोकरें खा रहे हो।
कैसी कैसी, यातना पा रहे हो॥
तो भी हा! हा!! गीत क्या गा रहे हो?
चेतो मित्रो! हा! कहाँ जा रहे हो?

—मान

---

* शालिनी और इन्द्रवज्रा के योग से 'मुक्ति' उपजाति बनता है। उपजाति प्रकरण में देखो।

इन्दिरा (कनक मंजरी)

(न र र ल ग) ६,५

(१)

महर नंद का, पुत्र तू नहीं।
निखिल सृष्टि का, साक्षि रूप है ॥
उदित है हुआ, वृष्णि-वंश में।
व्यथित विश्व के, त्राण के लिये ॥

(२)

तव सुधा-मयी, प्रेम-जीवनी।
अघ-निवारिणी, क्लेश-हारिणी ॥
श्रवण-सौख्यदा, विश्व-तारिणी।
मुदित गा रहे, धीर अग्रणी ॥

—श्रीधर पाठक

दोधक (नील स्वरूपा, वन्धु)

(भ भ भ ग ग)

देखि फिरो सगरो जग मैं हूँ।
जानत है मन की गति तैं हूँ ॥
देखि परयो न कहूँ प्रभु तो सों।
दीनदयालु न दीन न मो सों ॥

-हरदेव

स्वागता (गगाधर)

(र न भ ग ग)

राज राज दशरत्थ तनै जू।
रामचन्द्र भुवचन्द्र बनै जू॥
त्यो विदेह तुम हू अरु सीता।
ज्यो चकोर तनया शुभ गीता॥

—रामचन्द्रिका

मोटनक (मोटक)

(त ज ज ल ग)

सो हैं घन स्यामल घोर घनै।
मोहैं तिन मे बक-पाँति मनै॥
सखावलि पी बहुधा जल स्यो।
मानो तिन को उगिलै बल स्यो॥

—रामचन्द्रिका

अनुकूला

(भ त न ग ग)

पावक पूज्यो समिध सुधारी।
आहुति दीनी सब सुखकारी॥
दै तब कन्या बहु धन दीन्हों।
भाँवरि पारि जगत् जस लीन्हो॥

—रामचन्द्रिका

सुमुखी

(न ज ज ल ग)

सब नगरी बहु सोभ रये।
जहँ तहँ मंगलचार ठये॥
बरनत हैं कविराज बने।
तन मन बुद्धि विवेक सने॥

—रामचन्द्रिका

रथोद्धता

(र न र ल ग)

(१)

चित्रकूट तब राम जू तज्यो।
जाय यज्ञ थल अत्रि को भज्यो॥
राम लक्ष्मण समेत देखियो।
आपनो सफल जन्म लेखियो॥

—रामचन्द्रिका

(२)

कौशलेन्द्र पदकंज मंजुलौ।
कोमलाम्बुज महेश वंदितौ॥
जानकी कर सरोज लालितौ।
चिंतकस्यमनभृंग संगिनौ॥

—रामचरित मानस

भुजंगी

(य य य ल ग)

(१)

बडाई न बाँटी बड़ो के लिये।
कडी तान ली तुक्कड़ों के लिये॥
समालोचको नम्रता धारिये।
महावीरता यो न विस्तारिये॥

—नाथूराम शंकर शर्मा

(२)

नही लालसा है विभो! वित्त की।
हमे चेतना चाहिये चित्त की॥
भले ही न दो एक भी सम्पदा।
रहे आत्म-विश्वास पूरा सदा॥

—मैथिलशरण गुप्त

कली (हाकलिका)

(भ भ भ ल ग)

शोभत दण्डक की रुचि बनी।
भाँतिन भाँतिन सुंदर घनी॥
सेव बड़े नृप की जनु लसै।
श्रीफल भूरि भयो जहँ बसै॥

—रामचन्द्रिका

श्येनिका

(र ज र ल ग)

आठ ओर आठ दीठि दै रह्यौ।
लोकनाथ आश्चर्य वै रह्यो॥
भूलि विश्व कर्म हू सु-चातुरी।
राजथान देखि चित्त आतुरी॥

—नैषधकाव्य

विध्वक माला (धीर)

(त त त ग ग) ६, ५

योद्धा भगे वीर, शत्रुघ्न आये।
कोदण्ड लीन्हे, महा रोष छाये॥
ठाढ़ो तहाँ एक, बालै विलोक्यो।
रोक्यो तहीं जोर, नाराच मोक्यो॥

—रामचन्द्रिका

इन्द्रवज्रा

(त त ज ग ग)

(१)

पाके तुम्हें शेष न और पाना।
हो क्योंकि, सारे सुख का खजाना॥
होते तुम्हीं से नर पूर्ण काम।
हे रौप्य-मुद्रे! तुमको प्रणाम॥

—मैथिलीशरण गुप्त

(२)

तेजस्वियो ! तेज जरा दिखादो ।
सच्छास्त्र विद्या सब को सिखा दो ॥
जो सो रहे है उनको जगा दो ।
आलस्य सारा उनका भगा दो ।

—गिरधर शर्मा

उपेन्द्रवज्रा*

(ज त ज ग ग)

(१)

बड़ा कि छोटा कुछ काम कीजै ।
परन्तु पूर्वापर सोच लीजै ॥
विना विचारे यदि काम होगा ।
कभी न अच्छा परिणाम होगा ॥

—मैथिलीशरण गुप्त

(२)

बलाभिमानी धरणी धनेश ।
कहो कहाँ हैं अब वे जनेश ?
चले गये हैं सब आप आप ।
हुआ न दो ही दिन का प्रताप ॥

—मैथिलीशरण गुप्त

---

* इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा के मेल से चौदह उपजाति छन्द बनते हैं, उपजाति प्रकरण मे इन्हे देखिये ।

वातोर्मि *

(म भ त ग ग) ४, ७

राका बोली, शशि से नाथ आओ।
मेरे काले, कच तो गूँथ जाओ॥
फूलो को ला, उनमे ही सजाओ।
मेरे जी मे, रस-धारा बहाओ॥

—गिरीश

उपस्थित

(ज स त ग ग) ६, ५

प्रमाद उर मे, मैं ही भरूँगा।
प्रसाद मन का, मैं ही हरूँगा॥
विषाद जग मे, मैं ही धरूँगा।
विमुक्त उस से, मैं ही करूँगा॥

—गिरीश

पथस्थित

(त ज ज ग ग)

पाखंड न छू हम को गया था।
थे चित्त सनेह-सने हमारे॥

---

* वातोर्मि और शालिनी के योग से 'द्विज' उपजाति बनता है। उपजाति प्रकरण में देखो।

हैं आज न तौर न वे तरीके।
हा! हा! अब वे दिन ही हवा हैं॥

—मान

भ्रमर विलसिता

(म भ न ल ग) ४, ७

तेरा मेरा, यह सब सपना।
माया को तू, समझ न अपना।
हो जी मे हो, भव-नद तरना।
तो तू प्यारे, हरि-हर ररना॥

—मान

गगन

(स स स ग ग)

वह भी दिन थे जब थे त्यागी।
अब तो हम हैं गहरे रागी॥
मन से शुचिता, समता भागी।
ह! ह! मोह-मयी-ममता जागी॥

—मान

शील

(स स स ल ल)

फटके भय पास न रे मन!
घर हो अथवा बन निर्जन।

निज लक्ष न भूल कभी क्षण !
पर-काज लगा अपना तन ।।

— मान

चपला

(त भ ज ल ग)

साथी न धैर्य यदि हो अपना ।
तो लक्ष्य-सिद्ध समझो सपना ।।
हाँ कीर्ति प्राप्त नर वे करते ।
निश्शंक जोकि जग मे चरते ।।

—मान

श्री पति

(भ भ न ग ल)

मोहन हे ! जब द्रवत आप ।
मोह न द्रोह न रहत पाप ।
हैं मिटते सब कठिन ताप ।
भूल नही लग सकत शाप ।।

—मान

१२ वर्ण के छन्द—४०९६

मोदक

(भ भ भ भ)

राज तज्यो धन धाम तज्यो सब ।
नारि तजी सुत सोच तज्यो तब ।।

आपनपौ जु तज्यो जग बंद है।
सत्य न एक तज्यो हरिचंद है॥

—रामचन्द्रिका

तोटक (त्रोटक)

(स स स स)

जय राम सदा सुखधाम हरे।
रघुनायक सायक चाप धरे॥
भव-वारण दारण सिंह प्रभो।
गुण-सागर नागर नाथ विभो॥

—रामचरित मानस

(२)

तप मे तनु-दाहक चण्ड हुए।
हिम की ऋतु मे हिम-खण्ड हुए॥
कुछ भी सुविचार किया न अरे?
तुम आखिर पत्थर ही ठहरे॥

—मैथिलीशरण गुप्त

स्रग्विणी (लक्ष्मीधर, श्रृंगारिणी, कामनीं, मोहन)

(र र र र)

राम आगे चले मध्य सीता चली।
बंधु पाछे भये सोभ सो मैं भली॥

देखि देही सबै कोटिधा कै भनो।
जीव जीवेश के बीच माया मनो॥

—रामचन्द्रिका

तामरस

(न ज ज य)

जब सब वेद पुरान नसैहैं।
जप तप तीरथ हू मिटि जैहै॥
द्विज सुरभी नहिं कोउ बिचारै।
तब जग केवल नाम अधारै॥

—रामचन्द्रिका

प्रमिताक्षरा

(स ज स स)

अब भी समक्ष वह नाथ खड़े।
बढ़ किन्तु रिक्त यह हाथ पड़े॥
न वियोग है न यह योग सखी।
कह कौन भाग्य मम भोग सखी॥

—साकेत

भुजंग प्रयात

(य य य य)

(१)

कहूँ किन्नरी किन्नरी लै बजावैं।
सुरी आसुरी बाँसुरी गीत गावैं॥

कहूँ पक्षिणी पक्षिणी लै पढ़ावैं।
नगी कन्यका पन्नगी को नचावैं॥

—रामचन्द्रिका

(२)

चतुर्वर्ग-धामं चतुर्धाम धन्यम्।
चतुर्धर्म-वर्णाश्रमाणां शरण्यम्॥
चतुर्दिक्षु-रम्य-स्थली-भूरि पुण्यम्।
भजे-भू-शिरो-भूषणं भू वरेण्यम्॥

—भारतगीत

इन्द्रवंशा*

(त त ज र)

योही बड़ा हेतु हुए बिना कही।
होते बड़े लोग कठोर यो नहीं।
वे हेतु भी यो रहते सुगुप्त हैं।
जो अद्रि अंभोनिधि में प्रलुप्त हैं॥

—चन्द्रदास

वंशस्थविलम्

(ज त ज र)

मुकुन्द चाहे यदुवंश के बने।
रहें सदा या वह गोप वंश के॥

---

* इन्द्रवशा और वशस्थ विलम् के मेल से अनेक उपजाति छन्द बनते हैं, उपजाति छन्दों में देखो।

न तो सकेंगे ब्रज-भूमि भूलि वे।
न भूलि देगी ब्रज-मेदिनी उन्हे।

—हरिऔध

(२)

बना रहे प्रेम सदा स्व-देश का,
तथा रहे ध्यान सदा स्व-वेश का।
बुरा हमारा न प्रभो चरित्र हो,
विचार-धारा अति ही पवित्र हो॥

—मणिराम गुप्त

द्रुतविलंवित (सुंदरी)

(न भ भ र)

(१)

ठुमुकते गिरते पड़ते हुए,
जननि के कर की उँगली गहे।
सदन मे चलते जब श्याम थे,
उमड़ता तब हर्ष-पयोधि था॥

—प्रिय-प्रवास

(२)

जय रमापति श्री पति धी विधे।
जगत-जीवन श्री करुणानिधे॥
जन न जानत ताप-त्रयी कहाँ?
सतत रक्षत आप खड़े जहाँ॥

—'सिरस'

मोतियदाम

(ज ज ज ज)

(१)

अदेवन की उर-आनि अनीति।
निवाहन को सुर-पालन-रीति॥
सुधारन को जन को अधिकार।
धरयो हरि बामन को अवतार॥

—पूर्ण

(२)

तमाल के ऊपर है बक पाँति।
कि नील शिला पर संत जमाति॥
नक्षत्रनि अंक लिये घनश्याम।
कि श्याम हिये पर मोतियदाम॥

— भिखारी दास

(३)

गिरे चरणों पर थे कपिनाथ।
उठा अपने कर से भुज थाम॥
लगा उरसे उर को कर प्यार।
मिले कपिनायक से सुख-धाम॥

'सेत'

कुसुम विचित्रा

(न य न य) ६, ६

जब कवि-राजा रघुपति देखे।
मन नर-नारायण सम लेखे॥
द्विज-बपु कै श्री हनुमत आये।
बहु विधि दै आशिष मन भाये॥

--रामचन्द्रिका

चन्द्रवर्त्म

(र न भ स)

स्नान दान तप जाप जो करियो।
सोधि सोधि उर माँझ जो धरियो॥
जोग जाग हम जा लगि गहियो।
रामचन्द्र सबको फल लहियो॥

--रामचन्द्रिका

वारिधर

(र न भ भ)

राजपुत्रि यक बात सुनौ पुनि।
रामचन्द्र मन माँह कही गुनि॥
राति दीह जमराज जनी जनु।
जातनानि तन जानत कै मनु॥

--रामचन्द्रिका

गौरी

(त ज ज य)

(१)

ताते ऋषिराज सबै तुम छाँड़ौ।
भूदेव सनाढ्यन के पद माँड़ौ॥
दीन्हो तिनको तुमही बरु रूरो।
चौहूँ युग होय तपोबल पूरो॥

(२)

सुग्रीव कहा तुमसों रण माँडौ।
तोको अति कायर जानि कै छाँड़ौं॥
बाली सब तो कहँ नाच नचायो।
तौ ह्याँ रन मंडन मोसन आयो॥

--रामचन्द्रिका

सारंग (मेनावली)

(त त त त)

जो जीव के दान को देत संसार।
तौ आपनो जीव दैहौं तु उद्धार॥
तू देतु है मोहि को जीव ते बाढ़ि।
हौं देउँ का तोहि दारिद्र सो डाढ़ि॥

—नैषधकाव्य

मोहन

(भ न ज य)

देखहु भरत चमू सजि आये।
जानि अबल हमको उठि धाये॥
हीसत हम बहु वारन गाजे।
दीरघ जहँ तहँ दुंदुभि बाजे॥

—रामचन्द्रिका

मंदाकिनी

(न न र र) ८, ४

कुमुद विमुद देख री भामिनी।
गत सकल विलोक री यामिनी॥
उड़ गण उड़ से गये व्योम से।
फट हृदय गया महा शोक से॥

—गिरीश

मालती (यमुना)

(न ज ज र) ७, ५

अहह ! यही वह, धर्म भूमि है।
अहह ! यही वह, कर्म-भूमि है ?
अब हम में वह, ज्ञान है कहाँ ?
अब हम में वह, मान है कहाँ ?

—मान

शैल

(य य य ज)

उमानाथ सा नाथ कोई न और ।
नही शान्तिदा है कहो और ठौर ।।
सदानंद की है नही और मुक्ति ।
इन्ही के भजे से मिले भुक्ति मुक्ति ।।

—मान

प्रभा

(न न र र)

मधुरिपु मधु सूदना माधवा ।
हरि प्रभु अज वामना साधवा ।।
सब जग सुख मे सुनो यादवा ।
तुम सब दुख के अहौ बाधवा ।।

—गदाधर

नव मालिती (बन मालिका)

(न ज भ य) ८, ४

रघुपति दीनबन्धु मम स्वामी ।
निज पद प्रीति देहु प्रभु नामी ।।
हर करि घोर अंश अविवेकू ।
कब करिहौ हमार सुधि नेकू ।।

—गदाधर

प्रियम्वदा

(न भ ज र)

तुरत ही करत मान खंडना।
दनुज नाश कर सन्त मंडना॥
अधिक शोक हर लोक सोहना।
परम सुंदर त्रिलोक मोहना॥

—गदाधर

उज्वल

(न न भ र)

कमल-नयन पावन राम को।
जलधि-शयन गोकुल-धाम को॥
सुगति करन मोहन श्माम को।
भजन करहु सोहन नाम को॥

—गदाधर

मधुर गति

(न न स स)

गगन-सघन-घन छाय रहे।
रिमि-झिमि जल बरसाय रहे॥
कलित-ललित-लतिका लहरें।
मगन-मगन सब ही बहरें॥

—मान

ललिता

(त भ ज र)

सोहै बसत सखि आज लाल के ।
गोपी मुख लगि गुलाल लाल के ॥
बाजै मृतग धुनि छाय के रही ।
गावे नचै सुनि सवै सु मैं कही ॥

—गदाधर

मृदुगति

(न न न य)

घन उमडि घुमडि नभ छाये ।
बरसत सरसत मन भाये ॥
लाखियत चहुँ दिसि धुरवा है ।
बन बन कुहकत मुरवा हैं ॥

—मान

तरल नयन

(न न न न) ६, ६

विघनहरन, भगत-सरन ।
सरन सुखद, जलद-बरन ॥
जगत-बिपिन, विपति हरन ।
कमल-नयन, भजहु चरन ॥

—कन्हैयालाल

श्रवण-प्रिय

(न न न र)

सत-जन-सतत कलपायगा ।
खल-नर न वह कल पायगा ॥
पर-हित-निरत तन जायगा ।
मर कर अमर बन जायगा ॥

—मान

विलास

(भ न य भ)

जीवन सफल उसी का है बस ।
दे पर-हित अपना जो सर्वस ॥
मान-सहित मरना श्रेयस्कर ।
मान-रहित नर जीवे ज्यो खर ॥

—मान

रमण

(ज र ज र)

जिसे न ध्यान जाति का न देश का ।
जिसे न भान है स्वदेश-वेष का ॥
महान नीच मातृ-भूमि भार है ।
पशू समान ज़िंदगी असार है ॥

—मान

धारी

(ज ज ज य)

मयूर पखाँ सिर सोभित नीको।
सुभाल सजो भल चंदन टीको॥
सुपीत-पटी वन-माल लसी है।
भली अधरान लसै बनसी है॥

—मान

नभ

(न य स स)

समर-धनी को सुख क्या ! दुख क्या !!
अमर बने तो जय है, भय क्या ?
नर-वर भागे न कभी रन से।
विचलित होता न कभी पन से॥

— मान

वासना

(न स ज र)

मन सरल शुद्ध जो रहा करे।
दुख-अनल-बीच क्यों दहा करे॥
भुख-मरन अन्न जो दिया करे।
फल परम-पुण्य का लिया करे॥

—मान

जलोद्धति गति

(ज स ज स) ६, ६

असार जग को, स सार समझो।
प्रपंच लख के, उदास मत हो ॥
डिगो न विचलो, चलो सँभल के।
प्रसन्न मन से, स्वधर्म-पथ मे ॥

—मान

प्रभासुखसार

(भ भ भ स)

देख घिरे दल बादल दुख के-
वीर नहीं टुक धारज तजते ॥
देख रुकावट रंचक मग मे-
कायर कंपित हो चल दल से ॥

—मान

द्रुतपदा *

(न भ ज य)

बचन-वीर जग मे बहुतेरे।
करम-वीर बिरल कहुँ हेरे ॥
धरम कर्म्म सन है मुख मोड़े।
सबन सत्य-श्रुति मारग छोड़े ॥

—मान

---

* कोई कोई आचार्य 'न भ न य' के क्रम से द्रुतपदा मानते हैं।

रत्नविचित्रा

(न य स य)

अब न बिसारो घनश्याम प्यारे ।
बहुत तुम्हारे बिन हैं दुखारे ।।
दरस बिना है बहु काल बीता ।
तनिक सुनाओ फिर नाथ गीता ।।

—मान

कण्ठ भूषण

(म य य य)

बोलो बात जो सो सदा सत्य-सानी ।
मीठी हो, खरी हो, गठी हो, प्रमानी ।
त्यागी हो न रागी बनो स्वाभिमानी ।
जाये प्राण ही किन्तु जाये न पानी ।।

—मान

श्रीदाम

(भ न न स)

चाह न तनिक धनिक-रुख की ।
चाह न सरग-बरग सुख की ।।
चाह न धन-जन निज-पन की ।
चाह फकत हरि-दरसन की ।।

—मान

सुभगपुट (पुट)

(न न म य) ८, ४

वलकल तन पै हा ! वस्त्र धारे ।
बन-बन फिरते है पुत्र प्यारे ॥
उन बिन अब भी मैं जी रहा हूँ ।
अधम निलज हूँ पापी महा हूँ ॥

—मान

साधु

(न स त ज) ७, ५

रटन जिस के लागी सिय राम ।
मिलत निहचै वाको हरि धाम ॥
भजन बिन को जाता भव-पार ?
भजन इक है सच्चा सुख-सार ॥

—मान

तारिणी

(न स य स)

शुचि सरल चित्त मे शान्ति रहे ।
तन निरुज पुष्ट हो कान्ति रहे ॥
मन अभय और निर्भ्रान्त रहे ।
सुखवलित झोपडी प्रान्त रहे ॥

—मान

१३ वर्ण के छन्द—८१९२

मञ्जु भाषणी

(स ज स ज ग)

चुप बैठ राम शुभ नाम लीजिए।
गुण-से अतीत-गुण-गान कीजिए॥
मत बाम दाम पर ध्यान दीजिए।
गत राग-द्वेष पय-प्रेम पीजिए॥

—गिरीश

कन्द

(य य य य ल)

कितै को धमकी धमाधम्म बन्दूक।
कितै को गये लूकि के ते गये सूकि॥
कितै बीर दै तीर चीरैं घनी भीर।
मिलै छीर मे छीर ज्यो नीर मे नीर॥

—विनायक

(२)

फबै फैल कै छूट यों भाल पै वार।
जनो चंद पै चारसी बाल के तार॥
लसै बीच ठोढ़ी भलो सामरो बिन्दु।
मनो कंज पै सोभजै भौंर को नन्द॥

—हरदेव

तारक

(स स स स ग)

तुम ही जग हौ जग है तुम ही मे ।
तुम ही विरची मरजाद दुनी मे ॥
मरजादहि छोडत जानत जाको ।
तब ही अवतार धरो तुम ताको ॥

—रामचन्द्रिका

कलहंस (सिहिनी, सिहनाद नन्दिनी)

(स ज स स ग)

हति इन्द्रजीत कहँ लक्ष्मण आये ।
हँसि रामचन्द्र बहुधा उर लाए ॥
सुनि मित्र पुत्र सुभ सोदर मेरे ।
कहि कौन कौन सुमिरो गुन तेरे ॥

—रामचन्द्रिका

पंकज वाटिका (कंज अवलि, पंकावली, एकावली)

(भ न ज ज ल)

सूरज चरण विभीषण के अति ।
आपुहि भरत पखारि महामति ॥
दुंदुभि धुनि करि कै बहु भेवनि ।
पुष्प वरषि हरषे दिवि देवनि ॥

– रामचन्द्रिका

माया

(म त य स ग) ४, ६

लीला ही सो, बासव जी मे अनुरागौ ।
तीनो लोकै, पालत नीके सुख पागौ ॥
जो जो चाहो, सो तुम बासौ सब लीजो ।
कीज मेरी, ओर कृपा सो सर भीजो ॥

—नैषधकाव्य

विलासी

(म त म म ग) ५, ३, ५

कैसे भूलेगी, लगी जो, गांसी सी बाते ।
जी मे शालें है, अभी भी, जो की थी घाते ॥
सच्चा मानी ही, लगाता, प्राणो की बाजी ।
मीठा पानी ही, कराता, है हाँ-जी, हाँ-जी ॥

—मान

चंचरीकावली

(य म र र ग) ६, ७

हर माधौ यादौ, बामना पूतनारी ।
प्रभू कृष्णा, विष्णा, कंस के प्राण हारी ॥
विभू रामा सीता, दास के सुक्ख कारी ।
कला शोभा धारी, कूबरी दीन तारी ॥

—गदाधर

राधा

(र त म य ग) ८, ५

भूल जाता जो दिये को, पुण्य सो पाता।
डूब जाता है उसीका, जो फिरे गाता ॥
मातृ-भाषा मातृ-भू से, है जिन्हे नाता।
धन्य है वे गण्य है वे, मान्य है भ्राता ॥

—मान

मनोरमा (राग)

(र ज र ज ग)

है महान मूढ़ ही चले कुपंथ मे।
बुद्धिमान जो चले सदा सुपथ मे ॥
वीर्यवान जान जो डरे न युद्ध से।
मित्र है वही मिले जो चित्त शुद्ध से ॥

—मान

प्रभावती

(त भ स ज ग) ४, ९

माधौ हरी, धरणि धरी कृपा करी।
यादौ दया करण अघासुरी अरी ॥
वंशीधरी, तन-मन गोपिका हरी।
कीन्ही भली, गिरधर कुबरी बरी ॥

—गदाधर

रुचिरा

(ज भ स ज ग) ४, ६

भजौ भजौ, मन ! अघ-ओघ-भंजने ।
रटौ रटौ, मन ! दुख-दोष गंजने ॥
कहौ कहौ, मन ! हरि नेत्र-कंजने ।
कहौ गहौ, मन ! तुम भक्त-रंजने ॥

—गदाधर

चण्डी

(त न स स ग)

जय जग-जननि हिमालय-कन्या ।
जयति जयति जय शक्ति सु-धन्या ॥
कलुष कुमति मद-मत्सर खण्डा ।
जयति जयति जन-तारणि चण्डी ॥

—भिखारीदास

चन्द्ररेखा

(न स र र ग) ६, ७

बुध वह लखे, देश को काल को जो ।
शठ निज तजे, चाल को ढालको सो ॥
सदय जन ही, दीन को मानते है ।
निरदय नही, दर्द को जानते है ॥

—भान

चन्द्रिका

(न न त त ग) ७, ६

कुरब-कलरवौ हू करै बोलि कै।
द्विरद गति हरै, मंद ही डोलि कै॥
दशन द्युति लजीली करै दामिनी।
हसनि सन जितै, चन्द्रिका भामिनी॥

—भिखारीदास

पुष्पमाला

(न न र र ग) ९, ४

मन-क्रम-बच-से बने, राम का जो।
निसि-दिन जप भी करे, नाम का जो॥
भव-निधि चट पार हो जायगा सो।
परम-सुखद मोक्ष भी, पायगा सो॥

—मान

मध्य

(न न न न ग)

धरम-करम कछु बनत नही।
पर-हित महँ मन लगत नहीं॥
हरि-हर-गुरु-पद भजत नही।
वह नर भव-निधि तरत नहीं॥

—मान

रमाबिलास

(र र र र ग)

अम्बिके ! अन्नपूर्णे ! उमे ! कालिका हे !
दुष्ट की घालिका, सृष्टि की पालिका हे !
चण्डिके ! शैलजे ! देवि ! दुर्गे भवानी।
'मान' के 'मान' को रक्ष हे शुभ-रानी ॥

—मान

चपकली

(ज ज ज ज ग) ५ ८

करे न कभी, नर काम निकाम को।
भजे नित ही, मनमोहन श्याम को ॥
मिले न कलेश, उसे फिर नाम को।
बिना श्रम सो, पहुँचे हरि धाम को ॥

— मान

बेला

(न य र र ग) ६, ७

समझ सके हैं, प्रेम का तत्व कोई।
बस कि पतगे, मीन हैं दीन दोई ॥
स्व-तन दिये पै, एक है वार देता।
स्व-घर छुटे ही, दूसरा प्राण देता ॥

—मान

केसरी

(य य र र ग) ६, ७

करो काम ऐसे, देश के लाभ के हो।
खड़े गर्व से हो, सभ्य संसार आगे ॥
पढ़ो मातृ-भाषा वेष-भूषा न भूलो।
भला क्या रखा है, व्यर्थ आडम्बरो मे ॥

—मान

विलेप

(न न न ज ल)

अति सदय-हृदय-मन-मोहन।
गत मद-मन रिपु पर कोह न।
शुचि सहज चरित अति पावन।
नर-रतन, जगत-मन-भावन ॥

—मान

पाटीर

(स न न स ग)

कहना सठ सन मरम न जी का।
रहना सदय हृदय सँग नीका।
लगता खल सँग अपयश टीका।
बिन दौलत जग समझहु फीका ॥

- मान

मनोरमा (मनोरम)

(स स स स ल ल)

हम हैं दसरत्थ महीपति के सुत।
सुभ राम सुलच्छन नामन संजुत॥
यह सासन दै पठये नृप कानन।
मुनि पालहु घालहु राछस के गन॥

—रामचन्द्रिका

हरिलीला (मुकुन्द)

(त भ ज ज ग ल) ८, ६

फूली लवंग लवली लतिका विलोल।
भूले जहाँ भ्रमर विभ्रम मत्त डोल॥
बोलै सुहंस शुक कोकिल केकिराज।
मानो वसत भट बोलत युद्ध काज॥

—रामचन्द्रिका

इन्दु वदना

(भ ज स न ग ग)

गो सुतनि लीलिन अघासुर अघानो।
बालकनि खाक लखि कान्ह अनखानो॥
लाल चख लाल मुख कै भृकुटि बाँकी।
पैठि मुख मारि किय देवनि निसाँकी॥

-समनेस

प्रहरणि कालिका

(न न भ न ल ग) ७, ७

दशरथ-सुत को, सुमिरन करिये।
बहु जप तप मे, भटकि न मरिये॥
विरद विदित है, जिन चरनन को।
प्रहरन कलि काटन दुख-गन को॥

—भिखारीदास

चारु (सुखदा)

(त य स त ल ल) ७, ७

केसौ हरि गोपाल, सु जै जै श्यामघन।
केसी बक चानूर, निपाती बीर रन॥
राधावर श्री कृष्ण, सु राखो आप पन।
गोपीपति गोविंद, हरौ जू पाप तन॥

—भिखारीदास

मदनमयंक

(र र ज र ल ग)

राम का नाम ले, न भूल कृष्ण नाम को।
लोभ को त्याग दे, विरोध क्रोध काम को॥
शंभु की शक्ति की, उपासना किया करे।
प्रेम से नेम से, सुसंग भी किया करे॥

—श्रीमाली

अपराजिता

(न न र स ल ग) ७, ७

रघुबर सर सैन, रावन की हुई।
छन महि महि मुंड रुंडन सो छई॥
हर-गन बहु मुंड-माल बनावही।
रुधिर पियत प्रेत-मण्डल गावही॥

—समनेस

हंसश्रेणी

(म भ न य ग ग)

फोरो भाँड़ो हरि महरि छरी लै धाई।
काँपे केसौ अँग अँग भरि आँखे आईं॥
जो मा जो हो सुत मुख भय भीनो दीनो।
सो ढीलो हाथ उठत गहि आली लीनो॥

—समनेस

अंश (अनन्द)

(ज र ज र ल ग)

पियो नृसिह रक्त पेट देत फारि कै।
लपेटि मेद गात आँत ग्रीव धारि कै॥
प्रताप ज्वाल माल आसमान लौं लगी।
सिकोरि नासिका मुदे मुखै रमा भगी॥

—समनेस

नागराज

(न न न न ल ल)

हरि नख पर गिरिवर तकि तकि।
इक रहहि अचल अँग जकि जकि॥
इक कहत भरत गर थकि थकि।
इक उठत सुरपतिहि बकि बकि॥

—समनेस

वासन्ती

(म त न म ग ग) ६, ८

वाणी-द्वारा प्रेम-प्रणय की हाला पीते।
वाणी-द्वारा कोप-अनल की ज्वाला पीते॥
वाणी द्वारा शक्ति, गठन की भी पाते हैं।
वाणी-द्वारा 'मान', परम मानी पाते हैं॥

—मान

मंजरी (वसुधा, पथा)

(स ज स य ल ग) ५, ९

द्विजराज हैं, न अथ वेद को मानते।
यहि पालते, न नृप-नीति को जानते॥
सब चाहते, सहज ख्याति हो नाम की।
दिन रात है, सनक प्राप्ति हो दाम की॥

—मान

रेवा (लक्ष्मी)

(म स त न ग ग) ८, ६

वाणी से पर नेत्रो की, सरनि[1] न आया।
कानो मे पैड़ मूढ़ो के, मन न समाया॥
जाने जो जड जीवो मे, अविदित माया।
देखे सो त्रिगुणातीता, त्रिभुवन काया॥

—ज्वालाराम नागर 'विलक्षण'

चन्द्रौरस

(म भ न य ल ग) ४, १०

भीनी भीनी, सुमन-सुरभि आई जहाँ।
बौरी बौरी, मधुप-अवलि धाई वहाँ॥
ज्यो-ज्यो होठो, हँस हँस वह फूली कली।
त्यो-त्यो डालो, झुक झुक कर झूले अली॥

—ज्वालाराम नागर 'विलक्षण'

नदी

(न न त ज ग ग) ७, ७

कर युग जिनमे, स्वर्ण था कान्ति पाता।
लख मृदुल पना, सून[2] भी था लजाता॥
विधि वश उनकी, आज है सम्पदाएँ।
कठिन तर पड़ीं, लौह की शृङ्खलाएँ॥

—ज्वालाराम नागर 'विलक्षण'

---

१. मार्ग। २ पुष्प।

१५ वर्ण के छन्द

चामर

(र ज र ज र)

(१)

बोलिये न झूठ ईठि मूढ़ पै न कीजिये।
दीजिये जु वस्तु हाथ भूलि हू न लीजिये॥
नेहु तोरिये न देहु दुख मंत्रि मित्र को।
यत्र तत्र जाहु पै पत्याहु जै अमित्र को॥

—रामचन्द्रिका

(२)

वेद मंत्र तंत्र शोधि अस्त्र शस्त्र दै भले।
रामचन्द्र लक्खनै सुविप्र छिप्र लैं चले॥
लोभ छोभ मोह गर्व काम कामना हई।
नीद भूख प्यास त्रास वासना सबै गई॥

—रामचन्द्रिका

मालिनी

(न न म य य)

(१)

विकल अति क्षुधा से देखि के पुत्र प्यारा।
जननि हृदय से है छूटती दुग्ध-धारा॥

लखकर कु-दशा त्यों दीन दु खी जनो की।
सहज प्रकट होती है दया सज्जनो की ॥

—लक्ष्मीधर वाजपेयी

(२)

विलसित उर मे है जो सदा देवता लौं।
वह निज- उर मे है ठौर भी क्यो न देता ॥
नित वह कलपाता है मुझे कान्त हो क्यो ?
जिस बिन कलपाते है नही प्राण मेरे ॥

—'हरिऔध'

निसिपाल (निशिपालिका)

(भ ज स न र)

(१)

गान बिन मान बिन हास बिन जीवही।
तप्त नहि खाय जल सीत नहि पीवहीं ॥
तेल तजि खेल तजि खाट तजि सोवही।
सीत जल न्हाय नहि उष्ण जल जोवहीं ॥

(२)

खाय मधुरान्न नहिं पाय पनही धरैं।
काय मन वाच सब धर्म करिबो करैं ॥
कृच्छ्र उपवास सब इन्द्रियन जीत हीं।
पुत्र सिख लीन तन जौ लगि अतीत हीं ॥

—रामचन्द्रिका

सुप्रिया (शशिकला, माला, चन्द्रावती, मणिगुण, शरभ)

(न न न न स) ६, ६

कहुँ द्विजगण मिलि सुख श्रुति पढ़हीं।
कहुँ हरि हरि हर हर रट रढ़ हीं॥
कहुँ मृगशिशु मृगपति पय पिय हीं।
कहुँ मुनिगण चितवत हरि हिय हीं॥

—रामचन्द्रिका

भ्रमरावली (नलिनी, मनहरण)

(स स स स स)

तबही भहराइ भजे खग है सरसो।
बहु सोरनि साजत है मिलि कै डर सो॥
लगि मारुत चचल पकज सुदर सो।
सर मानहुँ भूपति को बरजै कर सो॥

—नैषधकाव्य

मनहंस (मानसहंस, रणहंस)

(स ज ज भ र)

तप आगि मे तनु होमि कै सब संत हैं।
सुर लोक के फल लेन को बिलसंत है॥
सुरलोक सो तुम ओर आवत चाइ सो।
तुम ताहि क्यों न चहौ कहो केहि भाइ सो॥

—नैषधकाव्य

(२)

अलि जोग सीखन की नही परवाह है।
अब भोग भूषन की हमे नहि चाह है॥
बलि बार बारहि माँगती विधि सो यहै।
कित हूँ रहै नॅदलाल आनँद सो रहै॥

—समनेस

सारगी

(म म म म म) ८, ७

देखो रे देखो रे कान्हा, देखी देखा धावो जू।
कालिंदी मे कूद्यो कालीनागै नाथ्यो लावो जू॥
नच्चै बाला नच्चै ग्वाला, नच्चै कान्हाँ के संगी।
बज्जै भेरू रूदंगी तम्बूरा चगी सारंगी॥

—भिखारीदास

प्रभद्रिका

(न ज भ ज र)

रघुबर आज मातु पितु छाँड़ि के गये।
अवधपुरी मे दुःख द्वंद्व आय के छये॥
जगत कहै भले कुयश कैकई लये।
हम सब शोक के विपिन आज ते भये॥

—गदाधर

चित्रा

(मॅ म म य य) ८, ७

फूलें-फूले फूले बारी, सेज मे जो विहारै।
सीतै धूपै डाभै काँटे, मे सु क्यो पाँव धारै॥

सोचै भाखै रोवै झंखै, कौशल्या औ सुमित्रा।
कैसे सैहैं दु:खै सीता, कोमलांगी विचित्रा॥

—भिखारीदास

विपिन तिलका

(न स न र र)

डुलत नहि गात नहि बोलती बाँक ही।
सुरति तन की न गति जाति है ना कही॥
अनमिष सुनैन छबि साँवरी छै रही।
निरखि सिय राम कहँ चित्र सी ह्वै रही॥

—समनेस

चन्द्रलेखा

(म र म य य) ७, ८

राधा भूले न जानो, यो है लवन्या न मेरी।
जेहा तेहा तिहारी, सी तौ प्रभा है घनेरी॥
भौहैं ऐसी कमाने, हैं नैन सो कंज देखो।
नासा ऐसो सुआतुण्डै आस्य[1] सो चन्द्र लेखो॥

—भिखारीदास

ऋषभ

(स य स स य) ६, ६

मन मे कभी भी न रखो, छल-छिद्र भाई।
सपने पड़ीं वस्तु कभी, न छुओ पराई॥

---

१. मुख।

करते रहो काम भले, रुचि पूर्ण प्यारे।
खम ठोक हो आप खड़े अपने सहारे॥

—मान

चन्द्रकान्ता

(र र म स य) ७, ८

मार्ग काटो भरा है, छूटे सब साथ वाले।
घोर काली निशा है, झंझानिल भी झकोरे॥
हिंस्र-व्याघ्रादि भी है, सारे बन-बीच डोले।
मौत का सामना है, हे मोहन आ बचाओ॥

—मान

नल*

(न न र म र)

सुजन वचन सत्य, मीठे प्यारे बोलते।
श्रवण सु-मन-बीच, मिश्री मानो घोलते॥
सदय हृदय वीर, पक्के होते बात के।
सहन करते घाव, भारी वज्राघात के॥

—मान

---

* इसकी गति कुछ कुछ 'मिताक्षरी' से मिलती है। वर्णिक समसुक्तकों में मिताक्षरी को देखो।

१६ वर्ण के छन्द—६५५३६

नराच (पंच चामर, नागराज)

(ज र ज र ज ग)

जुवाँ न खेलिए कहूँ जुबान बेंद रचिए।
अमित्र भूमि माहि जै अभक्ष भक्ष भक्षिए ॥
करौ न मंत्र मूढ़ सो न गूढ़ मत्र खोलिए।
सुपुत्र होहु जै हठी मठीन सो न बोलिए ॥

—रामचन्द्रिका

(२)

विलोकि लोल कुण्डले, प्रभा कपोल पै बनी।
मुखारबिन्द पै अमद, बसिका फबी घनी ॥
गवै सु-राग-रागिनी, मृदग बीन बाजही।
कलिद-नदिनी समीप, नन्दलाल राजही ॥

—हरदेव

त्रिशोंषक (नील, लीला, अश्वगति)

(भ भ भ भ भ ग)

साधु कथा कथिये दिन केशव दास जहाँ।
विग्रह केवल है मन को दिन मान तहाँ ॥
पावन बास सदा ऋषि को सुख को बरषै।
को बरणै कविताहि विलोकत जी हरषै ॥

—रामचन्द्रिका

नंचर्ता (ब्रह्मरूप, चित्र)

(र ज र ज र ल)

एक सो यकै कहै भली खुली कपाल-माल ।
साल वारि दीजिये यकै कहै निहारि खाल ॥
दूलहै अदूलहै बनो दुकूल ऊन जाल ।
माँड़ये गिरीस के हँसै सिवै बिलोकि बाल ॥

—समनेस

रसवत्स

(त न भ भ भ ग)

कोई कह सरसीरुह मे अरसो कि कली ।
कोई कहत गुलाब प्रसून अलोल अली ॥
कोई कह कनकै कलसा मनि नील जड़ी ।
ठोढ़ी तिलनहि मो मत मोहन दीठि गड़ी ॥

—समनेस

कमलबंद

(म स भ म स ग) ७, ६

कूदे कान्ह कलिन्दी, व्रज काहू आनि पुकारो ।
द्वारे दौरि गिरो है, जसुदा लीन्हे दुख भारो ॥
धाए नंद अचेतै, नहि जातो सोक सम्हारो ।
रोवै हाथनि मींजे, सब गोपी गोप न चारो ॥

—समनेस

मदन ललिता

(म भ न म न ग)

हारे देखे कपि रिछन रोषे राम रन हैं।
मारे सारे निसिचर पवारे बान घन है॥
बेधे लंकापति सिर लसे यों सोन सर है।
मानो कारे कमलनिनि फारे भानु कर है॥

—समनेस

गुरुड़रुत

(न ज भ ज त ग)

वृक तकि छाग ज्यो भजत वृद्ध औ बाल को।
मृगपति देखि ज्यो भजत झुण्ड शुण्डाल को॥
हर हर के कहे भजत पाप को व्यूह ज्यो।
गरुड़ रुतै सुने भजत व्याल को जूह ज्यो॥

—भिखारीदास

सुधावेलि

(न य त य स ग) ८, ८

मुनि थल आगे त्यागे, सवरी गेह सिधाये।
अहिरन ही के काजै, मघवा मान मिटाये॥
सुपच बड़ाई पाई, मख घंटा बजवाये।
जग महँ ऐसो को है, प्रभु दीनै अपनाये॥

—समनेस

वाणिनि

(न ज भ ज र ग)

रघुबर बान काटि सिर रावनै गिराये।
छुधित पिसाच झुंड बहु रुंड मास खाये॥
उगिलत जात एक एक खात सीस नाये।
लखन गये जे कीस चख मूँदि भाजि आये॥

—समनेस

चकिता

(भ स म त न ग) ८, ८

कै हर जग नासै कै, टकोरो धनु दुनि कै।
कै सुरपति के गाजे, केई लैं धनु पुनि कै॥
आवतु न मनै एकौ, संकै यो सब गुनि कै।
काँपत ब्रज के बासी, केसी को रव सुनि कै॥

—समनेस

सुखसार

(भ त य ज र ल) ६, ५, ५

कोकिल की कूक, भली आम्र की, विसाल डार।
नेह सने चातक, हैं पी कहाँ, रहे पुकार॥
पावस को पौन, बहै मंद सी, परै फुहार।
बागन के बीच, परे झूलना, खरी बहार॥

—मान

वाणी हास

(न य म म स ग) ८, ८

कर लकुटी लै धाई, सारी भूली अटपाई ।
थर थर देही काँपै, आँखो मे है डर छाई ॥
पिय कर नोई बाँधे, देखो री सूध कन्हाई ।
ब्रज सिगरे सो जीवे, मा सो एकौ न बसाई ॥

—समनेस

१७ वर्ण के छन्द—१३१०७२

मन्दाक्रान्ता

(म भ न त त ग ग) ४, ६, ७

(१)

ए—आँखें हैं जिधर फिरती, चाहती श्याम को हैं ।
कानो को भी मुरलि-रव की, आज लौं लगी है ।
कोई मेरे हृदय तल को, पैठ के जो विलोकै ।
तो पावेगा लसित उस में, कान्ति प्यारी उन्ही की ॥

—प्रियप्रवास

(२)

प्यारी न्यारी प्रभु-पद-रता कान्त चिन्ता उपेता ।
पाई जावे परम मधुरा मानवी-प्रीति पूता ॥
सद्भावो से विलस सरसे सारभूता दिखावे ।
होवे सारे रुचिर रस से सिक्त साहित्य सत्ता ॥

—हरिऔध

शिखरिणी

(य म न स भ ल ग) ६, ११

(१)

कुचालो ने मारे, मनुज मतवाले कर दिये ।
कुपंथो मे सारे, विकट कटु-भाषी भर दिये ।।
हठीले होने को, हठ न अगुओ की मति हरे ।
हमारे रोने को, सुनकर कृपा शंकर करे ।।

—नाथूराम 'शंकर' शर्मा

(२)

हिमांशू चन्दा सो, कुसुमशर तो सो कहत क्यो ।
नही साँचे दोऊ, इन गुनन मोसे जनन को ।।
खरी छोड़े ज्वाला, वह किरन पाला सँग धरी ।
तुहू बज्राकारी, निज सुमन के बानन करे ।।

—अभिज्ञान शकुन्तला-नाटक

पृथ्वी

(ज स ज स य ल ग) ८, ६

(१)

अगस्त ऋषिराज जू, बचन एक मेरो सुनो ।
प्रशस्त सब भाँति भूतल सुदेश जी मे गुनो ॥
सनीर तरु-खण्ड मण्डित समृद्ध शोभा धरै ।
तहाँ हम निवास की बिलम पर्णशाला करै ।।

—रामचन्द्रिका

(२)

समीर अति शीतला सुखद मन्द ऐसी चले।
मतंग-मद से भरे गमन झूमते ज्यो करे॥
सुवासित सरोज यो रव-मुख खोल यो थोड़े हिले।
नये शिशु पढ़े यथा तनिक घूमते घूमते॥

—गोविंददास

रूपक्रान्ता (भालचन्द्र)

(ज र ज र ज ग ल)

अशेष पुन्य पाप के कलाप आपने बहाय।
विदेहराज ज्यो सदेह भक्त राम को कहाय॥
लहै सुभुक्ति लोक लोक अंत मुक्ति होहि ताहि।
कहै सुनै पढ़ै गुनै जु रामचन्द्र चन्द्रिकाहि॥

—रामचन्द्रिका

मालाधर

(न स ज स य ल ग) ६, ८

बचन सुनिकै तही कनक हंस मोह्यो महा।
सरस नहि दाख यो पिक नवीन वाणी कहा॥
बदन लचि लाज सो नृप-कुमारि जानी जही।
मुदित मन ह्वै तही चतुर चारु-वाणी कही॥

—नैषधकाव्य

हारिणी (द्रोहारिणी)

(म भ न म य ल ग) ४, ६, ७

मेधा देवी, सुचित करनी, आनन्द विस्तारिणी ।
प्रायश्चित्तो, बहु जनम को, दण्डार्ध मे टारिणी ॥
दोषै खण्डी, दुरित हरणी, संताप संहारिणी ।
राधा माधो, चरित-चरचा, संद्रोह द्रोहारिणी ॥

—भिखारीदास

हरिणी

(न स म र स ल ग) ६, ४, ७

लजित करता, जे हैं अंभोज खंजन मीन के ।
बसत निज जे, ही में गोपाल लाल प्रवीन के ॥
फिरत बन मे, वे तौ पाले, परे पशु हीन के ।
त्रिय दृगन से, कैसे नैना, कहो हरिणीन के ॥

—भिखारीदास

वंशपत्र पतिता

(भ र न भ न ल ग) १२, ५

दीन दयाल वंश कुल तारण, भय हरना ।
मोद प्रदान कंस बक मारण, सुख करना ॥
माधव सत दीन जन कारण, गिरि धरना ।
श्रीपति चक्रपाणि मणि धारण, भजु चरना ॥

—गदाधर

भाराक्रान्ता

(म भ न र स ल ग) ४, ६, ७

नीकी लागै, सरस कविता, अलकृत सूनियो ।
सोहै है ज्यो, बिधु बदनि साज-बाज बिहूनियों ॥
नाही भावै, अरस कबहूँ, सुधी न एकौ घरी ।
भाराक्रान्ता अभरननि, ज्यो विभूषित पूतरी ॥

—दास

तरंग

(स म स म म ग ग) ५, ५, ७

उनकी मीठी प्यार भरी वे बातें भूलूँगी कैसे ?
रस की प्यासी मैं विष के प्याले को छूलूँगी कैसे ?
श्रवणो मे गूँजा करतीं वे रोकूँगी आली कैसे ?
मधु ही देती जो उनको मानूँगी मैं व्याली कैसे ?

—गिरीश

मजीरा

(म म भ त य ग ग) ६, ८

ऐसी क्या बातें हैं री कह, क्यो तू मुदमत्ता ऐसी ।
फूली फूली भूली होकर, भूली रस मग्ना जैसी ॥
मेघों सी शोभावाले बनमाली कर-लाली पायी ।
क्या, औ प्यारे फूलों के मिस, तेरे मुख लाली छायी ॥

—गिरीश

१८ वर्ण के छन्द—२६२१४४

चचरी (चरचरी, विधु-प्रिया)

(र स ज ज भ र ' ८, १०

छूटि गोल कपोल कुंतल स्वेद सोहत बिन्दु है।
स्याम बारिज से बड़े दृग पूर आनन इन्दु है॥
गुच्छ कान मयूर पच्छ किरीट दच्छिन नै रह्यौ।
आजु यो ब्रजराज जोहत जन्म को फल मैं लह्यौ॥

—समनेस

हीरक (हीर)

(भ स न ज न र) १०, ८

पंडित गण मडित गुण, दंडित मति देखिये।
छत्रिय वर धर्म प्रवर, क्रुद्ध समर लेखिये॥
वैश्य सहित सत्य रहित, पाप प्रगट मानिये।
शूद्र सकति विप्र भगति, जीव जगत जानिये॥

—केशव

महामोदकारी (क्रीड़ा चक्र)

(य य य य य य)

हरे कृष्ण केसौ कृपासिधु माधौ मुकुन्दो मुरारी।
हृषीकेश केशीरिपो नन्दनन्दा धरा चक्र धारी॥
प्रभो प्राणदाता परब्रह्म विष्णो वली कैटभारी।
हरौ जू हरौ वेदना पूतना प्राणहारी हमारी॥

—भिखारीलाल

मजीर

(म म भ म स म) ६, ६

मोह्यौ री आली मेरो मन, श्री वृन्दावन शोभा देखे।
देखे रीझेगी तोहूँ अति, मैं ही भाखत रेखा रेखे॥
ऐ री कान्हाजू को निर्तन, कोऊ चित्त न राखै धीरा।
जोटी जोटा नचै ग्वालिनी, बजै झालरि औ मजीरा॥

—दास

नन्दन

(न ज भ ज र र) ११, ७

मनु सुनि मो कह्यो चहत जो, दरयो बिथा के गनै।
तजि सब आसरै जगत को, करै एही तू धनै॥
भव-भ्रम को हनै भगति सो, सनै तनै औ मनै।
जसुमति नद ने गरुडस्यन्दने करै बंदनै॥

—दास

नाराच (महामालिका)

(न न र र र र) ६, ६

हरि गिरधर कोकिला, कठधारी महारूप तू।
त्रिभुवन सुखदा महा, दैत्यमारी बड़ो भूप तू॥
विपति-दहन तू बली, नासकारी सुधा कूप तू।
पतित पुरुष और पापीन को धर्म का यूप तू॥

—गदाधर

कुसुमित लतावेल्लिता

(म त न य य य) ५, ६, ७

जै जै गोविंदा, यदुपति हरी, माधवो दीन रागी।
जै जै गोपाला, त्रिभुवनपती, साधवा भूरि भागी॥
जै जै श्रीधामा, जगत अयना, संत के चित्त पागी।
जै जै आनंदा, हितकर दया, कीजिये मोह लागी॥

—गदाधर

सिंह विस्फूर्जिता

(म म भ म य य) ५, ६, ७

भक्तो के प्यारे, आरे! रखवारे, देवकी के दुलारे।
पापी संहारे, संसार-सहारे, शंख चक्रादि धारे॥
तेरी है माया, वर्षों दुख पाया, काल ने हाय घेरा।
हे शोभाशाली, दे दे बनमाली, श्रीपदो मे बसेरा॥

—ज्वालाराम नागर 'विलक्षण'

हरिणप्लुता

(म स ज ज भ र) ८, ५, ५

गोविंदा मनमोहना, यसुदालला, यदुनाथ जू।
हे माधौ कमलापते, बक घालका, ब्रजनाथ जू॥
आनंदा परिपूरणा, मधुसूदनामर नाथ जू।
चक्रपाणि हरे हरी, प्रभु यादवा-कुल-नाथ जू॥

—गदाधर

अश्वगति (तीव्र)

(भ भ भ भ भ स) ८, १०

माधव गोकुलचंद, गदाधर पावन निरता।
केशव पूरन धाम, हरीहर दूषन हरता॥
दीनन के प्रतिपाल, दया चित भावन धरता।
जो सुमिरे तव नाम, भला वह क्यो दुख भरता॥

—गदाधर

त्रिपुरारि

(न य न य न य) ६, ६, ६

कल हियरा मैं, गजमनि दामै, जनु उडु ग्रामैं।
पियर पगा मैं, लसत ललामै, अति अभिरामैं॥
मुख ससि भामै, द्दग रसना मैं, छबि सुखधामैं।
करि मन भोरै, चखनि चकोरैं दरसन स्यामैं॥

—समनेस

१६ वर्ण के छन्द—५२४२८८

शार्दूल विक्रीड़ित

(१)

(म स ज स त त ग) १२, ७

फूले कंज-समान मंजु दृगता, थी मत्तता-कारिणी।
सोने सी कमनीय-कान्ति तन की, थी दृष्टि उन्मेषिनी॥

राधा की मुसकान की मधुरता, थी मुग्धता-मूरि सी।
काली-कुचित-लम्बमान-अलके, थी मानसोन्मादिनी ॥

—प्रियप्रवास

(२)

आ बैठी उर मोह जन्य-जड़ता, विद्या बिदा हो गई।
पाई कायरता मलीन मन को, हा! वीरता खो गई ॥
जागी दीन-दशा दरिद्रपन की, श्री सम्पदा सो गई।
माया शकर की हँसाय हमको, रुद्रा बनी रो गई ॥

—नाथूराम 'शंकर' शर्मा

छाया

(य म न स त त ग) ६, ६, ७

अरी मेरी प्यारी, सजनि रविजे पी की कथा तो कहो।
कभी बीती बाते, हृदय उनका भी बेधती हैं अहो ॥
बडे निर्मोही है, न छन भर को, आते यहाँ श्याम है।
यहाँ खाना सोना, सकल बिसरा, आहो भरे याम है ॥

— गिरीश

मणिमाल

(स ज ज भ र स ल) १२, ७

हम क्या रहे कब ? क्या हुए अब ? है नही कुछ भान।
किस ओर सब हैं जा रहे इसका नही कुछ ज्ञान ॥
अब भी रहे यदि ऊँघते बस, मान लो अवसान।
सँभले, बढ़ें यदि चाहते जग-जीवितो-बिच 'मान' ॥

—'मान'

शंभु

(स त य भ म म ग) ५, ७, ७

त्रिशिरा के खण्डन जे भूमण्डन, केसी कंसा के काला ।
बनगोचारी, गिरि के धारी हरि, जै माधौ श्री गोपाला ॥
गणिका के तारण गीधो बारन, मैं तो हूँ चेरी तेरी ।
सुन दीनानाथ दया के सागर, भौ बाधा खोवो मेरी ॥

—हरदेव

रसाल

(भ न ज भ ज ज ल) ६, १०

मोहन मदन गुपाल, राम प्रभु शोक विदारन ।
सोहन परम कृपाल, दीन - जन आप उधारन ॥
प्रीतम सुजन दयाल, केशि बक दानव मारन ।
पूरण करुणा सुजान, दीन दुख दारिद टारन ॥

—गदाधर

चन्द्रमाला

(न न न ज न न ल) ११, ८

रघुबर नर हरि भजिये, तजि सब घर पुर ।
चरण शरण गहि रहिये, तिहि छबि रखि उर ॥
जगत-जनित-भय मिटि है, यह समझहु लखि ।
जनम करम सब सरि है, करहु भगति सखि ॥

—गिरवर सहाय

मेघस्फूर्जिता

(यँ म न स र र ग) ६, ६, ७

हरे रामा कृष्णा, सुजन सुखदा, राम आनंदकारी ।
कृपा धारी ज्ञाता, भव-भय-हरी, दीन के दुःख टारी ॥
रमाधीशा त्राता, जगमति हितू, संत के शोक हारी ।
दयासिन्धू मेरे, सुजन चित से, दीजिये पाप जारी ॥

—गदाधर

२० वर्ण के छन्द—१०४८५७६

गीतिका (गीत मुनिशेखर)

(स ज ज भ र स त ग) १२, ८

कुश मुद्रिका समिधै श्रुवा कुश, औ कमंडल को लिये ।
कटि मूल श्रोननि तर्कसी भृगुलात-सी दरसै हिये ॥
धनु बान तिक्त कुठार केशव, मेखला मृग चर्म स्यों ।
रघुवीर को यह देखिये रसवीर सात्विक धर्म स्यो ॥

—रामचन्द्रिका

दण्डिका

(र ज र ज र ज ग ल)

टार के अपार धार वार को सुधार कै गिरिन्द्रि पान ।
ग्वाल बाल जान कै अधीन हाल टाल के सुरेन्द्रमान ॥
केशि कंस कंदना कृपालु दीन बंदना हरो जु दोख ।
गोप गाय पाल जू दयालु नन्दलाल जू सुदेहु मोख ॥

—हरदेव

सुवदना (सर्ववदना)

(म र भ न य भ ल ग) ७, ७, ६

पूजा कीजै यशोदा, हरि हलधर को, मो सो सुनति हौ।
बाँधी मारो वृथा ही, इन कहँ अपनो, जायो गुनति हौ ॥
पालै मारै सजावै, सकल जग यहै, है दैत्य कदनै।
थाके जाके बखानै, करत सरस्वती स्यो सर्व वदनै ॥

—दास

सुधा (शोभा)

(य म न न त त ग ग) ६, ७, ७

बसै शंभू माथे, विमल शशि कला, पेलि ह्याँते कढ़ी है।
मरे हू प्राणी को, अमर करति है, साँचु या ते बढ़ी है ॥
कहै याको पानी, गुन गनत न को, हास जान्यो न जाको।
स्रवै सीरो सोतो, सुरसरि महिआँ, स्वच्छ साँचो सुधा को ॥

—दास

धवल

(न न न ज न न ल ग) ११, ९

रघुकुल रवि रघुबर को, वपुष निरखि हरषे।
भरत पुलक अति सिगरे, नयन सलिल बरसे ॥
प्रिय तर पिय अँग सुषमा, पट हठ दृग परसे।
निज सुकृत प्रथम तनु की, तनु धर जनु दरसे ॥

—गदाधर

रमणक

(भ भ भ भ म स ल ग) १२, ८

जो तिय लै हरि गो अरि बधुहि, लका दीन्ह बखानि है।
कै कुबरी सबरी अमरी गति, गोधै दीस न मानि है॥
देत सुदामहि संकित श्री गहि लीन्हो श्रीपति पानि है।
रे मन मंद ! भज नंद-नंदहि, को ऐसो जग-दानि है॥

—समनेस

२१ वर्ण के छन्द—

स्रग्धरा

(म र भ न य य य) ७, ७, ७

(१)

हे दुर्गे, विश्वधात्री, जननि, भगवती हे शिवे, हे भवानी !
आर्ये, कल्याणि, वाणी, भव-भय हरणी, चण्डि त्रैलोक्य रानी !
पाके भी हाय ! माता, हम सब तुम-सी, ईश्वरी शक्तिशाली !
होंगे संसार मे क्या, न अब फिर सुखी, तोड़ दु खार्त्तिजाली ?

—मैथिलीशरण गुप्त

(२)

हिंसा, आलस्य, ईर्ष्या, कलह, रुज, घृणा, फूट, चिन्ता, विषाद,
हो जावें लोप सारे व्यसन, अघ, व्यथा, मोह, माया, प्रमाद।
काम-क्रोधादि, तृष्णा तज, जगत करे धर्म-स्वातंत्र्य-पान,
पावे संसार सारे सुख, नित करते शान्ति-संगीत-गान॥

—लोचनप्रसाद पाण्डेय

नरेन्द्र (समुच्चय)

(भ र न न ज ज य) १३, ८

भाल विशाल पीन इभ इव भुज. काम सरानन भौहैं।
लाजत देखि लाल नव जलरुह भ्राजत नैन जु सौहैं॥
पादप चीर काम तरवर जनु, विश्व मनोरथ दाता।
देव अदेव सेव्य सरसिज पद, भूरि कृपा जन धाता॥

—गदाधर

मन विश्राम

(भ भ भ भ भ न य) १२, ६

मजु लतानि वितान तरे घन, राजत रुचिर अखारे।
कान्ह कृपा सब काम दहै तरु, हेरत सुर तरु हारे॥
सिद्ध बधू अँगराग सुगंधित, सोहत सुर सर न्यारे।
मंदर मेरुहि आदि महा गिरि, गोवरधन पर वारे।

—समनेस

सुखवितान

(भ भ भ त न भ स) ११, १०

मंजुल पानिप पानि भरो है, छवि लहरै लहरति है।
लोचन वारिज फूलि रहे है, बिहँसनि सौरभ मति है॥
कुंचित केस अली अवली त्यों, धुनि मुरली रव तति है।
मोहन आनन इन्दु सरै मे, मगन रहै अलि मति है॥

—समनेस

कविमयुर मुदकर

(भ भ भ भ भ भ र) १२, ६

नील घटा घन सी तन की दुति, विज्जु घटा पट पीयरे ।
वै धनु लौं बनमाल रही बक, पाँति मनो मुकता लरे ।।
ज्यो घहराति बजै मुरली बरसै रस बूँद सु हीयरे ।
पावस सों मन भावन आवत, ताप भरे हियरा हरे ।।

—समनेस

२२ वर्ण के छन्द—४१९४३०४

हसी

(म म त न न न स ग) ८, १४

श्री को चाहौ औरै दीनो, अतिथिन पर अति करुण करी है ।
इच्छा ही सो भोगै सागौ, नयन सहस सब सिधि सिधरी है ।।
तेरी बातें मीठी मीठी, सुनि सुनि तरल सुचित गति तेरी ।
तीनौ लोकै पालौ नीकै, धनि धनि धनि हरि मति तेरी ।।

—नैषधकाव्य

भद्रक

(भ र न र न र न ग) १०, १२

राम गुपाल दीन कुशला, हरे परम पावना भज मना ।
दीनदयालु कृष्ण भय हा, बली धरम धारना दुखहना ।।
पाप विदार केशि बकहा, धनी परम सुंदरा नरतना ।
प्रेम प्रतीत नेम हित दा, सुखी करन पापकाटहु घना ।।

—गदाधर

मोद

(भ भ भ भ भ म स ग)

गोकुल-नायक जै सुखदायक गोविद गोपीप्रान अधारा।
कंस-बिहंडन जै अघ-खण्डन जै जय श्री स्वामी करतारा॥
स्याम सरोरुह लोचन सुंदर श्रीपति सोभा धाम अपारा।
माधव जादव वश विभूषन दानौ दारन देव उदारा॥

—भिखारीलाल

मदिरा* (चकोर)

(भ भ भ भ भ भ भ ग)

(१)

सिधु तर्‌यौ उनको बनरा तुम पै धनु रेख गई न तरी।
बाँदर बाँधत सो न बँध्यो उन वारिधि बाँधि के बाट करी॥
श्री रघुनाथ प्रताप की बात तुम्है दसकंठ न जानि परी।
तेलहु तूलहु पूँछ जरी न जरी, जरि लंक जराइ जरी॥

—केशव

(२)

किंचित कोप के कारण सो जिहि, आनन ओप अनूपम सो।
गुंजित सिञ्जनि को धनु लै जुग छोरनि मंजु टकोरत जो॥
चचल पंच-शिखानि किये बरसावत सैन पै बान बिभो।
चूइ रह्यो रन-रंग महा यह बालक वीर बतावहु को॥

—उत्तर-रामचरित नाटक

* बाईस से छब्बीस वर्ण तक के गणबद्ध छन्द प्राय सवैया ही कहलाते हैं।

२३ वर्ण के छन्द—८३८८६०८

सुमुखी (मल्लिका, मानिनी)

(ज ज ज ज ज ज ज ल ग)

हिये बनमाल रसाल धरे, सिर मोर किरीट महा लसिबौ।
कसे कटि पीत पटी लकुटी कर आनन पै मुरली बसिबौ।
कलिन्दिन तीर खडे बलबीर सुबालन की गहि बाँह सबौ।
सदा हमरे हिय मंदिर मे यहि बानक सो करियं बसिबौ॥

—हरदेव

मत्तगयंद (मालती, इन्दव)

(भ भ भ भ भ भ भ ग ग)

(१)

हाथ गहे हैं कुठार कठोर जटा सी लसै जहँ जोति की ज्वाला।
काँधे निषग है बाँधे जटा कटि चीर कसे तन पै मृगछाला॥
हाथ मे बान कलाई पै सोहत डोलत पावन अच्छ की माला।
राजत है इक संग मिले जनु शान्ति सरूप औ वेष कराला॥

—लाला सीताराम 'भूप'

(२)

किंचित कोप के कारण सो जिहि, आनन ओप अनूपम सो है।
गुंजित सिञ्जनि को धनु लै जुग छोरनि मंजु टकोरत जो है।
चचल पंच-शिखानि किये बरसावत सैन पै बान बिमोहै।
चूइ रह्यो रन-रंग महा यह बालक बीर बतावहु को है॥

—उत्तर-रामचरित-नाटक

अद्रितनया (अश्व ललित)

(न ज भ ज भ ज भ ल ग) ११, १२

घट घट मे तुही बसति है, तुही बसति है स्वरूप मति के।
तुअ महिमा अरी रहित है, सदा हृदय मे त्रिलोक पति के।
निज जन को बिना भजन हू, कलेस हननी विथानि हनिनी।
जय जय श्री हिमाद्रि-तनया, महेश घरनी गनेश जननी ॥

—दास

चकोर

(भ भ भ भ भ भ भ ग ल)

जो कोउ दूर सो आव थके, तिन के दुख दूर करे ततकाल।
दै निज शीतल छाँह मनोहर हेतु बिना सुख देत कमाल ॥
कौन तिहारी कहै महिमा जन-सीदन जो लखि होत निहाल।
पाहन हूँ सो हन तिन को तुम, देत अमीफल धन्य रसाल ॥

—जनार्दन 'झा'

२४ वर्ण के छन्द—१६७७७२१६

गगोदक (गंगाधर, लक्ष्मी, खंजन)

(र र र र र र र र)

मेघ मदाकिनी चारु सौदामिनी रूप रूरे लसै देहधारी मनो।
भूरि भागीरथी भारती हंसजा अंश के है मनो, भोग भारे भनो ॥
देवराजा लिये देवरानी मनो पुत्र सयुक्त भूलोक मे सोहियो।
पक्ष द्वै सन्धि सन्ध्या सँधी है मनो लक्षिये स्वच्छ प्रत्यक्ष ही मोहियो ॥

—रामचन्द्रिका

मुक्तहरा

(ज ज ज ज ज ज ज ज)

सिया रघुनंदन की उनहारि गयो यह बाल महा सुखदाय।
मनो प्रतिबिम्बित है यहि माहि रही उनकी दुति आकृति छाय ।।
मिलै उनसो यहि को सब भाँति बिनैमय बोल सुशील सुभाय।
वृथा चित चंचल क्यो मन दैव, कुमारग मे भटक्यो इत आय ।।

—उत्तर-रामचरित नाटक

वाम (मंजरी, मकरंद, माधवी,)

(ज ज ज ज ज ज ज य)

बिनै सिसुता सो सुहावन चारु लसै महि मे अति तेज निकाई।
लखै जिह सूछम देखनहार परै न अजानहि रंच लखाई ।।
विमोह हरै मन मो बलवान रहै तप सो जिय मे थिरताई।
यथा लघु चुम्बक-खण्ड स्व-ओर कुधातुहि खेंचतु है बरि आई ।।

—उत्तर-रामचरित नाटक

तन्वी

(भ त न स भ भ न य)

बोलत कैसे, भृगुपति सुनिये, सो कहिये तन मन बनि आवै।
आदि बड़े हो बड़पन रखिये, जाहित तूँ सब जग जस पावै ।।
चदन हू मे, अति घन घिसिये, आगि उठै यह गुनि सब लीजै।
हैहय मारो, नृप जन सँहरे, सो यश लै किन युग-युग जीजै ।।

—रामचन्द्रिका

अरसात (आलसा)

(भ ७+र)

(१)

लाज धरौ सिव जू सो लरौ सब सैयद सेख पठाय पठाय कै।
'भूषन' ह्याँ गढ़-कोटन हारे उहाँ तुम क्यो मठ तोरे रिसाय कै ॥
हिन्दुन के पति सो न बसात सतावत हिन्दु गरीबन पाय कै।
लीजै कलंक न दिल्लि के बालम आलम आलमगीर कहाय कै ॥

—भूषण

(२)

जा थल कीन्हे बिहार अनेकन ता थल काँकरी बैठि चुन्यो करै।
जा रसना ते करी बहु बातनि ता रसना ते चरित्र गुन्यो करै ॥
'आलम' जौन से कुंजन मे करी केलि तहाँ अब सीस धुन्यो करैं।
नैननि मे जो सदा बसते तिनकी अब कान कहानी सुन्यो करै ॥

—आलम

किरीट

(भ ८)

वालि बली न बच्यौ पर खोरिहि क्यों बचि हौ तुम आपनि खोरिहि।
जा लगि छीर समुद्र मथ्यौ कहि कैसे न बाँधिहै वारिध थोरहि ॥
श्री रघुनाथ गनौ असमर्थ न देखि बिना रथ हाथिन घोरहि।
तोरयो सरासन संकर को जेहि सोऽब कहा तुव लंक न तोरहि॥

—केशव

दुर्मिल (चन्द्रकला)

(स ८)

(१)

अति हेय परिग्रह को समझा जप-यज्ञ ही के अभिमानी रहे।
यश फैल गया महि-मण्डल मे निगमागम के गुरु ज्ञानी रहे॥
धन पै नहि बेच दिया मन को तन प्राण दिये वह दानी रहे।
अब पूर्वजो के वह कृत्य कहाँ कविता रहे राम कहानी रहे॥

—सनेही

(२)

महिमा उमड़े लघुता न लड़े जड़ता जकड़े न चराचर को।
शठता सटके मुदिता मटके प्रतिभा भटके न समादर को॥
विकसे विमला शुभ कर्म-कला पकड़े कमला श्रम के कर को।
दिन फेर पिता वर दे सविता कर दे कविता कवि शंकर को॥

—नाथूराम 'शंकर' शर्मा

(३)

बन राम रसायन की रसिका, रसना रसियो की हुई सफला।
अवगाहन मानस मे कर के, जन मानस का मल सारा टला॥
बने पावन भाव की भूमि भली, हुआ भावुक भावुकता का भला।
कविता करके तुलसी न लसे, कविता लसी पा तुलसी की कला॥

—हरिऔध

महा भुजंग प्रयात

(य ८)

करो संत को संग त्यागो बिकारो,
मुरो मोह सो कोह सो जो नकारो।
कहो सत्य को झूठ को ना उचारो,
दया राखिये जो महा पुण्य सारो॥
कृपासिंधु श्रीराम संसार नाथं,
सदा प्रेम से नाम को लै पुकारो।
कटै कोटि बाधा लहै मोद सारो,
अनायास भौसिंधु के जाव पारो॥

—गोस्वामी साधो गिरि

२५ वर्ण के छन्द—३३५५४४३२

सुंदरी (मल्ली, सुखदानी)

(स ८ + ग)

हम दीन दरिद्र हुताशन मे, दिन-रात पड़े दहते रहते है।
बिन मेल विरोध महानद मे, मन बोहित से बहते रहते है।
कवि 'शंकर'! काल-कुशासन की, फटकार कड़ी सहते रहते है।
पर भारत के गत-गौरव की, अनुभूत-कथा कहते रहते है॥

—नाथूराम 'शंकर' शर्मा

अरविन्द

(स ८ + ल)

फटकारि कै दूर भगावत है, खल काक उलूकन को सब काल ।
फल उन्नति हेतु उपाय घने, रचि प्रान समान करै प्रतिपाल ।
जनसीदन जो कछु पाक्यौ गिरै, फल पाय तिन्हे अति होत निहाल ।
धनि है एहि बाग को माली अहो, जिन सेवै सुजीवन सींचि रसाल ॥

—जनार्दन 'झा'

लवगलता

(ज ८ + ल)

चढ़ी प्रति मंदिर सोभ बढ़ी तरुणी अवलोकन को रघुनन्दनु ।
मनो गृह दीपति देह धरे सु किधौ गृह देवि विमोहति है मनु ।
किधौं कुल देवि दिपै अति केशव कै पुर देविन को हुलस्यो गनु ।
जही सु तही यहि भाँति लसैं दिवि देविन को मद घालति है मनु ॥

— रामचन्द्रिका

२६ वर्ण के छन्द—६७१०८८६४

सुखद (किशोर, कुंदलता)

(स ८+ल ल) १२, १४

तृनहू सम तीनहुँ लोकनि को बल, जो नहिं आँखिन के तर लावत ।
अति उद्धत धीर गती सो मनौ, अचला को चले वुह धीर नवावत

निज बालक बैस ही मे गिरि के सम गौरवता की छटा छिटकावत।
तपधारी किधौ यह दर्प लसै, अथवा वर वीरता को मद आवत।।

—उत्तर-रामचरित नाटक

महामंजीर

(स ८ + ल ग)

नव दारुन वा अपमान सो तू, निहचै दृग नीरहि ढारति होइगी।
सिसु होन समै पै सिये बन मे, कहुँ बेहद पीडा सो आरति होइगी।।
घिरि हाय अचानक सिहनि सो, किमि बेबस धीरज धारति होइगी।
करिके सुधि मेरी डरी हिय मे, कहुँ तातहि तात पुकारति होइगी।।

—उत्तर-रामचरित नाटक

उपजाति वृत्त

इन्द्रवज्रा (त त ज ग ग) और उपेन्द्रवज्रा (ज त ज ग ग) के मेल से सोलह वृत्त बनते है। इनमे इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा को छोड शेष चौदह उपजाति वृत्त कहलाते है । यहाँ प्रस्तार सहित उनके उदाहरण दिये जाते है.—

प्रस्तार ❋

क्रम-संख्या	रूप	मूलवृत्तके संकेताक्षर	नाम उपजाति	क्रम-संख्या	रूप	मूलवृत्तके संकेताक्षर	नाम उपजाति
१	S S S S [1]	इ इ इ इ	इन्द्रवज्रा	९	S S S ।	इ इ इ उ	बाला
२	। S S S	उ इ इ इ	कीर्ति	१०	। S S ।	उ इ इ उ	आर्द्रा
३	S । S S	इ उ इ इ	वाणी	११	S । S ।	इ उ इ उ	भद्रा
४	। । S S	उ उ इ इ	माला	१२	। । S ।	उ उ इ उ	प्रेमा
५	S S । S	इ इ उ इ	शाला	१३	S S । ।	इ इ उ उ	रामा
६	। S । S	उ इ इ उ	हंसी	१४	। S । ।	उ इ उ उ	ऋद्धि
७	S । । S	इ उ उ इ	माया	१५	S । । ।	इ उ उ उ	सिद्धि
८	। । । S	उ उ उ इ	जाया	१६	। । । । [2]	उ उ उ उ	उपेन्द्रवज्रा [3]

❋ प्रस्तार के प्रत्येक रूप मे आये हुए गुरु लघु के चारो चिन्हो में से हर एक अपने मूल-वृत्त का सूचक है। गुरु चिन्ह इन्द्रवज्रा का और लघु उपेन्द्रवज्रा का द्योतक है। 'इ' से इन्द्रवज्रा और 'उ' से उपेन्द्रवज्रा का बोध होता है, जैसे —। S S S इससे यह समझना चाहिए कि इस रूप वाले उपजाति का पहला चरण उपेन्द्रवज्रा का और शेष तीन चरण इन्द्रवज्रा के होगे। १ यह रूप मूलवृत्त इन्द्रवज्रा का है। २ यह रूप मूलवृत्त उपेन्द्रवज्रा का है। ३ इन्द्रवज्रा के चरण का आदि वर्ण लघु होने पर वह उपेन्द्रवज्रा का चरण बनजाता है।

१. कीर्त्ति (।ऽऽऽ)

उ इ इ इ

(१)

दयादि जो सद्गुण विश्व मे है। वे भी तुम्ही से मिलते हमे है ॥
हे ग्रंथ ! कर्मण्य, उदार धीर। होते तुम्ही से हम शूर वीर ॥

—मैथिलीशरण गुप्त

(२)

नही कटैगी वह खूब जो लो। देगी न रंभा फल मिष्ट तौ लो॥
भूलो न माली ! यह किम्बदन्ती। "त्रासं विना नैव गुणा श्रेयन्ति"

—मैथिलीशरण गुप्त

२. वाणी (ऽ।ऽऽ)

इ उ इ इ

होता न जो जन्म कहीं तुम्हारा। अकार्य होता अति ही हमारा।
संताप, हे ग्रंथ ! बिना तुम्हारे। पाते अनेको हम लोग सारे ॥

—मैथिलीशरण गुप्त

३. माला (।।ऽऽ)

उ उ इ इ

तजो निरी भोजन भट्टता को। स्वदेश को शीश सभी झुकाओ ॥
हे ब्राह्मणो ! "हैं हम अग्र जन्मा"। ससार को आज यही बता दो ॥

—गिरिधर शर्मा

४. शाला (ऽऽ।ऽ)

इ इ उ इ

जो जीर्ण होने पर भी अपार। त्यागे न, हे ग्रंथ ! परोपकार॥
बिना तुम्हारे अति धन्य धन्य। है कौन ऐसा जगबीच अन्य॥

—मैथिलीशरण गुप्त

५. हंसी (।ऽ।ऽ)

उ इ उ इ

जहाँ हुए व्यास मुनि-प्रधान, रामादि राजा अति कीर्तिमान।
जो थी जगत्पूजित धन्य-भूमि, वही हमारी यह आर्य-भूमि॥

—महावीरप्रसाद द्विवेदी

६. माया (ऽ॥ऽ)

इ उ उ इ

(१)

श्रीमान, धीमान, वही यशस्वी। वही सुसम्पन्न वही मनस्वी॥
परोपकारी नर-रत्न जो है। स्वर्गीय है, जीवन-मुक्त सो है॥

—मान

(२)

यस्यास्ति वित्तं सनर कुलीन। सपंडित सश्रुतवान गुणज्ञ॥
सएव वक्ता सचदर्शनीयः। सर्व्वेगुणः कांचनमाश्रयन्ति॥

७. जाया (।।।ऽ)

उ उ उ इ

गिने हुए सज्जन-वृन्द का तो , कभी कभी मैं करता सु संग ।
परन्तु है पुस्तक मित्र ऐसा , होता कभी जो मुझसे न न्यारा ॥

—गिरधर शर्मा

८. बाला (ऽऽऽ।)

इ इ इ उ

वीरांगना भारत-भामिनी थी , वीर-प्रसू भी कुल-कामिनी थी ।
जो थी जगत्पूजित वीर-भूमि , वही हमारी यह आर्य-भूमि ॥

—महावीरप्रसाद द्विवेदी

९. आर्द्रा (।ऽऽ।)

उ इ इ उ

सुजान जो है अति धैर्य वाले , उद्देश्य से भ्रष्ट कभी न होते ।
प्राणान्त चाहे उनका भले हो , अवश्य पूरी करते प्रतिज्ञा ॥

—गोविंददास

१०. भद्रा (ऽ।ऽ।)

इ उ इ उ

सद्धर्म का मार्ग तुम्ही बताते, तुम्ही अघो से जग मे बचाते ।
हे ग्रंथ, विद्वान तुम्ही बनाते, तुम्ही दुखो से इसको छुड़ाते ॥

—मैथिलीशरण गुप्त

(२)

हे क्षत्रियो ! क्षत्रियता तुम्हारी, छिपी नहीं है जन-ताप-हारी ।
मालिन्य सारा उसका उड़ा दो, अनैक्य का मूल सभी मिटा दो ॥
—गिरधर शर्मा

११. प्रेमा (।।ऽ।)

उ उ इ उ

जहाँ सभी थे निज-धर्म धारी; स्वदेश का भी अभिमान भारी ।
जो थी जगत्पूजित पूज्य-भूमि, वही हमारी यह आर्य-भूमि ॥
—महावीरप्रसाद द्विवेदी

१२. रामा (ऽऽ।।)

इ इ उ उ

हे मौनिते ! मंगल-कारिणी तू, शीलेश्वरी शान्ति-विहारिणी तू ।
विरोध-विद्वेष-निवारिणी तू, विषाक्त वाणी-विष-हारिणी तू ॥
—सत्कविदास

१३. ऋद्धि (।ऽ।।)

उ इ उ उ

सदैव हे चातक-सूनु ! जी से, आशा लगाना घनश्याम ही से ।
न भूल जाना यह वंश-सन्था, "महाजनो येन गत सपन्था ॥"
—मैथिलीशरण गुप्त

१४. सिद्धि वा बुद्धि (ऽ।।।)

इ उ उ उ

तू जान के भी अनल-प्रदीप, पतंग ! जाता उस के समीप।
अहो ! नहीं है इस मे अशुद्धि, "विनाश काले विपरीत बुद्धिः ॥"

—मैथिलीशरण गुप्त

द्विज

(म त त ग ग) + (म भ त ग ग) ४, ७

शालिनी और वातोर्मि के मेल से 'द्विज' उपजाति बनता है —

वीरात्मा है धीर जो निमित्त। न्यायी है श्रीमान है सत्यवक्ता।
धर्मात्मा है सुधी जो उदार। सो सच्चा है, नर भू रत्न सार[1] ॥

मुक्ति (त त ज ग ग)+(म त त ग ग)

इन्द्रवज्रा और शालिनी[2] के मेल से 'मुक्ति' उपजाति बनता है —

स्वर्गीय आनंद स्वतंत्रता है।
मानी को तो नर्क है दासता ही ॥
कैसी ही हे नाथ दो यातनाऐं।
छीनो ना स्वाधीनता हा किसी की ॥

—मान

---

१ इस वृत्त का चौथा चरण वातोर्मि का शेष तीन शालिनी वृत्त के हैं।

२. इस उपजाति का पहला चरण इन्द्रवज्रा का और शेष शालिनी के है।

माधव[1]

(ज त ज र) + (त त ज र)

वंशस्थ विलम् और इन्द्रवशा के मेल से 'माधव' उपजाति बनता है.—

दया[3] मया छू जिसको नही गई,
पाषाण जी का नर क्रूर निर्दई।
है ढोर ही पुच्छ विषाण हीन है,
है भार भू का खल दीन हीन है॥

—मान

---

१. श्री प० लोचनप्रसाद जी पाण्डेय ने अपने स्वर्गीय बालक के स्मरणार्थ इन उपजाति वृत्त का नाम 'माधव' रखा है।

२ जिस तरह इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा के मेल से चौदह उपजाति बन जाते है उसी तरह इन वृत्तो के मेल से भी अनेक उपजाति बन सकते है। उदाहरण मे दिये गये उपजाति का पहला चरण 'वंशस्थ-विलम्' का और शेष तीन इन्द्रवशा के है।

उपजाति सवैया

१. मत्तगयंद *

इसका केवल तीसरा चरण सुदरी सवैया का है और शेष मत्तगयंद के चरण हैं —

(१)

गर्भ के अर्भक काटन को पटुधार कुठार कराल है जाको।
सोई हौ बूझत राज-सभा धनु को दल्यौ ? हो दलि हौं बल ताको ॥
लघु आनन उत्तर देत बड़ो लरि है, मरि है, करि है कछु साको।
गोरो गरूर गुमान भरो कहौ कौसिक छोटो-सो ढोटो है काको ?

—गोस्वामी तुलसीदास

(२)

या लकुटी अरु कामरिया पर राज तिहूँ पुर को तजि डारौं ॥
आठहु सिद्धि नवो निधि को सुख नंद की गाय चराय बिसारौं ॥
रसखानि कबौं इन आँखिन सो ब्रज के बन बाग तडाग निहारौं।
कोटिन हूँ कलधौत के धाम करीर क कुजन ऊपर वारौं ॥

—रसखानि

* किसी उपजाति सवैया मे जिस मूल छन्द के चरण अधिक हो, उसी नाम से उसे उपजाति कहना चाहिए और यदि दो-दो चरण दो-दो मूल छन्दों के हों तो दोनो नामो से उपजाति सवैया कहना चाहिए।

२. मदिरा

इसका तीसरा चरण दुर्मिल सवैया का है और शेष चरण मदिरा के है —

सिंधु तरयो उन को बनरा तुम पै धनु रेख गई न तरी।
बानर बाँधन सो न बँध्यो उन बारिधि बाँधि कै बाट करी ॥
अजहूँ रघुनाथ प्रताप की बात तुम्हे, दसकंठ न जानि परी।
तेलनि तूलनि पूँछ जरी न जरी जरी लंक जराइ जरी ॥

—केशव

३. दुर्मिल

इसका पहला चरण मदिरा सवैया का और शेष तीनो दुर्मिल के हैं —

(१)

भारत मे बन ? पावन तू ही तपस्वियो का तप-आश्रम था।
जग-तत्व की खोज मे लग्न जहाँ ऋषियो ने अभग्न किया श्रम था ॥
जब प्राकृत विश्व का विभ्रम था और सात्विक जीवन का क्रम था।
महिमा बन-वास की थी तब और प्रभाव पवित्र अनूपम था ॥

(२)

चारु हिमाचल आँचल मे, एक साल विसालन कौ वन है।
मृदु मर्मर शील झरै जल-स्रोत है पर्वत-ओट है निर्जन है ॥
लिपटे हैं लता द्रुम, गान मे लीन प्रवीन-विहंगन कौ गन है।
भटक्यौ तहाँ रावरो भूल्यौ फिरै, मद बावरौ सौ अलि को मन है ॥

—श्रीधर पाठक

वर्णिक दण्डक *

गण-वद्ध ‡

चण्ड वृष्टि प्रयात

(न न + र ७)

चरण शरण ह्वै सदा ताहि कीनो
कृपासिधु गोपाल गोविंद दामोदरो।
सदय हृदय ह्वै हमे पालि है
आपनो जानिके सोई विश्वेश विश्वंभरो॥

---

* दण्डक का शब्दार्थ है—'दण्ड देने वाला'। इन छन्दो के चरण इतने-इतने लम्बे होते है कि पढते समय दम टूटने लगती है। इसी से इनका नाम दण्डक रक्खा गया है।

‡ वर्णिक दण्डकों के दो भेद है—गण वद्ध और मुक्तक। जिन दण्डको की वर्ण-सख्या गण-क्रम अथवा गुरु-लघु क्रमानुसार होती है वे गणवद्ध अथवा साधारण दण्डक कहलाते है। और जो दण्डक गण-क्रम अथवा गुरु-लघु-क्रम से मुक्त हैं वे मुक्तक कहलाते है। इनमे वर्णों की नियत सख्या का होना ही मुख्य है। कहीं कहीं बीच मे और चरणान्त में गुरु-लघु का क्रम इन मे भी पाया जाता है पर पूरे चरण मे नहीं।

सुयश विदित जासु संसार के बीच मे
सर्वदा ईस है देव देवेश को।
भजन करिय चित्त मे ताहि को नित्य ही
दानि है सिद्धि को लोक लोकेश को॥

—दास

सुधाधर

(भ ४ + त ३ × भ २) १२, १५

कुंजर की जब टेर सुनी तब,
कीनो बिलम्बो न एकौ घरी जु गदाधर।
गीध अजामिल और गणिका द्विज—
नारी तरी जू रह्यो है यहाँ जस भू पर।
धारि लियो गिरि पानिनि ऊपर,
गोपी गुवालो बचाए सबै करुणाकर।
त्यो अब दोष दवानल ने बलि,
राखो हमे हूँ दया के निधान सुनो हर॥

—काव्य कुसुमाकर

मत्त मातग लीलाकर

(र ६ या इस से अधिक)

योग ज्ञाना नही यज्ञ दाना नहीं,
वेद माना नही या कली माँहि मीता कहूँ[1]।
ब्रह्मचारी नही दण्डधारी नही,
कर्मकारी नहीं है कहा आगमै जो छहूँ।

---

१. यह ६ रगण का छन्द है।

सच्चिदानंद आनद के कंद को,

छाँड़ि कैरे मतीमन्द भूलो फिरै ना कहूँ।

याहि तै हो कहीं ध्याय ले,

जानकी नाह को गावही जाहि सानंद वेदा चहूँ॥

सिंह विक्रीड़

(य ९ अथवा इस से अधिक)

यकै आतमा आन दूजो न देखै,

अही जीह लौं और दोषै न जीहै चलावै[1]।

न रोवै न गाव किये काल कमैं,

सबै सोक औ मोद पावै यहै वेद गावै।

सुआनैन पोषै सरीरै विकारै-

विनासै, मुनीरीति धारै, न चित्ते चलावै।

चहै सिद्धि नाही न है भक्ति माहीं,

सदा ही दसौ वेष धारै धरा ताहि ध्यावै॥

—समनेस

कुसुम स्तवक

(स ८ अथवा इस से अधिक)

विधना बिधि नाना हमे दुख देहु,

न देहु कुवास मलीनन के गन मे[2]।

मिलें मीत तो हो मिलै वे जिनकी,

रति हो गति हो रस रीति कवीनन मे।

---

१ यह ९ यगण का छन्द है। २. यह ८ सगण का छन्द है।

वरु घोर तें घोर घनेरे सहौं-

दुख, टेक रहे अपनी यह जीवन मे ॥

मन को मिले 'मान' कहो मन कीं,

न तो गोए रहो सु सदा मन की मन मे ॥

—'मान'

त्रिभंगी

(न ६ + स स भ म स ग) १६, १८

सजल जलद तनु लसत विमल तनु,

श्रमकन त्यो झलको है उँमगो है बुन्द मनो है

भुव युग मटकनि फिर फिर लटकनि,

अनमिषि नैननि जो है हरषो ह्वै है मनमोहै ।

पगि पगि पुनि पुनि खिनखिन सुनिसुनि,

मृदु मृदु ताल मृदगी मुरचंगी झाँझ उपंगी ।

बरहि बरहि अरि अमित कलनि कीर,

नचत अहीरन संगी बहु रंगी लाल त्रिभंगी ॥

--दास

अशोक पुष्प-मजरी*

(ग ल इच्छानुसार)

पीत झीन झींगुली लसे बसे सो हीय बीच,

गोकुलेश लाड़िलो सुनंद नंद ।

* यह अशोक-मंजरी ग ल के क्रम से २८ वर्ण का है ।

नैन बीच श्याममूर्त्ति, कान बीच वेणु नाद,
गूँजता रहे सदा सुमंद-मंद ।
नाम और चित्त बीच हो कभी न रंच बीच,
यों रहे लगाव ज्यों चकोर चंद ॥
राम-कृष्ण राम-कृष्ण राम-कृष्ण ध्यान गान,
चित्त में रहे बसा सदा अनंद ॥
—मान

नीलचक्र †

(ग ल के क्रम से ३० वर्ण)

जानि कै समै भुवाल राम राज साज साज,
ता समै अकाज काज कैकयी जु कीन ।
भूपते हराय बैन राम सीय बंधु युक्त,
बोल के पठाय बेग काननै सु दीन ।
ह्वै रह्यो विलाप को कलाप सो सुन्यो न जाय,
राय प्राण भो प्रयाण पुत्र के विहीन ।
आय के भरत्थ ह्वै बिहाल कै नृपाल कर्म,
सोध चित्रकूट गौन हेत नेम लीन ॥
—काव्य सुधाकर

सुधानिधि‡

(ग ल के क्रम से ३२ वर्ण)

का कर समाधि साधि का करै विराग जाग,
का करै अनेक जोग भोग हू करै सुकाह ।

---

† नील चक्र अशोक-मंजरी का ही एक भेद है ।

‡ सुधानिधि भी अशोक-मंजरी का ही एक भेद है ।

का करे समस्त वेद औ पुरान सास्त्र देखि,
कोटि जन्म लों पढ़ै मिलै तऊ कछू न थाह ।
राज्य लै कहा करै सुरेस औ नरेस ह्वै न,
चाहिए कहूँ सु दु:ख होत लोकलाज माह ।
सात-द्वीप खण्ड-नौ त्रिलोक सम्पदा अपार,
लै कहा सु कीजिये मिलै जु आय सीयनाह ॥
—काव्य सुधाकर

महीधर *

(ल ग के क्रम से २८ वर्ण)

धरी बिशाल पाग है जनौ भरी पराग है,
मनो हिमांशु जाग है सुधा किये ।
सुवर्ण गुच्छ हाथ है सुमोर पच्छ माथ है,
रसा जु सुच्छ साथ है बसो हिये ।
अनाथ नाथ तात है मनोज पुंज गात है,
सदा हमे सुहात है भलो जिये ।
सदैव चक्रपाणि है अधार मानि जानि है,
भरोस आस आनि है हृदै पिये ॥
—गदाधर

* ल ग क्रम वाले २८ वर्णों से प्राय बत्तीस वर्णों तक के छन्द अनंगशेखर के अन्तर्गत प्रचलित हैं। महीधर एक तरह से अनंग-शेखर का ही भेद है। ३२ वर्णों से अधिक के भी अनंग शेखर छन्द हो सकते हैं पर उनमें लघु गुरु के जोड़े रहने आवश्यक हैं अर्थात् लघु-गुरु के क्रम से वर्ण संख्या सम रहनी आवश्यक है।

अनंग शेखर (द्विनराच, महानराचिका)

(ल ग के क्रम से इच्छित वर्ण)

(१)

गरज्जि सिंहनाद लौ निनाद मेघनाद वीर,
क्रुद्ध मान साल सों क्रसानु बान छंडियं ।
लखी अपार तेज धार लक्खनौ कुमार बारि,
बान सों अपार धार वर्षि ज्वाल खंडियं ।
उडाय मेघमाल कों उताल रच्छपाल बाल,
पौन बान अत्र घाल कीस जाल दंडियं ।
भयो न होत होयगो न ज्यों अमान इन्द्रजीत,
रामचन्द्र बन्धु सो कराल युद्ध मंडियं ।।

—लक्ष्मण शतक

(२)

सदा कृपानिधान हौ, कहा कहौं सुजान हौ,
अमानि दान मान हौ, समानि काहि दीजिये ।
रसाल सिधु प्रीति के, भरे खरे प्रतीति के,
निकेत नीति रीति के, सुदृष्टि देख जीजिये ।
टकी लगी निहारियै सु आप त्यों निहारियै,
समीप ह्वै बिहारिये उमंग रंग भीजिये ।
पयोद मोद छाइये, बिनोद को बढ़ाइये,
विलंब छाँड़ि आइये किधौं बुलाय लीजिये ॥

—घनानंद

बसुधाधर

(स ९ + ल ल)

तजि मान अहै बलि मानि कह्यो करिये-
तनु चारु सिगार, रचौ सुभ चन्दन।
सज हार मनोहर फूलनि के उर पै,
अति श्वेत दुकूल सम्हार सुछन्दन।
अपने मुख चारु सुधानिधि की कर सो,
मुख सौतिन के करिये अरविन्दन।
चलिये यमुना-तट मंजुल कुजन मे
जहँ रास सुचारु रच्यो नँद-नंदन॥

—हरदेव

कलाधर

नील चक्र छन्द के चरणान्त मे एक गुरु बढ़ा देने से कलाधर छन्द होता है—

जाय के भरत्थ चित्रकूट राम पास बेगि,
हाथ जोरि दीन ह्वै सुप्रेम ते बिनै करी।
सीय तात मात कौशिला बशिष्ठ आदि पूज्य,
लोक बेद प्रीति नीति की सुरीति ही धरी।
जान भूप बैन धर्मपाल राम ह्वै सकोच,
धीर दै गँभीर बंधु की गलानि है हरी।
पादुका दई पठाय औध को समाज साज,
देख नेह राम सीय के हिये कृपा भरी॥

—काव्य कुसुमाकर

मुक्तक *

अनियमित दण्डक†

सोलह और चौदह के विराम से तीस वर्ण का अनियमित दण्डक छन्द होता है। इसके चरणान्त मे प्राय गुरु अथवा मगण रहता है:—

(१)

जाके चूडा मे जो बाँकी गुम्फित कपाल-माल,
रकत अररर तहाँ गंग-वारी।
विज्जु छटा तुल्य जो ललाट लोचन की ज्योति,
वासो मिलि जगमगै तासु प्रभा प्यारी।

---

* मुक्तक प्राय लय प्रधान होते है । लय ठीक ठीक रखने के लिए सम पद के बाद सम पद और विषय पद के बाद विषम पद रखने चाहिएँ। पद से तात्पर्य है विभक्ति सहित शब्द, जैसे —रामहि, मोहि, आदि वर्णो वाले सम पद कहलाते हैं।

ध्वनि का निर्णय छन्द के प्रथम चरण के आद्यष्टक मे ही कर लेना चाहिए। आगे का क्रम उसी के अनुसार ठीक रखने से लय ठीक रहती है। मुक्तकों मे यति आठ आठ वर्णों पर होनी चाहिए और यदि ऐसा न हो सके तो मनहरणादि में सोलह, पन्द्रह आदि पर लगाना भी ठीक है।

† महाकवि 'देव' ने ३० वर्ण से लेकर ३३ वर्ण तक के मुक्तक दण्डकों को अनियमित दण्डक भी कहा है क्यो कि गण-क्रम और गुरु लघु आदि का कोई नियम इन पर लागू नहीं होता।

कोमल सु-केतकी कली की कोर ताकौ जहँ,
भ्रम होत चारु बाल चन्द्र को निहारी।
ऐसे चन्द्रमौलि के भुजंग बल्लरी सो चन्दु,
बँधे, जटाजूट हरै विपति तुम्हारी॥

(२)

आनँद सों नन्दीगन मुरज बजावैं, सुनि-
आवै मानि गरज कुमार मोर प्यारौ।
तिह डर फनहि सिकोर भाजि प्रविसत,
जिन सूँडि रन्ध्र माहिं बासुकी बिचारौ।
चिंघरत तासो, शिव ताण्डव मे, गुंजे दिसि,
मद लोभ भौंर-पुंज डोलै मतवारो।
यहि सो डुलाइबौ स्वसीस गननायक कौ,
होहि सब भाँति सों सहायक तुम्हारौ॥

—कविरत्न सत्यनरायण

मनहरण * (मनहर, घनाक्षरी)

इस छन्द के प्रत्येक चरण मे सोलह और पन्द्रह के विराम से इकतीस वर्ण होते हैं और चरणान्त मे कम से कम अन्त्य-वर्ण अवश्य गुरु रहता है—

---

* आगे एक नोट में बतलाया जा चुका है कि मुक्तक दण्डको की लय ठीक रखने के लिए सम के बाद सम और विषम के बाद विषम पद रखने चाहिएँ। घनाक्षरी के शब्द बिठाने के कुछ नियम 'रत्नाकर' जी

(१)

बोधि बुधि बिधि के कमण्डल उठावत ही,
धाक सुर-धुनी की धसी यों घट-घट मैं।
कहैं 'रतनाकर' सुरासुर ससक सबै,
बिबस बिलोकत लिखे से चित्र-पट मैं।
लोकपाल दौरन दसौ-दिसि हहरि लागे,
हरि लागे हेरन सुपात बरबट मैं।
खसन गिरीस लागे, त्रसन नदीस लागे
ईस लागे कसन फनीस कटि-तट मैं॥

—रत्नाकर

ने लिखे हैं वे यहाँ उद्धृत किये जाते हैं। विस्तार भय से उन नियमो के अनुसार उदाहरण नही दिये जा सकते।

नियम

१. मुक्तक दण्डकों (घनाक्षरी आदि) के आदि में तथा चार, आठ, बारह, सोलह, बीस, चौबीस और अट्ठाईस वर्णों के पश्चात् यदि कोई शब्द आरभ हो तो उस के आदि मे जगण (।ऽ।) तथा रगण (ऽ।ऽ) न पडने पावें। साथ ही यह भी ध्यान रहे कि ऐसे शब्द के आरभ मे यगण (।ऽऽ) और मगण (ऽऽऽ) के आ जाने से भी लय मध्यम श्रेणी की होजाती है।

२ यदि कोई शब्द पाँच, नव तेरह, सत्रह, इक्कीस, पच्चीस, अथवा उन्तीस अक्षर पर समाप्त हो तो उस शब्द के अन्त मे लघु-गुरु (।ऽ) पडने चाहिएँ और यदि गुरु-गुरु (ऽऽ) अर्थात् दो गुरु

(२)

चलो है सुवीर धीर अमंद हँकारे देत,
अंग दहकारे देत दानव ही धर के।
गयो 'ललितेश' तहाँ बैठो दानवेश जहाँ,
दंपति निहारै एक एकै नन भर के।
लंक परो सोर चहूँ ओर खोर खोरन मे,
केसरी किसोर फेर आइगो निदरिके।
तारा पति पूतै तारा पति सम देख तहाँ,
तारा इव मुँदै नन तारा तमीचर के॥

—ललितेश

उस के अन्त मे पडे तो यद्यपि उस की गति सर्वथा तो नष्ट नही होती पर मध्यम श्रेणी की जरूर हो जाती है।

३. पाँच नव, तेरह, सत्रह, इक्कीस, पच्चीस तथा उन्तीस वर्णों के बाद जो शब्द आवे वह यदि एक ही वर्ण का हो तो चाहे लघु हो चाहे गुरु परन्तु यदि एक अक्षर से अधिक का हो तो उस के आदि मे लघु होना चाहिए।

४ दो, छ, दस, चौदह, अट्ठारह, बाइस तथा छब्बीस वर्णों के बाद यदि कोई शब्द आवे तो उसके आदि में जगण (ऽ। ऽ) तगण (ऽऽ।), मगण (ऽऽऽ) तथा यगण (।ऽऽ) मध्यम गति के होते है।

५ तीन, सात, ग्यारह, पन्द्रह, उन्नीस, तेईस तथा सत्ताईस अक्षरो के बाद जो शब्द आवे और एक अक्षर से अधिक का हो तो

(३)

देखत ही आसु ताहि काल के हवाले करौं,
बाज के समान ज्यो कपोत सो पकरिहौं।
संग 'रामनारायन' जंग को बिरंचि आवै,
याही रंग-भूमि बीच कीच सो कचरिहौं।
मोचि हौं गुरू को सोच आपनी न राखौं पोच,
भाखो प्रण पारि भौन फेरि पाँव धरिहौं।
नीलकंठ जू को जिन तोरो है कोदंड चंड,
ताके भुजदंड आज खंड-खंड करिहौं॥

—रामनारायण दास 'अवधूत'

(४)

चीखते थे हाथी हय हीसते थे बार बार,
बैरियो मे रल्ला सुन हल्ला पड जाता था।
कट्ट कट्ट रुण्ड मुण्ड झुण्ड झख मारते थे,
झट्ट पट्ट बीरता का झण्डा गड जाता था।
हेकड़ो की हेकड़ी दबाके दुम भागती थी,
मुगलो का सारा मद मान झड़ जाता था।
लेकर स्वतंत्रता की तेज तलवार जब,
प्रणवीर प्रबल प्रताप अड जाता था॥

—हरिशंकर शर्मा

उसके आरभ मे लघु-गुरु (। ऽ) का होना आवश्यक है। पर यदि एक ही अक्षर का शब्द हो तो उसके लिए कुछ नियम नही है।

—कविकौमुदी से उद्धृत

(५)

देते हैं दिखाई सब दृश्य अभिराम यहाँ,
सुषमा सभी की सुधि श्याम की दिलाती है।
फूली फली सुरभित रुचिर द्रु मालियों से,
सुरभि उन्ही की दिव्य देह की ही आती है।
सुयश उन्ही का शुक सारिका सुनाती सदा,
कूक कूक कोकिला उन्ही का गुण गाती है।
हरी भरी दृग-सुखदाई मन-भाई मंजु,
यह ब्रजमेदिनी उन्ही की कहलाती है॥

—ठाकुर गोपालशरणसिंह

(६)

हाँसी बिन हेत माँहि दीसति बतीसी कछु,
निकसी मनो है पाँति ओछी कलिकान की।
बोलन चहत बात टूटी सी निकसि जति,
लागति अनूठी मीठी बानी तुतलान की।
गोद ते न प्यारो और भावे मन कोई ठाँव,
दौरि दौरि बैठे छोड़ि भूमि अँगनानि की।
धन्य धन्य वे हैं नर मैले जो करत गात,
कनियाँ लगाय धूरि ऐसे सुवनान की॥

—राजा लक्ष्मणसिंह

(७)

सुनसान कानन भयावह है चारो ओर,
दूर दूर साथी सभी हो रहे हमारे है।

काँटे बिखरे है कहाँ जावे जहाँ पावे ठौर,
छूट रहे पैरो से रुधिर के फुहारे हैं।
आ गया कराल रात्रिकाल है अकेले यहाँ,
हिंस्र-जन्तुओं के चिन्ह जा रहे निहारे है।
किस को पुकारे यहाँ रोकर अरण्य-बीच,
चाहे जो करो शरण्य ! शरण तुम्हारे है॥
—सियाराम शरण गुप्त

रूप घनाक्षरी

इस छन्द के प्रत्येक चरण मे सोलह-सोलह के विराम से बत्तीस वर्ण होते हैं और चरणान्त मे गुरु लघु अथवा लघु रहता है† —

(१)

गोरे गोरे पायँन सो कढि रही मद मद,
पायल औ घुँघुरू की रसभरी झनकार।
कर बीच ककन औ कटि बीच किकिनी हू,
खनकि उठति सग पूरी करि बार बार।
धारि जो सितार हाथ पास पास चलो जात,
आँगुरी चलाय रह्यो भूमि झनकारि तार।
तीर धरि तासु अलबेली मृदु-तान छाँड़ि,
गाय उठी गीत यह अंग गति अनुसार॥
—रामचन्द्र शुक्ल (बुद्ध चरित)

† कहीं कहीं चरणान्त में गुरु भी पाया जाता है, जैसा कि पद्माकर के उदाहरण मे दिये हुए तीसरे छन्द से स्पष्ट है।

(२)

छन छन छीजत न देखहि समाज-तन,
हेरहि न विधवा छ टूक होत छतियान।
जाति को पतन अवलोकहि न आकुल है,
भूलि ना विलोकहि कलकी होत कुल मान।
'हरिऔध' छिनत लखहि न सलोने लाल,
लुटत निहारहि न लोनी-लोनी ललनान।
खोले कछु खुली पै कहाँ है ठीक-ठीक खुली,
अधखुली अजौ है हमारी खुली अँखियाँ न॥

—रसकलस

(३)

चालै क्यो न चदमुखी, चित मे सुचैन करि,
तित वन बागन घनेरे अलि घूमि रहे।
कहै 'पदमाकर' मयूर मंजु नाचत है,
चाय सो चकोरिनि चकोर चूमि चूमि रहे।
कदम अनार आम, अगर असोक थोक,
लतनि समेत लोने लोने लगि भूमि रहे।
फूलि रहे फल रहे, फैलि रहे फबि रहे,
झपि रहे झालि रहे, झुकि रहे झूमि रहे॥

—पद्माकर

डमरू

इस छन्द के प्रत्येक चरण मे आठ, आठ, अथवा सोलह-सोलह के विराम से बत्तीस वर्ण होते हैं जो सब लघु रहते हैं—

मख[1]-हन, मरदन-मयन नयन त्रय,
बटतर अयन रजत-परबत-पर।
चरम बसन तन, भसम प्रथम-गन,
ससधर[2]-धरन, गरल-गर-गरधर[3]।
हरन व्यसन[4] जन, करन-अमल-मन,
भज मन! असरन-सरन अमर-वर।
चढ़त बरद बर, बरद[5] प्रनत-रत,
हरत जगत-भय, जय जय जय हर ॥

—भारती-भूषण

जल हरण

इस छन्द के प्रत्येक चरण के अन्त मे सोलह-सोलह के विराम से बत्तीस वर्ण रहते है और पदान्त मे प्राय दो लघु रहते है.—

चलन हिंडोर की कदम्बन हलाये देति,
फूलन बिछाये देति भूकनि की झमकनि†।
मोतिन की माल बक-पॉतिन उड़ाए देति,
भूषन पराये देति जीगन की चमकनि।
'ललित' सुगान तान पिक सरमाये देति,
भौरन भ्रमाए देति केशन की लमकनि।

---

१. यज्ञ, २ चन्द्रमा, ३ विष और सॉपो को धारण करने वाले। ४ दु:ख, ५ वर देने वाले।

† 'म' का हल्वत् उच्चारण होने से उसके पहले के वर्ण का उच्चारण गुरुवत् समझना चाहिए।

साँवरे सलोने कान्ह मेघन हराये देति,

कामिनी दबाये देति दामिनि की दमकनि ।।

—ललित

कृपाण* (किरपान)

इस छन्द के प्रत्येक चरण मे आठ, आठ, आठ और आठ के विराम से बत्तीस वर्ण होते है । प्रत्येक अष्टक के अन्त्य वर्ण सानुप्रास होते है और चरणान्त मे गुरु-लघु रहता है —

चली है कें विकराल, महाकाल हू को काल,

किये दोऊ द्दग लाल, धाइ रन समुहान ।

जहाँ क्रुद्ध है महान, युद्ध करि घमसान,

लोथि लोथि पै लदान, तड़पी ज्यो तड़ितान ।

जहाँ ज्वाला कोट भान, के समान दरसान,

जीव जन्तु अकुलान, भूमि लागी थहरान ।

तहाँ लागे लहरान, निसिचर हू परान,

वहाँ कालिका रिसान, झुकि झारी किरपान ।।

—जानकी समर

विजया

आठ, आठ, आठ, आठ के विराम से बत्तीस वर्ण का छन्द होता है। चरणान्त मे लघु गुरु अथवा नगण रहता है। ‡

---

* यह छन्द प्राय वीर रस मे प्रयुक्त होता है । इस छन्द के चरणान्त मे 'नकार' अधिक कर्ण-प्रिय लगता है ।

‡ इस छन्द मे सम सम के अतिरिक्त दो विषमो के बीच सम पद भी होता है ।

(१)

भार के उतारिबे को, अवतरे रामचन्द्र,
किधौ केशोदास भूमि, भारत प्रबल दल।
टूटत है तरुवर, गिरै गन गिरिवर,
सूखे सब सरवर, सरित सकल जल।
उचकि चलत कपि, दचकनि दचकत,
मंच ऐसे मचकत, भूतल के थल थल।
लचकि लचकि जात, सेस के असेस फन,
भाग गई भोगवती, अतल वितल तल॥

—रामचन्द्रिका

देव घनाक्षरी

इस छन्द के प्रत्येक चरण मे आठ, आठ, आठ और नव के विराम से तेतीस वर्ण होते हैं और चरणान्त मे नगण रहता है†—

झिल्ली झनकारै पिक, चातक पुकारै बन,
मोरनि गुहारै उठै, जुगनू चमकि चमकि।
घोर घन कारे भारे, धुरवा धुरारे धाय,
धूमनि मचाव नाचै, दामिनी दमकि दमकि॥
झूकनि बयारि बहै, लूकनि लगावै अंग,
हूकनि भभूकनि की, उर मे खमकि खमकि।
कैसे करि राखौं प्राण, प्यारे जसवंत बिना,
नान्हीं नान्हीं बूँद झरै, मेघवा झमकि झमकि॥

—जसवंतसिंह

---

†चरणान्त में 'नगण' का दो बार आना कर्ण-प्रिय लगता है।

अनुष्टुप*

इस छन्द के प्रत्येक चरण मे आठ वर्ण होते है। पहले और तीसरे चरण का आठवॉ वर्ण तो अवश्य ही गुरु होता है। और सातवॉ वर्ण सदा लघु रहता है। और यदि आठवॉ वर्ण गुरु रहता है तो छन्द अधिक प्रिय लगता है। ×

(१)

देखो आही गया लोगो, ग्रीष्मकाल भयावना।
संताप नित्य देते ये, मित्र भी शत्रु हो गये॥

—अम्बिकादत्त 'व्यास'

(२)

स्वस्तिवाद विरक्तो का, और ही कुछ वस्तु है।
वाक्यों मे उनके होता, ईश का एवमस्तु है॥

—मैथिलीशरण गुप्त

(३)

अपनाके किसी को यो, छोड़ना ठीक है नही।
जोड़ के गहरा नाता, तोड़ना ठीक है नही॥

—मैथिलीशरण गुप्त

---

* यह छन्द गण-क्रम पर पूरा पूरा नही ठहरता। इसी से इसे मुक्तक माना गया है।

× भानुजी इस छन्द का लक्षण इस तरह बतलाते हैं कि इसके प्रत्येक चरण में पाँचवाँ वर्ण लघु और छठा गुरु रहता है। और सम (दूसरे-चौथे) चरणों मे सातवाँ वर्ण लघु रहता है।

पयार *

इस छन्द के प्रत्येक चरण मे चौदह वर्ण होते हैं। प्रायः चरणान्त का वर्ण लघु रहता है:—

(१)

विकच कमल कमनीय कलाधर।
मंद मंद आन्दोलित मलय पवन॥
तरल तरंग माला संकुल जलधि।
परम आनन्द मय नन्दन-कानन॥

(२)

संघ-शक्ति इस युग का है मुख्य धर्म।
जाति संगठन इस काल का है तंत्र॥
सर्वत्र एकीकरण का है घोर नाद।
सहयोग आज कल का है महामंत्र॥

(३)

किन्तु हम आज भी हैं प्रतिकूल गति।
आज भी विभिन्नता ही मे हैं हम रत॥
बची खुची रही सही जो थी संघ-शक्ति।
छिन्न भिन्न हो रही है वह भी सतत॥

---

* यह छन्द बँगला का है। अब हिन्दी में भी यह छन्द व्यवहृत होने लगा है। प्रत्येक शब्द के अन्त्य-अकारान्त वर्ण को स-स्वर पढ़ने से लय मधुर हो जाती है। बँगला मे अकारान्त वर्ण का स-स्वर ही उच्चारण होता है।

(४)

जातीय सभाएँ जाति जाति के समाज।
नाना जातियो के भिन्न भिन्न पाठागार ॥
जिस भाँति सचालित हो रहे है आज।
सहकारिता का कर देवेंगे संहार ॥

(५)

काव्यता को कैसे प्राप्त होगा वह काव्य।
जिस काव्य से न होवे जातीय-उत्थान ॥
वह कविता है कभी कविता ही नही।
जिस कविता मे न हो जातीयता-तान ॥

—'हरिऔध'

मिताक्षरी* (प्रियाल)

इस छन्द का प्रत्येक चरण पन्द्रह या सोलह वर्ण का होता है। पन्द्रह वर्ण वाले छन्द के चरणान्त मे एक गुरु अवश्य रहता है और सोलह वर्ण वाले छन्द के चरणान्त मे गुरु लघु रहता है.--

---

* इस छन्द का पन्द्रह वर्ण वाला चरण मनहरण के चरण का उत्तरार्द्ध और सोलह वर्ण का रूपघनाक्षरी के चरण का आधा होता है।

इस छन्द में तुकान्त और अतुकान्त दोनों ही तरह से रचना की जा सकती है। क्षेत्र विस्तृत है। गति के लिए भी स्वतन्त्रता है। जहाँ अर्थ की पूर्णता हो अथवा श्वास पतन हो वहीं यति दी जा सकती है।

(१)

आर्यवंश-भूषण शिवाजी महाराज के—
पूज्य चरणो मे, इस दासी जेबुन्निसा के,
भक्ति युत शतशः प्रणाम अगीकृत हो।

—हृदयेश

(२)

चलता चिरानुचर वायु था वसंत का
सुस्वर से, देवी के पदाब्ज-परिमल की
आशा कर। चारो ओर शोभित थे फूल यो-
रत्न ज्यो धनाधिप के धन्य धनागार मे।

—'मधुप'

इसी तरह चरण रखने की भी स्वतन्त्रता है। तीन, पॉच, आठ आदि कितने ही चरण रख सकते हो। ऊपर कई उदाहरण देकर ये बाते स्पष्ट कर दी गई हैं।

घनाक्षरी शब्दों के होते हुए इस की रचना का हेतु यही है कि घनाक्षरी के चारो चरणो के अन्तर्गत एक बात पूरी कर देने की पुरानी प्रथा है। इस छन्द मे धारावाहिक ढग से विषय का वर्णन कितने ही चरणो मे किया जा सकता है।

वास्तव मे यह ढग बॅगला से लिया गया है। वहाॅ इस तरह का चौदह वर्ण का छन्द है। बॅगला मे 'मे', 'से' आदि विभक्तियो के लिए अलग वर्ण नही होते। बॅगला के ढग पर हिन्दी मे रचना के लिए पन्द्रह और सोलह वर्ण का यही छन्द उपयुक्त हो सकता है। 'मधुप' जी ने इस छन्द की सृष्टि की है। और वीरागना, मेघनाद-वध आदि बगला काव्य-ग्रंथों का इसी छन्द में अनुवाद किया है।

(३)

मन मन सोचता था बैठ अपराह्ण में,
आशैशव जीवन की कितनी कथाएँ मैं,
विश्व-मूढ़ क्रीड़ा, सुख-दुःख लौट फेर त्यो,
जीवन का असंतोष, असम्पूर्ण आशाएँ,
मर्त्य मानवो की अन्त-रहित दरिद्रता।

—मुंशी अजमेरी

(४)

थाह लेना चाहता कपोत ज्यों गगन की,
मन मे ही किन्तु रह जाती चाह मन की,
त्यो ही उन की मैं व्यर्थ थाह लेना चाहता,
मानो पूर्ण पारावार को हूँ अवगाहता!

—रायकृष्ण दास

(५)

सालता उसी को है कि लगता जिसे है शेल,
दूसरो का रोदन है लौकिक रुदन खेल।
एक का है लक्ष्य होता अन्य के हिये का तीर!
"जिसे न बिवाँई फटी जाने क्या पराई पीर?"

—'मधुप'

अर्द्ध-सम

गण-वद्ध*

सुंदरी

इसके विषम (पहले-तीसरे) चरणों मे 'स स ज ग' के क्रम से दस-दस वर्ण और सम (दूसरे-चौथे) चरणो मे 'स भ र ल ग' के क्रम से ग्यारह-ग्यारह वर्ण रहते है:—

चिरकाल रसाल ही रहा। जिस भावज्ञ कवीन्द्र का कहा।
जय हो उस कालिदास की। कविता-केलि-कलाविलास की।

—साकेत

वेगवती

इस छन्द के विषम (पहले-तीसरे) चरणो मे 'स स स ग' के क्रम से दस-दस वर्ण और सम (दूसरे-चौथे) चरणो मे 'भ भ भ ग ग' के क्रम से ग्यारह-ग्यारह वर्ण रहते है :—

गिरिजापति मो मन भायो। नारद शारद पार न पायो।
कर जोर आधीन अभागे। ठाढ़ भये वर दायक आगे।

—गदाधर

पुष्पिताग्रा (चित्र)

इस छन्द के विषम चरणो मे 'न न र य' के क्रम से बारह-बारह वर्ण और सम चरणो मे 'न ज ज र ग' के क्रम से तेरह-तेरह वर्ण रहते हैं :—

---

* अर्द्ध-सम छन्दों का चलन बहुत कम है। इसी से यहाँ थोड़े से उदाहरण दे दिये गये हैं।

कौतुक आज कियो बनमाली। जल बिच कूदि परेउ सुनि आली ॥
नाथि फनिन्दिहि तोषि फनिन्दी। प्रगट भयो द्रुत मध्य कलिन्दी ॥

—दास

उपचित्रक

इसके विषम चरणों मे 'स स स ल ग' के क्रम से ग्यारह-ग्यारह वर्ण और सम चरणो मे 'भ भ भ ग ग' के क्रम से ग्यारह-ग्यारह वर्ण होते है —

न उठे कर जासु सलाम को। बात कहै मिल उत्तर नाही।
न करो दुख मानव जानि कै। मित्र सु है उप चित्रक माही ॥

— दास

किरीटमुख *

इसके विषम मे आठ भगण और सम चरणो मे आठ सगण रहते है —

मा मन गो जकि त्यो हियरो न बिलोकि सकै चख सो बदनै बर।
सरि सिधु बनै हरि बाघ करी मृग व्याल सुरी सुर जाल तके।
मानव दानव गोकुल किन्नर वानर भूधर भूचर खेचर।
ब्रज ग्वारि गुवारिनि आपनपौ नँदलाल बिलोकत भीति चके ॥

—समनेस

---

* अनेक सवैयो के मेल से इस तरह अर्द्ध-सम छन्द बन सकते है।

अर्द्धसम मुक्तक

विरहा

इस छन्द के विषम (पहले-तीसरे) चरणो मे सोलह-सोलह और सम (दूसरे-चौथे) चरणो मे दस-दस वर्ण रहते है। सम चरणो के अन्त मे गुरु-लघु अथवा जगण रहता है:—

(१)

जनम जनम कर पुनवाँक फर मोरे गवरि गुसाँइनि जू हेरि।
मैया जोर करवा मैं माँगो यहै बरवा जे, कीजे बलबिरवा की चेरि ॥

—बलवीर

(२)

आज बरसाइत रगरवा मचावो जिन, नहकै झगरवा उठाय।
अपनो ही बरवा मै पूजौं बलविरवा पी, बरवा पूजन तू ही जाय ॥

—बलवीर

---

* सोरहे बरन पर करि विसराम जामें, बहुरि बरन दसलाय।
छबिस अछरिया के रचत चरन जाके, बिरहा सो छँदवा कहाय ॥
गुरु लघु कर कछु नियम करहि नहिं, पद अत गुरु-लघु होय।
चार हू चरन करि कोई कवि विरचहि, दुइ पद कर कवि कोइ ॥

—कन्हैयालाल मिश्र

यह छन्द पुरवी भोजपुरिया भाषा के लिए बहुत उपयुक्त है।

विषम

जो वर्ण वृत्त न तो सम ही है और न अर्द्धसम ही वही विषम कहलाते हैं।

गणबद्ध (साधारण)

उद्गता (उद्गाता)

इस छन्द के पहले चरण मे 'स ज स ल' दूसरे मे 'न स ज ग' तीसरे मे 'भ न ज ल' और चौथे मे 'स ज स ज ग' का क्रम रहता है :—

कहि काम बाम दिन मास। सत कहि कहै मनोज ई।
सभु सु तिय कहि बानहि। त्रिपुरै हनो को केहि सो रतीस ई॥

—समनेस

सौरभक (सौरभ)

इस छन्द के पहले चरण मे 'स ज स ल' दूसरे मे 'न स ज ग' तीसरे मे 'र न भ ग' और चौथे मे 'स ज स ज ग' का क्रम रहता है :—

जड़ कौन को कहत वेद। जगत जन रक को सही।
कौन नारि पति नेम लिये। कहि ज्ञान काहि जग हीन मानही॥

—समनेस

मजु माधवी *

इस छन्द के पहले चरण मे इन्द्रवंशा के, दूसरे मे इन्द्रवज्रा

---

* भानु जी ऐसे छन्दों को जो उपजातियो के मेल से बनते हैं और जिनके विषम चरणों मे बारह और सम चरणों मे ग्यारह वर्ण

के, तीसरे मे वंशस्थविलम् के और चौथे मे उपेन्द्र-वज्रा के चरण रहते है।

मैने कहा आज निकुंज शून्य है।
सूनी पड़ी है ब्रज वीथिकाएँ॥
न कूल मे श्री यमुना निकुंज मे।
कभी किसी ने घनश्याम देखे?

—श्रीवर

आपीड़ *

इस छन्द के पहले चरण मे आठ, दूसरे मे बारह तीसरे मे सोलह और चौथे में बीस वर्ण रहते हैं और प्रत्येक चरण के अन्त के दो वर्ण गुरु और शेष सब लघु रहते है .—

प्रभु असुर सु हर्त्ता।
जग विदित पुनि जगत भर्त्ता।
दनुज-कुल अरि जग हित धरम धर्त्ता।
अस प्रभु कहँ सरवस तज भज भव-दुख हर्त्ता॥

—गदाधर

होते हैं मजु-माधवी को अर्द्धसम वृत्त मानते है। परन्तु जब ऐसे छन्दो के चारो चरणो के गण भिन्न भिन्न है तो उन्हे अर्द्धसम मानना ठीक नही जँचता। इसी से हम इसे मजु-माधवी नाम से गणवद्ध विषम मे रख रहे हैं। श्रीवर जी ने उपजाति छन्दो के मेल से ऐसे और भी अनेक छन्द रचे हैं।

विषम छन्दों का चलन अभी हिन्दी मे नाम को ही है। इसी से यहाँ केवल दिग्दर्शन मात्र कराया गया है।

* इसे भी गण-वद्ध ही समझना चाहिए। ऐसे ही और भी अनेक छन्द हैं।

विषम-मुक्तक

विषम-मुक्तको का चलन अभी तक हिन्दी मे नही के बराबर ही है। भानुजी ने 'अनगक्रीडा' और 'सौम्यशिखा' नाम के छन्दो को विषम-मुक्तको मे माना है। पर अनगक्रीडा के पहले दल मे सब वर्ण गुरु होते है दूसरे दल मे सब वर्ण लघु होते है। अत इसे गणवद्ध ही मानना ठीक है। अधिक स्पष्टता के लिए हम यहाँ अनगक्रीडा को उदाहरण स्वरूप रखते है —

आठौ यामा शभू गावै।
सद्भक्ती तै मुत्ती पावै॥
सिख मम धरि हिय भ्रम सब तजि कर।
भज नर हर हर हर हर हर हर॥

—छन्द प्रभाकर

सौम्यशिखा इसका बिलकुल उलटा है उसका उदाहरण देने की आवश्यकता नही है।

हॉ मरहठी मे अभंग और ओबी नाम से विषम-मुक्तको मे रचना होती है। उदहरणार्थ हम एक ओबी छन्द देते है —

ओंबी

इसके पहले चरण मे आठ, दूसरे मे नव, तीसरे मे दस और चौथे मे चार वर्ण है —

आतां बदू कवीश्वर। जे शब्द सृष्टी चे ईश्वर।
नाही तरी है परमेश्वर। वंदावे ते॥

—समर्थ गुरु रामदास

वर्णिक-मिलिन्दपाद

प्रमाणिका-मिलिन्दपाद

सुधार धर्म कर्म को। बिसार दो अधर्म को॥
बढ़ाय बेलि प्रीति को। कथा सुनीति रीति को॥
सुना करो अनेक से।
मिलो महेश एक से॥

—नाथूराम 'शंकर' शर्मा

भुजगी-मिलिन्दपाद

(१)

अरे ओ अजन्मा ? कहाँ तू नही। न कोई ठिकाना जहाँ तू नही॥
किसी ने तुझे ठीक जाना नही। इसी से यथा तथ्य माना नही॥
शिखा सत्य की झूठ ने काटली।
न विज्ञान फूला न विद्या फली॥

—नाथूराम 'शंकर' शर्मा

(२)

यहीं स्वर्ग चाहे बना लीजिए। यही नारकी सृष्टियाँ कीजिए॥
नही कौन सी साधना है यहाँ ? वहीं सिद्धि है साधना है जहाँ॥
महा-साधना-क्षेत्र ससार है।
मनुष्यत्व ही मुक्ति का द्वार है॥

—मैथिलीशरण गुप्त

त्रोटक-मिलिन्दपाद

(१)

मत-भेद भयानक-पाप रहा। बिन प्रेम न मेल मिलाप रहा॥
अभिमान अधोमुख ठेल रहा। अधमाधम ढोंग ढकेल रहा॥
सुख-जीवन का मग तंग हुआ।
बस भारत का रस भंग हुआ॥

—नाथूराम 'शंकर' शर्मा

(२)

जल-तुल्य निरंतर स्वच्छ रहो। प्रवलानल ज्यों अविरुद्ध रहो॥
पवनोपम सत्कृति शील रहो। अवनीतलवद् धृतिशील रहो॥
करलो नभ-सा शुचि जीवन को।
नर हो, न निराश करो मन को॥

—मैथिली शरण गुप्त

द्रुतविलम्बित-मिलिन्दपाद

यदि अभीष्ट तुम्हे निज सत्व है। प्रिय तुम्हे यदि मान महत्व है॥
यदि तुम्हे रखना निज नाम है। जगत मे करना कुछ काम है॥
मनुज ! तो श्रम से न डरो, उठो।
पुरुष हो, पुरषार्थ करो, उठो॥

—मैथिलीशरण गुप्त

स्रग्विणी-मिलिन्दपाद

(१)

दूर क्यो भागते हो भले कर्म से? क्यो घृणा हो गई है तुम्हे धर्म से?
शून्य ही हो गये नीति के मर्म से, शीश तो भी झुका है नही शर्म से॥

ताप-संताप से नित्य रोते रहो ,
क्यो जगोगे, अभी देश ! सोते रहो ।।

(२)

ज्ञान से मान से, शक्ति से, हीन हो, दान से, ध्यान से, भक्ति से, हीन हो ।।
आलसी भी महामूढ़ ! प्राचीन हो, सोच देखो सभी से तुम्ही दीन हो ।।
अग को आँसुओ से भिगोते रहो ।
क्यो जगोगे, अभी देश ! सोते रहो ।।

—रामचरित उपाध्याय

भुजंगप्रयात-मिलिन्दपाद

अजन्मा न आरंभ तेरा हुआ है। किसी से नही जन्म मेरा हुआ है ।।
रहैगा सदा अत तेरा न होगा । किसी काल मे नाश मेरा न होगा ।।
खिलाडी खुला खेल तेरा रहैगा ।
मिटेगा नही मेल मेरा रहैगा ।।

—नाथूराम 'शंकर' शर्मा

पंचाचामर-मिलिन्दपाद

चलो अभीष्ट मार्ग मे सहर्ष खेलते हुए ,
विपत्ति विघ्न जो पड़े उन्हे ढकेलते हुए ।
घटे न हेल मेल हाँ बढ़े न भिन्नता कभी ,
अतर्क एक पंथ के सतर्क पथ हो सभी ।
तभी समर्थ भाव है कि तारता हुआ तरे ।
वही मनुष्य है कि जो मनुष्य के लिए मरे ।।

—मैथिलीशरण गुप्त

तीसरा उल्लास

प्रत्ययों की आवश्यकता

प्राय कहा जाता है कि छन्द रचना के नियमो के साथ प्रत्ययो के जानने की क्या आवश्यकता है ? यह तो गणित का विषय है, गणित का चमत्कार है। इस विषय मे माथापच्ची करना निरी दिमागी कसरत करना है क्योकि छन्द-रचना मे इसकी आवश्यकता ही नहीं पड़ती। यह कहना ठीक उसी तरह का है कि गणित के सिद्धान्त हमे जानने की क्या आवश्यकता है क्योकि रोजमर्रा के कामो मे तो उसकी जरूरत ही नही पडती।

सच बात यह है कि छन्द-शास्त्र भी एक प्रकार से विज्ञान का अग है और विज्ञान का मूलाधार गणित है। हम पहले बतला आये है कि छन्द-रचना के मूल सिद्धान्त गुरु-लघु और गणो की गणना पर निर्भर है। छद-शास्त्र के दशाक्षरो का चमत्कार गणित-मूलक है। गणित के चमत्कार के द्योतक प्रत्यय है, अत. हम यहाँ संक्षेप मे प्रत्ययो की चरचा करते है।

प्रत्यय

जिन के द्वारा छन्दो के प्रकार, संख्या तथा उन के शुद्धा-शुद्ध आदि का सम्यक ज्ञान होता है उन्हे 'प्रत्यय' कहते हैं।

प्रस्तार, सूची, नष्ट, उद्दिष्ट, पाताल, मेरु, खण्डमेरु, पताका और मर्कटी ये नव प्रत्यय है । कोई कोई विद्वान्, संख्या, नाम का भी दसवॉ प्रत्यय मानते है । इन मे प्रस्तार, नष्ट, उद्दिष्ट, मेरु, पताका और मर्कटी इन छ प्रत्ययो का जानना बहुत जरूरी है ।

१. प्रस्तार

मात्रिक अथवा वर्णिक प्रत्येक छन्द के भेद तथा रूप जानने की रीति को 'प्रस्तार' कहते है ।

प्रस्तार की रीति

मात्रिक

१ यदि मात्राओ की संख्या सम हो तो पहली पंक्ति मे उन मात्राओ की निश्चित संख्या के सब गुरु रूप रखो और यदि विषम सख्या हो तो पहली पंक्ति के आदि मे बाएँ छोर पर एक लघु चिन्ह रख कर उस लघु के आगे शेष मात्राओं के सब गुरु चिन्ह रखो ।

२ दूसरी पंक्ति जो पहली पंक्ति के नीचे होगी उस के रूप इस प्रकार रखो कि बाएँ छोर से पहली पक्ति के पहले गुरु के नीचे लघु चिन्ह रखो और फिर इस लघु चिन्ह की दाहिनी ओर पहली पक्ति के शेष सब रूप ज्यो के त्यो उतार लो । अब दूसरी पंक्ति के इन रूपो की मात्राएँ गिनकर देखो कि मात्राओ की निश्चित सख्या मे कितनी मात्राओ की कमी है । जितनी मात्राओ की कमी रहे, इस दूसरी पंक्ति के बाएँ छोर वाले लघु चिन्ह के बाईं ओर गुरु चिन्हो द्वारा पूर्ति करो । और यदि देखो कि बाईं ओर रखे जाने वाले रूपो की संख्या विषम है तो इस सख्या से जितने गुरु बन सके उतने गुरु रूप उस बाएँ छोर वाले लघु चिन्ह के बाईं ओर रखो और अन्त मे बाएँ छोर पर एक लघु रख दो ।

३ अब तीसरी पंक्ति जो दूसरी पक्ति के नीचे होगी उसे भी दूसरी पंक्ति की तरह ही भरो । अर्थात् दूसरी पंक्ति के भरने मे उस (दूसरी पंक्ति) का जो संबध पहली पंक्ति से रहा वही संबंध इस तीसरी पंक्ति का, इसके भरने मे दूसरी पंक्ति से रहेगा । इसी प्रकार चौथी, पाँचवी आदि पंक्तियो के रूप रखते जाओ । अन्तिम पक्ति मे निश्चित सख्या के सब लघु रूप आजावेंगे जो प्रस्तार का अन्तिम रूप रहेगा ।

उदाहरण—५ (विषम) और ६ (सम) मात्रा वाले छन्दो के जितने रूप हो सकते है वे प्रस्तार द्वारा दिखाते हैं:—

५ मात्राओं के रूप *		६ मात्राओं के रूप	
रूप	क्रम सख्या	रूप	क्रम सख्या
।SS	१	SSS	१
S।S	२	।।SS	२
।।।S	३	।S।S	३
SS।	४	S।।S	४
।।S।	५	।।।।S	५
।S।।	६	।SS।	६
S।।।	७	S।S।	७
।।।।।	८	।।।S।	८
		SS।।	६
		।।S।।	१०
		।S।।।	११
		S।।।।	१२
		।।।।।।	१३

* मात्रिक-छन्दो के प्रस्तार का पहला रूप रखने के लिए ध्यान रहे कि निश्चित सख्या मे दो का भाग दे ले। जितने अक भजनफल में आवे उतने गुरु चिन्ह लगावे और जो शेष रहे उसके बजाय एक लघु चिन्ह अन्त मे बॉई ओर रखदे। गुरु वनाने का आगे भी यही ढग है कि सख्या मे दो का भाग देता जाय जितना भजनफल मिलता जाय उतने गुरु चिन्ह रखता जाय, जो १ शेष रहेगा उसके बजाय लघु चिन्ह रखे।

इस तरह प्रस्तार द्वारा ज्ञात हो गया कि ५ मात्रा वाले छन्दो के रूप ८ और छ मात्रा वाले छन्दो के रूप १३ होगे।

वर्णिक

१- जितने वर्णों का प्रस्तार करना हो पहली पक्ति मे उतने ही गुरु चिन्ह रख दो। प्रस्तार का यह पहला रूप होगा।

२. दूसरी पक्ति जो पहली पंक्ति के नीचे होगी उसके रूप इस प्रकार रखो कि पहली पंक्ति के बाएँ छोर के गुरु के नीचे लघु चिन्ह रखो और फिर इस लघु चिन्ह की दाहिनी ओर पहली पक्ति के शेष रूप ज्यो के त्यो उतार लो। यह दूसरा रूप होगा।

३ अब तीसरी पक्ति जो दूसरी पंक्ति के नीचे होगी उसे इस प्रकार भरो कि दूसरी पक्ति के बाएँ छोर वाले गुरु के नीचे लघु चिन्ह रखो और इस लघु चिन्ह की दाहिनी ओर दूसरी पक्ति के शेष सब रूप ज्यो के त्यो रखो। अब देखो कि वर्णों की निश्चित सख्या मे कितने वर्णों की कमी है। जितने वर्णों की कमी हो उतने ही गुरु चिन्ह इस तीसरी पंक्ति के बाएँ छोर वाले लघु चिन्ह के बाईं ओर रख दो। यह तीसरा रूप होगा। आगे के चौथे पाँचवे, आदि शेष रूप इस तीसरी पक्ति के ढंग पर ही वहाँ तक भरते जाओ जहाँ तक कि सब लघु रूप आ जावें। यह सब लघु रूप ही प्रस्तार का अन्तिम रूप होगा।

उदाहरण—३ (विषम) और ४ (सम) वर्ण वाले छन्दों के सब रूप प्रस्तार द्वारा दिखाओ।

३ वर्णों के रूप

रूप	क्रमसंख्या
ऽ ऽ ऽ	१
। ऽ ऽ	२
ऽ । ऽ	३
। । ऽ	४
ऽ ऽ ।	५
। ऽ ।	६
ऽ । ।	७
। । ।	८

४ वर्णों के रूप

रूप	क्रमसंख्या
ऽ ऽ ऽ ऽ	१
। ऽ ऽ ऽ	२
ऽ । ऽ ऽ	३
। । ऽ ऽ	४
ऽ ऽ । ऽ	५
। ऽ । ऽ	६
ऽ । । ऽ	७
। । । ऽ	८
ऽ ऽ ऽ ।	९
। ऽ ऽ ।	१०
ऽ । ऽ ।	११
। । ऽ ।	१२
ऽ ऽ । ।	१३
। ऽ । ।	१४
ऽ । । ।	१५
। । । ।	१६

३ वर्ण वाले छन्दो के रूप ८ और ४ वर्ण वाले छन्दो के रूप १६ होगे।

प्रस्तारों का प्रभाव

प्रस्तार द्वारा अनेक नये छन्द बनाने मे सहायता मिलती है। मात्रिक छन्दो के लिए प्रस्तार जानना उतना आवश्यक नही है जितना कि वर्ण-वृत्तो के लिए आवश्यक है क्योकि वर्णिक-छन्दो मे केवल वर्णों का ही क्रम देखा जाता है। जो भेद प्रस्तार का होगा वही छन्द के चारो चरणो मे रहेगा परन्तु मात्रिक-छन्द के चारों चरणो के प्रस्तार-रूप भिन्न भिन्न होते है। उस के लिए तो गति और मात्राओ की पूर्ण सख्या होना ही काफी है।

२. संख्या ×

बिना प्रस्तार किये किसी छन्द के रूपो की गिनती बतलाने की रीति को 'संख्या' कहते है।

मात्रिक-सख्या जानने की रीति

१ जितनी मात्राओ के प्रस्तार के रूपो की सख्या निकालनी हो उतनी ही संख्या मे दोहरी पंक्ति मे कोठे बनालो।

२ पहली पक्ति के कोठो मे क्रम-संख्या अर्थात् निश्चित मात्राओ की संख्या रख लो। अब दूसरी पंक्ति के कोठो मे रूप के अक इस प्रकार भरो कि पहले कोठे मे १ का अंक, दूसरे

× कोई कोई सख्या को सूची भी कहते हैं। वास्तव में यह भेदाक सूची है।

कोठे मे २ का अंक और तीसरे कोठे मे ३ का अक रखो। अब आगे के कोठो की पूर्ति इस प्रकार करो कि खाली कोठे के पास के बाई ओर वाले दो दो कोठो के अंक जोडते जाओ। और क्रमश आगे के कोठो मे रखते जाओ। बस मात्रिक रूपांक निकल आवेगे। जिस क्रम-संख्या के कोठे के नीचे वाले कोठे मे जो रूपांक रखा है वही अंक उतनी मात्राओ के छन्दो के रूप बतलाता है।

उदाहरण—बिना प्रस्तार किये बतलाओ कि ५ तथा ६ मात्राओ वाले छन्दो की भेद-सख्या अथवा रूपो की संख्या क्या होगी ?

क्रम सख्या	१	२	३	४	५	६
सूची के अंक	१	२	३	५	८	१३

सूची अंक से स्पष्ट हो गया कि ५ मात्रा वाले छन्दो के रूपो की संख्या ८ और ६ मात्रा वाले छन्दो के रूपो की सख्या १३ होगी।

वर्णिक सख्या जानने की रीति

१. जितने वर्णों के प्रस्तार के रूपो की संख्या निकालनी हो उतनी ही सख्या मे दोहरी पक्ति मे कोठे बनाओ।

२ पहली पंक्ति के कोठो मे क्रमश· वर्ण-संख्या रखलो। अब दूसरी पंक्ति के कोठो मे सख्यांक इस प्रकार भरो कि

पहले कोठे मे २ का अंक रखो । आगे के कोठे इस प्रकार भरो कि हर खाली कोठे के पास वाले बाईं ओर के कोठे के अंक का दूना करो और खाली कोठे मे रखते जाओ। बस वर्णिक रूपांक निकल आवेगे । अब देखो कि जिस क्रम-सख्या वाले कोठे के नीचे वाले कोठे मे जो रूपांक रखा है वही अक उतने वर्णों के छन्दो के रूप बतलाता है।

उदाहरण—बिना प्रस्तार किये बतलाओ कि ४ तथा ५ वर्णो वाले छन्दो के कितने रूप होगे ?

क्रम सख्या	१	२	३	४	५
सूची के अक	२	४	८	१६	३२

४ वर्णों के छन्दो के रूपो की सख्या १६ और ५ वर्णो के छन्दो की सख्या ३२ होगी।

३. सूची *

जिस नियम अथवा काँटे से हम प्रस्तार के शुद्धा-शुद्ध की जाँच करते है उसे 'सूची' कहते है । इस से ज्ञात हो जाता है कि अमुक मात्रिक या वर्णिक प्रस्तार मे कितने आदि लघु, अन्त लघु आदि है।

मात्रिक सूची जानने की रीति

१ जितनी मात्राओ की सूची निकालनी हो उतनी ही सख्या मे कोठे बना लो और इन मे क्रमश: मात्राओ की क्रम-संख्या रख दो। यह पहली पंक्ति हुई ।

२. अब इस पहली पंक्ति के ऊपर दूसरी पंक्ति रूपांकों की रखो जिस मे क्रमश रूपांको की संख्या रख दो।

३ अब दूसरी पंक्ति के ऊपर बाएँ छोर के पहले कोठे को छोड़ कर शेष कोठो के ऊपर कोठे बनाओ यह तीसरी पंक्ति होगी। इस तीसरी पंक्ति मे दाहिने छोर से पहले कोठे मे रूपांक शब्द लिखो, दूसरे मे आदि लघु और अन्त लघु, तीसरे मे आदि गुरु, अन्त गुरु तथा आद्यन्त लघु, चौथे में आदि लघु तथा अन्त गुरु, आदि गुरु तथा अन्त लघु और पाचवें * मे आद्यन्त गुरु शब्द लिख दो। बस मात्रिक सूची तैयार हो गई।

इस सूची का अर्थ यह हुआ कि तीसरी पंक्ति मे दाहिने छोर वाले कोठे का 'रूपांक' शब्द बतला रहा है कि इतनी मात्राओं के रूपांक उतने होगे जितने उसके नीचे के दूसरी पंक्ति के कोठे मे अक रखे है। और इस 'रूपांक' शब्द वाले कोठे के बाईं ओर के कोठो के शब्द यह बतला रहे है कि उसके नीचे वाले दूसरी पंक्ति के कोठो मे निश्चित मात्रा वाले छन्दो के

---

* प्रत्येक छन्द का प्रस्तार करने पर उसके रूपो की अधिक से अधिक (१) आदि लघु अन्त लघु, (२) आदि गुरु अन्त गुरु और आद्यन्त लघु, (३) आदि लघु तथा अन्त गुरु और आदि गुरु तथा अन्त लघु और आद्यन्त गुरु ये ही रूप हो सकते हैं जिन के लिए तीसरी पंक्ति में पाँच ही कोठे पर्याप्त हैं।

जो रूपांक रखे हुए हैं उन रूपांकों मे इतने आदि, लघु, इतने अन्त लघु, इतने आदि गुरु, इतने अंत गुरु और इतने आद्यन्त लघु आदि होंगे।

उदाहरण—६ मात्राओं वाले छन्द मे रूपो की संख्या क्या होगी ? और इन रूपो मे आदि लघु, अन्त लघु, आदि गुरु, अन्त गुरु, आद्यन्त लघु, आदि लघु और अन्त गुरु, आदि गुरु और अन्त लघु तथा आद्यन्त गुरुओं की संख्या क्या होगी ?

तीसरी पंक्ति		आद्यन्त गुरु	आदि लघु तथाअन्तगुरु आदि गुरु तथा अन्तलघु	आदिगुरु अन्त गुरु आद्यन्त लघु	आदिलघु अन्त लघु	रूपांक
दूसरीपंक्ति	१	२	३	५	८	१३
पहलीपंक्ति	१	२	३	४	५	६

६ मात्राओं के प्रस्तार मे रूपों की संख्या १३ होगी। इन मे आठ रूपो के आदि मे लघु तथा आठ रूपो के अन्त मे लघु ५ रूपो के आदि मे गुरु, पाँच रूपो के अन्त मे गुरु तथा पाँच रूपों के आद्यन्त मे लघु, तीन रूपो के आदि मे लघु तथा अन्त मे गुरु, तीन रूपों के आदि मे गुरु तथा अन्त मे लघु और दो रूपों के आद्यन्त में गुरु चिन्ह होंगे। ❀

❀ ६ मात्राओं का प्रस्तार देखो।

वर्णिक सूची जानने की रीति

१ जितने वर्णों की सूची निकालनी हो उतने कोठे बनालो और उनमे निश्चित वर्णों की क्रमसख्या रख दो। यह पहली पंक्ति होगी।

२ पहली पंक्ति के ऊपर इस पंक्ति के कोठो से एक कोठा अधिक बनाकर दूसरी पंक्ति बनादो ध्यान रहे कि अधिक कोठा बाएँ छोर पर रहेगा। अब बाएँ छोर से पहले कोठे मे १ का अक लिखकर शेष कोठो मे क्रमश उन वर्णों के रूपांक रख दो।

३ अब दूसरी पक्ति के ऊपर बॉए छोर के दो कोठो को छोड़ कर शेष कोठो के ऊपर कोठे बनाओ† यह तीसरी पक्ति होगी। इस तीसरी पंक्ति मे दाहिने छोर से पहले कोठे मे 'रूपाक' शब्द लिखो। दूसरे मे आदि लघु, अन्तलघु, आदिगुरु, अन्तगुरु और तीसरे कोठे मे आद्यन्तलघु, आदिलघु तथा अन्तगुरु, आदिगुरु तथा अन्तलघु और आद्यन्तगुरु शब्द लिख दो। बस वर्णिक सूची तैयार हो गई।

---

† प्रत्येक छन्द का प्रस्तार करने पर उसके रूपो को अधिक से अधिक १. आदि लघु, अन्तलघु आदिगुरु, अन्तगुरु २ आद्यन्त लघु, आद्यन्त-गुरु, आदिलघु तथा अन्तगुरु, आदिगुरु तथा अन्तलघु यही रूप हो सकते हैं। जिनके लिए रूपाक सहित तीन कोठे पर्याप्त हैं।

उदाहरण—४ वर्णों के प्रस्तार की सूची बताओ। अर्थात् बताओ कि ४ वर्णों के प्रस्तार मे रूपो की सख्या क्या होगी? और इन रूपो मे आदिलघु, अन्तलघु आदिगुरु, अन्तगुरु, आद्यन्तलघु आदिलघु तथा अन्तगुरु आदिगुरु तथा अन्तलघु और आद्यन्त गुरुओ की सख्या क्या होगी?

			आद्यन्तलघु, आद्यन्तगुरु, आदिलघु तथा अतगुरु आदि-गुरु तथाअतलघु	आदिलघु, अंतलघु आदिगुरु, अन्तगुरु,	रूपांक
दूसरी पंक्ति	१	२	४	८	१६
पहिली पंक्ति		१	२	३	४

४ वर्णों के प्रस्तार मे रूपो की सख्या १६ होगी। इनमे आठ रूपो के आदि मे लघु, आठ रूपो के अन्त मे लघु, आठ रूपो के आदि मे गुरु आठ रूपों के अन्त मे गुरु, चार रूपो के आद्यन्त मे लघु, चार रूपो के आद्यन्त मे गुरु, चार रूपो के आदि मे लघु तथा अंत मे गुरु, और चार रूपो के आदि मे गुरु तथा अत मे लघु चिन्ह होंगे। †

---

† ४ वर्णों का प्रस्तार देखो।

४. नष्ट

बिना प्रस्तार किये ही किसी मात्रिक अथवा वर्णिक प्रस्तार के किसी भी रूप के जान लेने की रीति को 'नष्ट' कहते है।

मात्रिक-नष्ट की रीति

१ जितनी मात्राओ का कोई रूप पूछा गया हो उनकी मात्राओ के बराबर लघु चिन्ह रख कर बाईं ओर से क्रमश उन लघु चिन्हो पर उतनी ही मात्राओ के रूपो की संख्या लिख दो। क्रिया की यह पहली पंक्ति होगी।

२ अब निश्चित मात्राओ के रूपांक मे से प्रश्नांक को घटादो। अब शेष बचे हुए अंक मे से अन्तिम रूपांक के बाँई ओर के हरएक रूपांक को घटाने का प्रयत्न करो। जो रूपांक घट जाय उसके नीचे गुरु चिन्ह रखो। अब घटाये जाने पर जो अंक शेष बचे उसमे से बाईं ओर के किसी और रूपाक के घटाने का प्रयत्न करो। जो रूपांक घटता जाय उसके लघु चिन्ह के नीचे गुरु चिन्ह रखते जाओ। यह क्रिया तब तक करते रहो जब तक शेषांक बिल्कुल न घट जाय। जो रूपांक शेषांको मे से नही घट सके है उनके लघु के नीचे लघु चिन्ह ही रखो। क्रिया की यह दूसरी पक्ति होगी।

३ अब तीसरी पंक्ति मे गुरु-लघु चिन्ह इस प्रकार रखो कि दूसरी पक्ति मे जिस रूपांक के नीचे गुरु चिन्ह रखा है, तीसरी पंक्ति मे भी उसके नीचे गुरु चिन्ह ही रख दो पर दूसरी

पंक्ति मे उस गुरु चिन्ह के दाहिने जो पहला लघु हो उसे तीसरी पंक्ति मे न रखो* और आगे यदि लघु चिन्ह हो तो उन्हे ज्यो का त्यो तीसरी पक्ति मे रख दो। बस तीसरी पंक्ति वाला ही अभीष्ट रूप होगा।

उदाहरण—६ मात्राओं के प्रस्तार मे सातवाँ रूप क्या होगा?

	१	२	३	५	८	१३ रूपांक
पहली पंक्ति	।	।	।	।	।	।
दूसरी पंक्ति	S	।	।	S	।	।
तीसरी पंक्ति	S		।	S		।

अभीष्ट रूप S । S । होगा

हल—६ मात्राओ का रूपांक १३ है उसमे से प्रश्नांक ७ घटाने पर शेषांक ६ रहा। ६ मे से ८ घट नही सका इसके नीचे लघु चिन्ह ही रखा। आगे चल कर ५ घट गया। इसके नीचे गुरु चिन्ह रख दिया। ६ मे से ५ घटने पर शेष १ रहा। १ मे से रूपांक १ ही घट सका उसके नीचे भी गुरु चिन्ह रख दिया। जो २, ३, ८ अंक नही घट सके उनके नीचे ज्यो के त्यो

---

*ऐसा इसलिए किया जाता है कि अभीष्ट गुरु अपने आगे वाले लघु की सहायता से ही गुरु बन सक्ता है।

लघु चिन्ह रख दिये। अब गुरु चिन्ह के आगे वाले २ और ८ के नीचे रखे हुए पहले लघु लोप कर दिए तो अभीष्ट रूप ऽ । ऽ । आगया।

वर्णिक-नष्ट की रीति

१ जितने वर्णों का कोई रूप पूछा गया हो उतने ही लघु चिन्ह रखो फिर वर्णिक रूपांको के प्रत्येक अंक को आधा करके इन अको को बाईं ओर से क्रमश लघु चिन्हो के ऊपर रखो। क्रिया की यह पहली पक्ति होगी।

२ पहले निश्चित रूपो के रूपांक मे से प्रश्नांक को घटा दो। अब लघु चिन्हो पर रखे हुए अको को दाहिनी ओर से बाईं ओर को क्रमश बचे हुए शेषांक मे से उसी तरह घटाने की क्रिया करो जिस तरह मात्रिक मे की है। जो जो अंक घटता जाय उसके लघु चिन्ह के नीचे गुरु चिन्ह रखते जाओ। और जो अक न घट सके उनके लघु चिन्हो के नीचे ज्यो के त्यो लघु चिन्ह रख दो। क्रिया की यह दूसरी पंक्ति होगी और यही प्रस्तार का अभीष्ट रूप होगा।

उदाहरण—६ वर्णों के प्रस्तार मे ७ वाँ रूप कैसा होगा?

	१	२	४	८	१६	३२
पहली पंक्ति	।	।	।	।	।	।
दूसरी पंक्ति	ऽ	।	।	ऽ	ऽ	ऽ

६ वर्णों के प्रस्तार मे ७ वाँ रूप ऽ । । ऽ ऽ ऽ होगा।

हल—६ वर्णों का रूपाक ६४ है और प्रश्नांक ७ है। अत' नियमानुसार ६४ मे से सात घटाने पर ५७ शेपांक रहा। पहली पक्ति के लघु चिन्हो पर दाहिने छोर से रखा हुआ अक ३२ है इसे ५७ शेपांक मे से घटाने पर २५ शेप रहा। २५ मे से १६ घटाने पर ९ रहा, ६ मे से ८ घटाने पर १ रहा। इस १ मे से ४ और २ नही घट सकते १ को घटाया तो शेष कुछ नही रहा। शेषांको मे से ३२, १६, ८ और १ अक घट सके है इनके नीचे गुरु चिन्ह रख दिये, और शेष २, ४ के नीचे लघु ज्यो के त्यो रख दिये। बस दूसरी पक्ति वाला ऽ।।ऽऽऽ यह अभीष्ट रूप निकल आया।

५. उद्दिष्ट

बिना प्रस्तार किये ही मात्रिक अथवा वर्णिक प्रस्तार के किसी भी रूप की स्थान-सख्या जान लेने की रीति को 'उद्दिष्ट' कहते है।

मात्रिक-उद्दिष्ट की रीति

१. दिये हुए रूप को ज्यो का त्यो रख लो। अब बाएँ छोर से इस रूप के गुरु चिन्हों के पहले ऊपर फिर नीचे और लघु चिन्हो के केवल ऊपर ही निश्चित मात्राओ के रूपांक क्रमश रख दो।

२ अब गुरु चिन्हो के ऊपर रखे हुए रूपांको को जोड़ लो और निश्चित मात्राओ के रूपांक मे से—जो दिये हुए रूप के

दाहिनी ओर से अन्तिम चिन्ह् के ऊपर या नीचे होगा—इस जोड को घटा दो। शेषांक दिये हुए रूप की अभीष्ट संख्या होगी।

उदाहरण—६ मात्राओ के प्रस्तार का ऽ । ऽ । यह कौनसा रूप है ?

१	३	५	१३
ऽ	।	ऽ	।
२		८	

हल— १ से ६ मात्राओं तक क्रमश: रूपांक १, २, ३, ५, ८ और १३ हैं। दिये हुए रूप के बाई छोर के गुरु चिन्ह् के ऊपर १ और नीचे २ का अक रखा। इस गुरु के आगे वाले लघु पर ३, और गुरु के ऊपर ५ तथा नीचे ८ रखा और अन्तिम चिन्ह् के ऊपर १३ रखा।

अब गुरु चिन्हों के शीर्षांकों को जोड़ने पर (१+५) अर्थात् ६ मिला। इसे ६ मात्राओं के रूपांक १३ मे से घटाया तो ७ शेषांक रहा। बस यही शेषांक दिये हुए रूप की संख्या है।

इस तरह स्पष्ट हो गया कि ६ मात्राओं का ऽ । ऽ । यह ७ वाँ रूप है।*

---

* ६ मात्राओं का प्रस्तार देखो।

वर्णिक-उद्दिष्ट की रीति

१ दिये हुए रूप को ज्यों का त्यों रख लो। अब बाएँ छोर से इन रूप-चिन्हों के ऊपर दिये हुए वर्णों की रूप-संख्याओं के आधे-आधे अंक क्रमशः रख दो।

२ अब गुरु चिन्हों के ऊपर रखे हुए अंकों को जोड़ लो और वर्णों की अन्तिम रूपसंख्या में से इस जोड को घटा दो। बस शेषांक दिये हुए रूप की अभीष्ट संख्या होगी।

उदाहरण—४ वर्णों के प्रस्तार का ।ऽ।ऽ यह कौन सा रूप है?

१	२	४	८
।	ऽ	।	ऽ

हल—एक वर्ण से लेकर चौथे वर्ण तक की रूप-संख्याएँ क्रमश २, ४, ८, १६ हैं। इनके आधे क्रमश १, २, ४, ८ हुए। बाएँ छोर से अभीष्ट रूप के चिन्हों पर इन अर्द्धाङ्कों को रख लिया। गुरु चिन्हों के ऊपर के अंकों का जोड (२+८) अर्थात् १० है। इसे ४ वर्ण के रूपाङ्क १६ में से घटाया तो (१६-१०) अर्थात् ६ शेषांक रहा। बस यही शेषांक दिये हुए रूप की संख्या है।

इस से स्पष्ट हो गया कि ४ वर्णों का ।ऽ।ऽ यह छठा रूप है*।

---

* ४ वर्णों का प्रस्तार देखो।

६. पाताल

जिस रीति से दी हुई मात्राओ के रूपो की सख्या, सर्व लघु, सर्व गुरु, मात्रा और वर्णों की सख्या जानी जाय उस रीति को मात्रिक तथा जिस रीति से इनके सिवाय लघ्वादि, लघ्वन्त, गुर्वादि और गुर्वन्तो की भी सख्या जानी जाय उस रीति को वर्णिक-पाताल कहते है।

मात्रिक-पाताल की रीति

१ पॉच पक्तियो मे उतने कोठे बनाओ कि जितनी मात्राओ का छन्द है।

२ पहली पक्ति के कोठो मे दिये हुए छन्द की क्रम-संख्याएँ रख दो।

३ दूसरी पंक्ति के कोठो मे सख्या (सूची) की रीत्यानुसार क्रमश. दिये हुए छन्द के रूपांक रखदो ।

४ लघु तथा गुरुओ की संख्या बताने वाली तीसरी पक्ति के कोठो मे इस प्रकार अक भरो कि बाएँ छोर के कोठे मे १ का अक तथा इसके दाहिनी ओर वाले कोठे मे २ का अंक रखदो। अब आगे के खाली कोठे इस प्रकार भरो कि खाली कोठे के बाईं ओर जो पहला कोठा हो उसके अंक मे उसी के ऊपर

वाले कोठे के रूपांक को जोडो और इस जोड मे इसी कोठे के बाईं ओर वाले पास के कोठे के अक को भी जोडलो इस तरह जो योगफल मिलता जाय उसे क्रमश खाली कोठो मे रखते जाओ। बस इस तरह गुरु, लघुओ की अभीष्ट सख्या निकल आवेगी। उन संख्याओ के समझने का ढग यह है कि इस तीसरी पंक्ति के कोठो मे जो अंक जिस क्रम सख्या वाले अंक के नीचे है वह उतनी ही मात्राओ के छन्द की लघु संख्याओ का ब धक है। और लघुओ की सख्या बताने वाले अक के बाई ओर वाले कोठे का अंक उसी लघु सख्या के ऊपर वाले क्रम-सख्या के गुरुओ की संख्या का बोधक है।

५ प्रत्येक क्रम-सख्या के लघु-गुरु अको को जोडकर उसी क्रमसख्या के नीचे चौथी पक्ति के कोठो मे क्रमश रखते जाओ। बस दिये हुए छन्द के वर्णों की सख्या ज्ञात होजायगी।

६ प्रत्येक छन्द की रूप-संख्या को उसी क्रम-सख्या से गुणा करो और गुणनफल को उसी क्रम संख्या के नीचे वाले पाँचवी पंक्ति के कोठो मे क्रमश रखते जाओ। अथवा छन्द के सार्व गुरुओ के दूने मे उसी छन्द के लघुओ को जोड देने से जो अंक मिले उसे उसी छन्द की क्रम-संख्यो के नीचे पॉचवी पंक्ति के कोठो मे रखो इसी ढंग से सब कोठे भरते जाओ। बस सर्व मात्राओ की संख्या ज्ञात होजायगी।

उदाहरण—६ मात्राओ के छन्द के सर्व रूपांक, सर्वलघु, सर्वगुरु, सर्व वर्ण और सर्व मात्राओ की संख्या बताओ ?

मात्राओ की क्रमसख्याएँ	१	२	३	४	५	६	पहली पंक्ति
रूपांक	क १	ख २	ग ३	घ ५	ङ ८	च १३	दूसरी पंक्ति
सर्व लघु तथा सर्व गुरु	छ १	ज २	झ ५	ञ १०	ट २०	ठ ३८	तीसरी पंक्ति
सर्व वर्ण	१	३	७	१५	३०	५८	चौथी पक्ति
सर्व मात्राएँ	१	४	९	२०	४०	७८	पाँचवी पंक्ति

हल—पाँच पक्तियों मे से हर एक मे छ. छ कोठे बनाए और समझने की आसानी के लिए आवश्यकतानुसार दूसरी, तीसरी पंक्ति के कोठो मे 'क' 'ख' इत्यादि अक्षर भी रख लिये । अब पहली पंक्ति के कोठो मे क्रमश क्रमसख्या के १ २, ३, ४, ५, ६, अंक रख लिये । दूसरी पंक्ति के कोठो मे क्रमश ६ मात्राओ के रूपो की १, २, ३, ५, ८ और १३ संख्याएँ रखली । तीसरी पंक्ति के पहले कोठे मे १, दूसरे मे २ का अंक रख लिया । दूसरे कोठे मे 'ज' के अंक २ मे उसके

ऊपर वाले 'ख' कोठे के रूपांक २ को जोडो तो ४ हुए अब इस ४ के अंक मे 'ज' के बाएँ कोठे 'छ' के अ क १ को जोडा तो योगफल ५ हुआ । इसे दाहिनी ओर के खाली कोठे 'झ' मे रखा। इसी रीति से आगे 'ञ' 'ट' 'ठ' कोठो मे क्रमश १० २० और ३८ अंक रखे । बस समझलो कि ६ मात्राओ के छंद मे ३८ सर्व लघु है । इस सर्व लघु के बाईं ओर के कोठे 'ट' मे २० का अ क है । यह ६ मात्राओ के छंद मे सर्व गुरु २० है।

६ मात्राओ के छन्द मे ३८ लघु और २० गुरु है। इनका जोड ५८ हुआ इस से सिद्ध है कि अभीष्ट छन्द मे कुल ५८ वर्ण है। और इस छन्द मे २० गुरु है। इनके दूने करने पर ४० लघु हुए। इनमे ३८ लघु जोड़ देने से कुल ७८ मात्राएँ हुईं। यदि ६ मात्राओ को इनके रूपांक १३ से गुणा करलें तो भी ७८ मात्राएँ आगईं ।

पाताल द्वारा ज्ञात होगया कि ६ मात्राओ के छन्द में रूपांक १३ सर्व लघु ३८, सर्व गुरु २०, सर्व वर्ण ५८ और सर्व मात्राएँ ७८ हैं। †

वर्णिक-पाताल की रीति

१ चार पंक्तियो मे उतने कोठ बनाओ कि जितनी मोत्राओ का छन्द हो।

---

† ६ मात्राओं के प्रस्तार को देखो।

२. पहली पक्ति के कोठो मे दिये हुए छन्द की क्रमसंख्याएँ रख दो।

३ दूसरी पक्ति के कोठो मे दिये हुए छन्द के रूपांक क्रमश रख दो।

४ तीसरी पक्ति के कोठो मे छन्द के रूपांको के अर्द्धांक क्रमश रख दो।

ये अक लघ्वादि, लघ्वन्त, गुर्वादि और गुर्वन्त सख्या बतलाते है।

५ छन्द की क्रमसंख्याओ मे से प्रत्येक को उसी के नीचे वाले तीसरी पक्ति के अंक से गुणा करके गुणनफल को क्रमश चौथी पक्ति के कोठो मे रखते जाओ। ये अक गुरु तथा सर्व लघुओ की सख्या बतलाते है।

६ चौथी पक्ति के प्रत्येक कोठे के अंक का दूना करते जाओ और उसीके नीचे पॉचवी पक्ति के कोठो मे क्रमश रखते जाओ। बस सर्व वर्णों की संख्या ज्ञात हो जायगी।

७ चौथी पक्ति के प्रत्येक कोठे के अंक का तिगुना करते जाओ और उसीके नीचे छठी पक्ति के कोठो मे क्रमश रखते जाओ। बस यही अंक सर्वमात्राओ की संख्या बतलाते है।

उदाहरण—चार वर्णो के छन्द मे कितने रूप, कितने लघ्वादि, कितने लघ्वन्त, कितने गुर्वादि, कितने गुर्वन्त, कितने गुरु, कितने लघु, कितने वर्ण और कितनी मात्राएँ होगी ?

वर्ण क्रम-सख्या	१	२	३	४	पहली पंक्ति
रूप सख्या	२	४	८	१६	दूसरी पक्ति
लघ्वादि लघ्वन्त गुर्वादि, गुर्वन्त	१	२	४	८	तीसरी पक्ति
सर्व गुरु, सर्व लघु,	१	४	१२	३२	चौथी पंक्ति
सर्व वर्ण	२	८	२४	६४	पॉचवी पक्ति
सर्व मात्रा	३	१२	३६	९६	छठी पंक्ति

हल—पहली पंक्ति मे ४ वर्णो की क्रमसख्या १, २ ३, ४ रख ली।

दूसरी पक्ति मे रूपसख्याएँ २, ४, ८, १६ रखली।

तीसरी पक्ति मे रूप-सख्याओ के अर्द्धाक १, २, ४, ८ रख लिये। इन संख्याओ से ज्ञात हो गया कि ४ वर्णो

के वृत्त मे ८ लघ्वादि, ८ लघ्वन्त, ८ गुर्वादि, और ८ गुर्वन्त है।

पहली पक्ति की क्रम-संख्याओ को क्रमश. तीसरी पक्ति के अंको से गुणा किया तो क्रमश १, ४, १२, ३२ अक मिले। इन्हे क्रमश चौथी पंक्ति के कोठो मे रख दिया। इन से स्पष्ट हो गया कि ४ वर्णों के छन्दो मे सर्व गुरु ३२ और सर्व लघु ३२ है।

चौथी पंक्ति के प्रत्येक अंक का दूना किया तो ३, ८, २४, ६४ अंक मिले। इन्हे क्रमश पाँचवी पंक्ति के कोठो मे रख दिया। इससे ज्ञात हो गया कि ४ वर्ण के छन्दो मे सर्व वर्ण ६४ हैं।

चौथी पक्ति के प्रत्येक अंक का तिगुना किया तो ३, १२, ३६, ९६ अंक मिले। इन्हे क्रमशः छठी पक्ति के कोठो मे रख दिया तो ज्ञात हुआ कि ४ वर्णों के छन्दो मे ९६ सर्व मात्राएँ होगी।

पाताल द्वारा ज्ञात हो गया कि ४ वर्णों के वृत्त मे सर्व रूप १६, सर्व आदि लघु ८, सर्व अन्त लघु ८, सर्व आदि गुरु ८, सर्व अन्तगुरु ८, सर्व गुरु ३२, सर्व लघु ३२, सर्व वर्ण ६४ और सर्व मात्राएँ ९६ है। (४ वर्णों का प्रस्तार देखो)

७. मेरु

बिना प्रस्तार किये किसी छन्द की संख्या, उन रूपो के

सर्वलघु, एकगुरु, द्विगुरु आदि की संख्या जानने की रीति को 'मेरु' कहते हैं। *

मात्रिक-मेरु की रीति

१ पहले एक कोठा बनाओ। अब उसके नीचे दो दो कोठों की दोहरी इन दोहरे कोठो के नीचे तीन तीन कोठो की दोहरी, और आगे इसी क्रम से नीचे चार चार पाँच पाँच आदि कोठो की दोहरी पंक्ति दी हुई मात्राओ तक बनाओ।

२ इन कोठो के भरने की रीति यह है कि पहले कोठे मे १ का अक रखो। फिर दाहिने छोर के सब कोठो मे नीचे तक एक ही अंक रखो और बाएँ छोर के कोठो मे अन्त तक क्रमशः १, २, १, ३, १, ४ इत्यादि अन्त तक आवश्यकतानुसार अंक रखो।

अब जो कोठे खाली है उनके भरने की रीति यह है कि नकशे मे दिशा जानने की जो रीति है उसी नियम से खाली

---

* छन्द के रूपों की सख्या रूपो के सर्वलघु, एकगुरु, द्विगुरु आदि की सख्याएँ एकावली और खडमेरु द्वारा भी जानी जा सकती है। विस्तारभय से हम यहाँ एकावली और खण्डमेरु की रीति नही लिख रहे है क्योंकि हमारा उद्देश्य मेरु से ही सिद्ध हो जाता है।

कोठे के ऊपर बाई ओर वाले कोठे के अक मे उसी के नैऋत्य कोण वाले कोठे के अक को जोडो और खाली कोठो मे रखो। इस तरह खाली कोठे भर जावेगे।

३ अब सब से नीचे कोठो के नीचे बाएँ छोर से क्रमश गुरु लघु चिन्ह इस प्रकार रखो कि बाएँ छोर वाले कोठे के नीचे दी हुई मात्राओ के बराबर सर्वगुरु चिन्ह रखो। और यदि मात्राओ की सख्या विषम हो तो जितने गुरु बन सके, बनाकर रखो और इन गुरुओ के आगे एकलघु चिन्ह रख दो। अब इस कोठे के दाहिनी ओर के कोठो के नीचे जो चिन्ह रखो उनमे क्रमश एक एक गुरु कम करते जाओ और दो दो लघु बढाते जाओ, यहाँ तक कि दाहिने छोर वाले कोठे के नीचे सर्वलघु रूप आ जायगा। अब प्रस्तार का जो रूप जिस कोठे के नीचे रखा है उस कोठे का अक यह बतलाता है कि सर्वलघु, एकगुरु, द्विगुरु आदि रूपो के इतने छन्द होगे।

४ प्रत्येक पक्ति की बाई ओर मात्राओ की क्रम-संख्या रख लो। और अब प्रत्येक पंक्ति के अंको मे बाएँ से आरम्भ कर दाहिने छोर तक जोड कर उस पंक्ति के सामने दाहिनी ओर रखते जाओ। ये जोड उतनी मात्राओ के छन्दो की रूप संख्या बतावेगे जो अंक क्रमसख्याओ के रूप मे पक्तियो के बाएँ छोर पर रखे है।

और अब प्रत्येक पंक्ति के अंको को बाएँ से आरभ कर दाहिने छोर तक जोड कर उसी पक्ति के सामने दाहिनी ओर रखते जाओ। ये जोड उतनी मात्राओं के छन्दो की रूप-सख्या बतावेंगे जो अंक क्रम-संख्याओ के रूप मे पंक्तियो क बाएँ छोर पर रखे हैं।

उदाहरण—६ मात्राओ के छन्दो मे रूप-सख्याएँ क्या होंगी? और इन रूपो मे सर्वलघु, एक गुरु, द्विगुरु इत्यादि रूपो के छन्दो की संख्याएँ क्या होंगी।

६ मात्राओं का मेरु❀

१ मात्रा का छन्द	१				१ रूप-संख्या
२ मात्राओं के छन्द	क १	ख १			२ ,,
३ ,	ग २	घ १			३ ,,
४ ,,	च १	छ ३	ज १		५ ,,
५ ,,	झ ३	ट ४	ठ १		८ ,,
६	ड १	ढ ६	त ५	थ १	१३ ,,
	SSS	SS।।	S।।।।	।।।।।।	

❀ पहले कोठे के नीचे वाले कोठे इस प्रकार बनाओ कि ऊपर के

'त' खाली है। इसके बाँई ओर ऊपर कोठा ट' है और 'ट' के नैऋत्य मे कोठा 'ज' है। इन दोनो (ट+ज) के अंको (४+१) को जोडा तो ५ मिला। इसे कोठा 'त' मे रख दिया।

अब सब से नीचे बाएँ छोर के १ अंक वाले कोठे के नीचे ऽ ऽ ऽ रूप रखा। इस कोठे से दाहिनी ओर ६ अंक वाले दूसरे कोठे के नीचे ऽ ऽ । । यह रूप रखा। इसी प्रकार ५ अंक वाले तीसरे कोठे के नीचे ऽ । । । । और १ अंक वाले दाहिनी छोर के चौथे कोठे के नीचे । । । । । । रूप रखा। इससे सिद्ध होगया कि ६ मात्राओ वाले छन्दों मे एक छन्द सर्वलघु का होगा, ५ छन्द ऐसे होगे जिनमें १ गुरु और ४ लघु रहेगे, ६ छन्द ऐसे होगे जिनमे २ गुरु २ लघु रहेगे और एक छन्द ऐमा होगा जिसमे ३ गुरु रहेगे।

पहली पक्ति मे एक कोठा है जिसमे १ अंक है इससे सिद्ध है कि १ मात्रा की रूप सख्या १ ही है। दूसरी पक्ति मे 'क, ख' कोठो के अंको का जोड़ (१+१)=२ है, इसी तरह तीसरी पंक्ति के कोठो के अको का जोड ३, चौथी पंक्ति के कोठो के अंको का जोड़ ५, पॉचवी पंक्ति के कोठो के अको का जोड ८ और छठी पंक्ति के कोठो के अ को का जोड़ १३ है। अत सिद्ध होगया कि ६ मात्राओ के छन्दो की रूप-संख्या १३ है।

दिये हुए प्रश्न का पूरा उत्तर इस प्रकार हुआ कि ६ मात्राओ के छन्दो मे रूप-संख्या १३ होगी और इन रूपो मे

एक छन्द सर्वलघु का होगा, ५ छन्द ऐसे होगे जिनमे १ गुरु ४ लघु रहेगे, ६ छन्द ऐसे होगे जिनमे २ गुरु २ लघु रहेगे और एक छन्द ऐसा होगा जिसमे तीनों ही गुरु रहेगे। +

वर्णिक मेरु की रीति

१ जितने वर्णों का मेरु बनाना हो उससे एक अधिक कोठो की पंक्ति बनाओ। ये सब से नीचे की पंक्ति होगी। अब इस पक्ति के कोठो से एक कोठा कम करके इसके ऊपर एक पंक्ति और बनाओ। इसी प्रकार एक एक कोठा कम करते हुए क्रमश पक्तियाँ बनाते जाओ। जब दो कोठो की पक्ति बने तब उसे ही ऊपर की पहली पक्ति मान लो। ‡

२ इन कोठों मे अक भरने की रीति यह है कि पहली पंक्ति के दोनो कोठो मे और शेष सब पक्तियो के दाहिने और बाएँ छोर के कोठो मे १ का अंक रखो। अब ऊपर से खाली कोठो को इस भाँति भरो कि प्रत्येक खाली कोठे के ऊपर के †

+ ६ मात्राओं का प्रस्तार देखो।

‡ ध्यान रहे कि दो दो कोठो पर ऊपर वाला कोठा इस भाँति बनाओ कि उसकी दाहिनी और बाई भुजाएँ नीचे वाले कोठो के बीच मे रहें।

† मेरु को ध्यान से देखने से समझ मे आजायगा कि हर नीचे के कोठे के ऊपर केवल ऐसे दो-दो कोठे ही है जिनको इस कोठे की दोनो भुजाएँ स्पर्श करती हैं।

दोनो कोठो के अंको को जोड़ लो और इस खाली कोठे मे रख दो। इस रीति से सब खाली कोठे भर जावेगे।

३ अब सबसे नीचे की पक्ति के कोठो के नीचे बाएँ छोर से क्रमश. गुरु लघु चिन्ह इस प्रकार रखो कि बाई ओर के छोर वाले कोठे के नीचे दिये हुए वर्णों के बराबर सर्वगुरु चिन्ह रखो, अब इस कोठे से दाहिनी ओर के कोठो के नीचे जो चिन्ह रखो उनमे क्रमश एक एक गुरु कम करते जाओ और एक-एक लघु बढाते जाओ। यहाँ तक कि दाहिने छोर वाले कोठे क नीचे सर्व लघु रूप आजायगा। अब इस प्रस्तार का जो रूप जिस कोठे के नीचे रखा है उस कोठे का अ क यह बतलाता है कि सर्वलघु, एक गुरु, द्विगुरु इत्यादि के रूपों के इतने छन्द होगे।

४, प्रत्येक पंक्ति की बाईं ओर वर्णों की क्रम-सख्याओ के अंक रख दो और बाएँ छोर के कोठे से लेकर दाहिने छोर के कोठे तक के अंको को जोड़ कर दाहिनी ओर उसी पंक्ति के सामने रखते जाओ यह रूप-संख्या होगी।

उदाहरण—४ वर्णों के छन्दो मे रूपों की संख्या क्या होगी ? और इन रूपों मे सर्वलघु, एक गुरु, द्विगुरु इत्यादि रूपो के छन्दो की संख्याएँ क्या होंगी ?

४ वर्ण का मेरु

क्रम-संख्याएँ						रूप-संख्याएँ
१	क १	ख १				२
२	ग १	घ २	च १			४
३	छ १	ज ३	झ ३	ट १		८
४	ठ १	ड ४	ढ ६	त ४	थ १	१६
	SSSS	SSSI	SSII	SIII	IIII	

हल—दिये हुए नियम के अनुसार ४ पक्तियो के कोठे बना लिये । समझने की आसानी के लिए आवश्यकतानुसार इन पक्तियो मे 'क' 'ख' इत्यादि वर्ण भी रख लिये ।

अब पहली पक्ति के कोठो मे १ का अंक रख दिया । और शेष पंक्तियो के दाहिने, बाँए छोर के कोठो मे भी १ का ही अंक रख दिया । अब सब से ऊपर 'घ' खाली कोठा है । इस के ऊपर 'क, ख' दो कोठे हैं इन के अंको (१ + १) का जोड २ है । इसे 'घ' कोठे मे रख दिया । इसी तरह 'ग घ' का जोड़ ३ 'ज' मे 'घ, च' का जोड़ ३ 'झ' मे 'छ, ज' का जोड़ ४ 'ड' मे 'ज झ' का जोड़ ६ 'ढ' मे और 'झ, ट का जोड़ ४ 'त' खाली कोठे मे रखा ।

अब नीचे की पंक्ति के बाएँ छोर के १ अक वाले कोठे के नीचे ऽ ऽ ऽ ऽ रूप रखा । इस कोठे के दाहिनी ओर के कोठो के नीचे क्रमश ऽ ऽ ऽ ।, ऽ ऽ । ।, ऽ । । ।, । । । । रूप रखे । इस से सिद्ध हुआ कि ४ वर्णों के छन्द मे एक छन्द सर्वलघु का होगा, चार छन्द ऐसे होगे जिन मे १ गुरु ३ लघु होगे, ६ छन्द ऐसे होगे जिन मे २ गुरु, २ लघु होगे, ४ छन्द ऐसे होगे जिन मे ३ गुरु १ लघु होगा और एक छन्द ऐसा होगा जिस मे चारों ही गुरु हुगे ।

प्रत्येक पक्ति के अंको को जोडने से २, ४, ८, १६ अक मिले । इन्हे क्रमश इन पक्तियो के सामने दाहिनी ओर रख दिया । अत ४ वर्णों की रूप सख्या १६ हुई ।

इस तरह मेरु द्वारा ज्ञात हो गया कि ४ वर्णों के छन्दो की रूप-सख्या १६ होगी । और इन १६ रूपो मे १ छन्द सर्व लघु का होगा, ४ छन्द ऐसे होगे जिनमे १ गुरु ३ लघु होगे, ६ छन्द ऐसे होगे जिन मे २ गुरु २ लघु होगे, ४ छन्द ऐसे होगे जिनमे ३ गुरु एक लघु होगा और एक छन्द ऐसा होगा जिसमें चारो ही गुरु होगे ।*

८. पताका

छन्दो मे एक गुरु द्विगुरु आदि रूपों की संख्याएँ जो मेरु द्वारा प्रकट होती है । प्रस्तार श्रेणी मे उन का स्थान बनाने की रीति को 'पताका' कहते हैं ।

---

* ४ वर्णों का प्रस्तार देखो ।

मात्रिक पताका की रीति

१ दिये हुए छन्द की मात्राओ के बराबर खडी पंक्ति मे कोठे[1] बनाओ । और इन कोठो मे नीचे की ओर से क्रमश सूची-अंक[2] रख दो । इस प्रकार ऊपर के कोठे मे सूची का अन्तिम अंक (पूर्णांक) रहेगा । अब ऊपर के कोठे की बाईं ओर एक कोठा बनाओ और अब नीचे की ओर सूची-अंक वाले एक कोठे को छोड कर उस के नीचे वाले कोठे की बाईं ओर फिर एक कोठा बनाओ । इसी प्रकार नीचे की ओर क्रमशः एक एक कोठा छोड़ते हुए ऊपर वाले कोठों की तरह बाईं ओर जितने कोठे बनसकें बनालो। परन्तु सूची-अंक वाले सब से नीचे के कोठे की बाईं ओर तो जरूर एक कोठा बनाना ही होगा । क्योकि सर्वलघु की तरह गुरुओ का यह अन्तिम रूप होगा । इन कोठो मे मेरु-अंक इस प्रकार रखो—ऊपर के कोठे मे सर्वलघु रूपो का मेरु-अंक रखो और अब नीचे की ओर क्रमश एक गुरु, द्विगुरु इत्यादि रूपो के मेरु-अंक रखो । और इसी क्रम से इन के गुरु-लघु रूप भी इन कोठों की बाईं ओर रख दो।

---

१ यह पंक्ति पताका का दण्ड है ।

२ छन्दो की रूप सख्या को सूची-अक भी कहते हैं ।

२ जिन कोठों मे मेरु अंक रखे हुए है उन की दाहिनी ओर आड़ी पक्ति मे मेरु-अंक की सख्या के बराबर कोठे[१] बनालो । इन कोठो मे अंक इस प्रकार भरो कि जिस पंक्ति के कोठे भरने है उस के सूची-अंक से लेकर नीचे तक के सब सूची-अंक क्रमश उस ऊपर वाले सूची-अंक मे से घटाते जाओ कि जिस की बाईं ओर मेरु का अंक रखा हो। और शेषांको को क्रमश इन खाली कोठो मे दाहिनी ओर रखते जाओ । और यदि कोठे भरने से बाकी रह जावे तो ऊपर वाली भरी गई पंक्ति के प्रत्येक कोठे के अंक मे से उन्ही सूची-अंको को— जो ऊपर के सूची-अंक मे से घटाये जा चुके है—फिर क्रमशः घटाते जाओ, और शेषांक आगे रखते जाओ । अन्त मे सब खाली कोठे भर जावेंगे । परन्तु इस बात का ध्यान रहे कि जो अंक ऊपर के किसी कोठे मे एक बार आ चुका है वह आगे के कोठो मे न रखा जायगा । बस मेरु के अंको की स्थानीय संख्याएँ ज्ञात हो जायँगी।

उदाहरण—६ मात्रा वाले १३ छन्दों मे से एक छन्द सर्वलघु का, पाँच छन्द ऐसे जिनमें एक गुरु, छः छन्द ऐसे

---

१ सूची-अक वाला कोठा भी आडी पक्ति वाले कोठों की गणना में शामिल है। इसीलिए ऊपर वाले कोठे के दाहिनी ओर कोठा नहीं खींचा गया क्योंकि प्रस्तार का अतिम रूप सर्वलघु एक ही होता है। (देखो पताका)

जिनमे दो गुरु और एक छन्द ऐसा जिसमे त्रिगुरु रहेगे। प्रस्तार मे इन छन्दो के स्थान कहाँ होगे ? अर्थात् इनको स्थानीय संख्याएँ क्या होगी ?

||||||	१ त	१३ क					
		८ ल					
S||||	५ थ	५ ख	८ च	१० छ	११ ज	१२ झ	
		३ म					
SS||	६ द	२ ग	३ ट	४ ठ	६ ड	७ ढ	९ ण
SSS	१ ध	१ घ					

क्रिया—दिये हुए छन्दो की मात्राएँ ६ हैं। खडी पंक्ति मे छ कोठे बना लिये। इन कोठो मे नीचे की ओर से क्रमश सूची-अंक १, २, ३, ५, ८, १३ रख दिये। ऊपर के कोठे 'क' मे अन्तिम सूची-अंक १३ है। अब कोठे 'क' के बाईं ओर कोठा 'त' बनाया। अब नीचे की ओर सूची-अंक वाले कोठे 'ल' को छोड़ उसके नीचे वाले कोठे 'ख' की बाईं ओर

कोठा 'थ' बनाया। इसी क्रम से कोठे 'म' को छोड 'ग' की बाईं ओर कोठा 'द' बनाया अब सबसे नीचे के सूची-अंक वाले कोठे 'घ' की बाईं ओर भी एक कोठा 'ध' बनाया।

ऊपर के कोठे 'त' मे १, 'थ' मे ५, 'द' मे ६, और 'ध' मे १ का अक रख दिया। ये सब मेरु-अंक हैं। 'त' कोठे वाला अंक सर्वलघु का सूचक है। आगे 'थ, द, ध' कोठो वाले अंक क्रमश एक गुरु, द्विगुरु, त्रिगुरु आदि के सूचक है जो इन कोठो के बाएँ रखे हुए रूपो से प्रकट है।

कोठे 'त' की दाहिनी ओर केवल एक ही कोठा बनाना चाहिए, क्योकि सर्वलघु की मेरु-संख्या १ है। 'त' कोठे की दाहिनी ओर एक कोठा 'क' बना हुआ है इसलिए इससे आगे कोठा बनाने की जरूरत नही है। 'थ' कोठे की दाहिनी ओर 'ख' समेत 'च, छ, ज, झ' पाँच कोठे बना लिये। इसी प्रकार कोठे 'द की दाहिनी ओर 'ग' समेत 'ट, ठ, ड, ढ, ण' ये छ कोठे बना लिये। 'ध × की दाहिनी ओर एक कोठा 'घ' बना हुआ ही है। बनाने की जरूरत नही है क्योकि सर्व गुरु का भी तो एक ही रूप होगा।

मेरु अंक वाले कोठे 'त' के आगे 'क' कोठे मे १३ का अंक रखा ही है, भरने की कोई जरूरत ही नहीं है। हाँ, 'थ' कोठे के आगे के 'च, छ, ज, झ' कोठे खाली है। उनमे सख्याएँ भरनी हैं। एक गुरु के मेरु-अंक वाले 'थ' कोठे के ऊपर सूची-अंक १३ है। इसमे से क्रमश 'ख, म, ग, घ' कोठो के अक

५, ३, २, १ घटा लिये तो ८, १०, ११, १२ शेष बचे। इन्हे क्रमश बाईं ओर से खाली कोठो मे रख दिया। इसी प्रकार द्विगुरु वाली पताका के कोठे 'द' की दाहिनी ओर वाले 'ट, ठ ड, ढ, ण' खाली हैं। खाली कोठो के ऊपर के सूची-अंक 'ख' के ५ में से कोठे 'ग' के २ को तथा कोठे 'घ' के १ को घटाने से क्रमश ३ तथा ४ अंक मिले। इन्हे क्रमश 'ट, ठ' कोठो मे क्रमश रख दिया। अभी कोठे 'ड, ढ, ण' खाली है। १ गुरु वाली पताका के कोठे 'च' के ८ मे से कोठे 'ग' के २ को घटाया तो अक ६ मिला। इसे कोठा 'ड' मे रखा। फिर कोठे 'च' के ८ मे से कोठे 'घ' के १ को घटाया तो ७ बचे इसे कोठे 'ढ' मे रखा। अब कोठे 'छ के १० मे से कोठे 'ग' के २ को घटाया तो ८ मिले। यह अंक कोठा 'च' मे आ चुका है इसलिए इसे छोड़ दिया। अब कोठे 'छ' के १० मे से कोठे 'घ' के १ को घटाया तो अंक ९ मिला। इसे कोठे 'ण' मे रख दिया। अब तीसरी त्रिगुरु वाली पताका भरने के लिए कोठे 'ग' के २ मे से कोठे 'घ' के १ के घटाने की जरूरत नही है क्यो कि सम संख्या वाले छन्दों मे पहला रूप सर्वगुरु का होता ही है। जैसा कि 'घ' कोठे मे रखा हुआ १ का अंक प्रकट कर रहा है।

∴ इस पताका से ज्ञात हो गया कि ६ मात्रा वाले १३ छन्दों मे से तेरहवाँ रूप सर्वलघु का होगा। पाँचवाँ, आठवाँ,

दसवाँ, ग्यारहवाँ, तथा बारहवाँ रूप एक गुरु का, दूसरा, तीसरा, चौथा, छठा, सातवाँ, नवाँ, रूप द्विगुरु का और पहला रूप त्रिगुरु अर्थात् सर्वगुरु का होगा। *

वर्णिक पताका की रीति

१ जितने वर्णों की पताका बनानी हो उसके मेरु-अंको की मेरु-संख्या के बराबर खड़ी पंक्ति मे कोठे बनाओ। अब इन कोठो मे ऊपर की ओर से सर्वलघु, एक गुरु, द्विगुरु आदि की मेरु-संख्याएँ क्रमश रख दो। और इन कोठो के बाहर बाईं ओर सर्वलघु, एक गुरु, द्विगुरु आदि शब्दो मे भी लिख दो और उन के रूप भी रख दो। अब इन मेरु-अंक वाले कोठो की दाहिनी ओर ऊपर से दूसरी खडी पंक्ति मे उतने कोठे बनाओ जितने रूपांक इन वर्णों के हो। और इन कोठो मे नीचे से ऊपर की ओर रूपांक क्रमश रख दो। ध्यान रहे कि अन्तिम रूपांक सब से ऊपर के कोठे मे रहेगा। जिन कोठो मे मेरु अंक रखे हुए है उन की दाहिनी ओर पड़ी पंक्ति मे मेरु-अंको की संख्या के बराबर कोठे बनाओ। †

---

* ६ मात्राओं का प्रस्तार देखो।

† सूची-अंक वाला कोठा भी पड़ी पंक्ति वाले कोठों की गणना मे शामिल है। इसीसे ऊपर के मेरु-अंक वाले कोठे की दाहिनी ओर कोठा नही खींचा गया। क्योंकि प्रस्तार का अन्तिम रूप सर्वलघु एक ही होता है। ४ वर्ण का प्रस्तार देखो।

२ इन कोठो मे अंक इस प्रकार भरो कि जिस पंक्ति के कोठे भरने है उस के सूची-अंक को छोड़ कर नीचे के सब सूची-अंक क्रमशः ऊपर वाले सूची-अंक मे से घटाते जाओ। और शेषाको को क्रमश इन खाली कोठो मे दाहिनी ओर रखते जाओ । और जो कोठे भरने से शेष रह जावे तो ऊपर वाली भरी गई पताका की पंक्ति के प्रत्येक कोठे के अंक मे से उन्ही सूची-अंको को क्रमश. घटाते जाओ जो ऊपर के सूची-अंक मे से घटाये जा चुके हैं। और इस तरह जो शेषाक मिले उन्हे आगे के खाली कोठो मे रखते जाओ । अन्त में सब खाली कोठे भर जावेगे । परन्तु शेषाकों को खाली कोठो मे रखते समय इस बात का ध्यान रखो कि जो अंक ऊपर के किसी कोठे मे एक बार आ चुका है वह आगे के कोठो मे न रखा जावे बस पताका बन जायगी।

उदाहरण—४ वर्णों के १६ छन्दो मे से एक छन्द सर्व-लघु का, ४ छन्द ऐसे जिनमे एक गुरु, ६ छन्द ऐसे जिनमे दो गुरु, ४ छन्द ऐसे जिनमे तीन गुरु और एक छन्द ऐसा जिसमे चार गुरु (सर्वगुरु) रहेगे। प्रस्तार मे इन छन्दो के स्थान कहाँ होगे ? अर्थात् इनकी स्थानीय संख्याएँ क्या क्या होगी ?

४ वर्ण की पताका

।।।। सर्वलघु	क १	च १६					
ऽ।।। एक गुरु	ख ४	ट ८	ठ १२	ड १४	ढ १५		
ऽऽ।। द्विगुरु	ग ६	त ४	थ ६	द ७	ध १०	न ११	ल १३
ऽऽऽ। त्रिगुरु	घ ४	प २	फ ३	ब ५	भ ९		
ऽऽऽऽ चतुर्गुरु	ङ १	य १					

क्रिया—४ वर्ण की मेरु संख्याएँ १, ४, ६, ४, १ हैं। इन्हे क्रमश क, ख, ग, घ, ङ कोठो मे रख दिया और इन मेरु-संख्या वाले कोठो की बाई ओर सर्वलघु, एक गुरु, द्विगुरु आदि रूप ऊपर की ओर से क्रमश· रख दिये और शब्दो मे भी लिख दिये। अब मेरु-अक वाले कोठो की दाहिनी ओर नीचे से ४ कोठे खड़ी पंक्ति मे बना दिये इनमे नीचे से ही क्रमश· २, ४, ८, १६ रूपांक रख दिये। सबसे ऊपर वाले कोठे 'च' मे १६ रूपांक रखा गया।

अब कोठे 'क' की दाहिनी ओर कोठा बनाने की जरूरत नही क्योकि सर्वलघु का एक ही रूप होगा और दाहिनी ओर एक कोठा 'च' बना ही हुआ है। 'ख' कोठे की दाहिनी ओर 'ट' समेत 'ठ, ड, ढ' चार कोठे बना लिये। इसी प्रकार 'ग'

कोठे की दाहिनी ओर 'त' समेत 'थ, द, ध, न, ल' ये छ कोठे बना लिये। इसी प्रकार कोठे 'घ' की दाहिनी ओर 'प' समेत 'फ, ब, भ' चार कोठे बना लिये और 'ङ की दाहिनी ओर एक कोठा 'य' बना लिया।

मेरु-अंक वाले 'ख' कोठे की दाहिनी ओर 'ठ, ड, ढ' कोठे खाली हैं। 'ट' के ऊपर वाले सूची-अक 'च' १६ मे से 'त, प, य' कोठो के अंक घटाये तो क्रमश १२, १४, १५, अ क मिले। इन्हे क्रमश' 'ट, ड, ढ' कोठो मे रख दिया।

मेरु-अंक वाले 'ग' कोठे को दाहिनी ओर 'थ, द, ध, न, ल' कोठे खाली है। 'त' के ऊपर 'ट' कोठा है इसके अंक ८ मे से 'म, य, के अंक २, १ को घटाया तो क्रमश ६, ७ अंक मिले। इन्हे क्रमश 'थ, द' मे रखा। अब नियमानुसार 'ठ' के अंक १२ मे से 'प, म' के २, १ को घटाया तो १०, ११ मिले। इन्हे 'ध, न' मे रखा। अब 'ड' के अंक १४ मे से 'प, य' के २, १ को घटाया तो १२, १३ मिले। १२ अंक 'ठ' कोठे मे आ चुका है। इसे छोड़ दिया। अंक १३ को 'ल' कोठे मे रखा। यह पताका पूरी हो गई।

अब त्रिगुरु पताका के खाली कोठे भरने के लिए 'त' के ४ मे से 'म' के १ को घटाया तो ३ मिले। इस अंक को 'फ' मे रख दिया। अब 'थ' के ६ मे से 'य' के १ को घटाया तो ५ मिले। इसको 'ब' मे रखा। 'द' के ७ मे से 'य' के १ को घटाने पर ६ मिले। यह अंक 'थ' मे आ चुका है।

इसे छोड़ दिया । 'ध' के १० मे से 'य' के १ को घटाने पर ९ आया यह अक 'भ' मे रख दिया। यह पताका भी पूरी होगई।

सर्व गुरु का एक ही रूप होता है इसलिए कोठे 'य' मे १ अक रख दिया। बस अब पताका पूरी हो गई।

अब यह पताका बतला रही है कि ४ वर्णों के १६ छन्दो मे से सोलहवॉ रूप सर्व लघु का होगा। आठवाँ, बारहवाँ, चौदहवॉ तथा पंद्रहवॉ रूप १ गुरु का, चौथा, छठा, सातवाँ, दसवाँ, ग्यारहवाँ तथा तेरहवॉ रूप द्विगुरु का, दूसरा, तीसरा, पॉचवॉ तथा नौवाँ रूप त्रिगुरु का और पहला रूप चतुर्गुरु (सर्वगुरु) का होगा। †

९ मर्कटी

जिस क्रिया द्वारा छन्द, मात्रा, वर्ण, लघु, गुरु तथा पिड की समग्र सख्याएँ ज्ञात होती है उसे 'मर्कटी' कहते है।

मात्रिक मर्कटी की रीति

१ जितनी मात्राओ की मर्कटी बनानी हो उतनी ही पक्तियो मे खड़े कोठे बनाओ । और इन कोठो को काटती हुई रेखाओ से सात पडी पंक्तियो मे कोठे बनाओ । अब पडी पक्तियो वाले कोठो की बाई ओर पहली पंक्ति के सामने मात्राओ

---

† ४ वर्णों का प्रस्तार देखो ।

की क्रम-संख्या, दूसरी पक्ति के सामने भेदाक ×, तीसरी पक्ति के सामने सर्वकला, चौथी के सामने गुरु, पॉचवी के सामने लघु, छठी के सामने वर्ण तथा सातवी के सामने 'पिण्ड' शब्द लिख दो।

२ अब पडे कोठे वाली पक्तियाॅ इस प्रकार भरो कि पहली पक्ति के कोठो मे १, २, ३, ४ इत्यादि दिये हुए छन्द की क्रम सख्याएॅ रखदो। दूसरी पक्ति के कोठो मे सूची के अक १, २, ३, ५ इत्यादि रख दो। तीसरी पक्ति के (सर्व कला वाले) कोठे इस प्रकार भरो कि पहली (क्रमांक) तथा दूसरी (भेदांक) पक्ति के ठीक ऊपर-नीचे वाले कोठो के अंको के गुणनफलो को तीसरी पक्ति के (सर्वकला वाले) कोठो मे रख दो। अब चौथी पक्ति के (गुरु वाले) कोठे इस प्रकार भरो कि बाईं छोर के कोठे मे शून्य और उससे आगे दाहिनी ओर वाले दूसरे कोठे मे १ का अक रखो। अब आगे के कोठे इस प्रकार भरो कि खाली कोठे की बाई ओर वाले कोठे के अक का दूना करके इस अक को उसी कोठे के ऊपर वाले (सर्वकला वाले) कोठे के अंक मे से घटावे। घटाने पर जो अंक मिले उसे खाली कोठे मे रखदे। पाँचवी पक्ति के (लघु वाले) कोठे इस प्रकार भरो कि चौथी पंक्ति के (गुरु वाले) कोठो के अंको को दूना करलो और तीसरी पंक्ति के (सर्वकला वाले) कोठो मे से

× इसे सूची अक भी कहते हैं।

इन्हे क्रमश घटादो, घटाने पर जो अंक मिले उन्हे क्रमश पाँचवी पक्ति के (लघु वाले) कोठो मे रखदो । छठवी पक्ति के (वर्ण वाले) कोठे इस प्रकार भरो कि चौथी (गुरु वाली) तथा पाँचवी (लघु वाली) पक्ति के ऊपर नीचे वाले कोठो के अको को जोड ले । और इन के जोड को छठी पक्ति के (वर्ण वाले) कोठो मे क्रमश रखदो । अब सातवीं पक्ति के (पिण्ड वाले) कोठे इस प्रकार भरो कि तीसरी पक्ति के (सर्व कला वाले) कोठो के अर्द्धाङ्को को क्रमश सातवीं पक्ति के (पिण्ड वाले) कोठो मे रखदो । परन्तु ध्यान रहे कि इस पंक्ति के बाएँ छोर वाले कोठे मे शून्य ही रखा जायगा। बस 'मर्कटी' तैयार हो जायगी ।

उदाहरण—६ मात्राओ के छन्दो मे कुल कितने छन्द, कितनी मात्राएँ, कितने वर्ण, कितने गुरु, कितने लघु और कितने पिण्ड होंगे ?

६ मात्राओं की मर्कटी

१ मात्राओ की क्रमसख्याएँ	१	२	३	४	५	६
२. भेदाक	१	२	३	५	८	१३
३ सर्वकला	क १	ख ४	ग ९	घ २०	ङ ४०	च ७८
४ गुरु	छ ०	ज १	झ २	ञ ५	ट १०	ठ २०
५ लघु	ड १	ढ २	ण ५	त १०	थ २०	द ३८
६ वर्ण	ध १	न ३	प ७	फ १५	ब ३०	भ ५८
७ पिण्ड	म $\frac{1}{2}$	य २	र ४$\frac{1}{2}$	ल १०	व २०	स ३९

क्रिया—दिये हुए नियम के अनुसार कोठे बना लिये। अब पडी पक्तियो वाले कोठो की बाई ओर पहली पक्ति के कोठो के सामने क्रमसख्या, दूसरी के सामने भेदांक, तीसरी के सामने सर्वकला, चौथी के सामने गुरु, पाँचवी के सामने लघु, छठी के सामने वर्ण तथा सातवी के सामने 'पिण्ड' शब्द लिख दिये।

अब नियमानुसार पहली पडी पंक्ति वाले कोठो मे बाईं ओर से १ २, ३, ४, ५, ६ क्रम-संख्याएँ रख दी। और दूसरी पक्ति के कोठो मे १, २, ३, ५, ८, १३ भेदांक रख दिये।

अब तीसरी पक्ति के कोठे इस प्रकार भरे कि पहली पक्ति के १, २, ३, ४, ५, ६ इन क्रमांको को दूसरी पक्ति के १ २ ३, ५, ८, १३, भेदांको से क्रमश गुणा किया तो १ × १, २ × २, ३ × ३, ४ × ५, ५ × ८, ६ × १३ = १, ४, ९, २०, ४०, ७८ अक गुणन-फल के मिले। इन मे सेकोठे क' मे १, 'ख' मे ४ 'ग' मे ९, 'घ' मे २० 'ङ' मे ४० और 'च' मे ७८ का अंक रखा। ये सर्वकला के रूप निकल आये।

अब चोथी पंक्ति के कोठे इस प्रकार भरे गये कि बाईं ओर से पहले कोठे 'छ' मे ० तथा 'ज' मे १ अंक रखा। अब खाली कोठे 'झ' के बाएँ कोठे 'ज' में अंक १ है इसका दूना किया तो १ × २ = २ अंक मिला। इस २ का शीर्षांक 'ख' कोठे मे अक ४ है ४ मे से अक २ घटाया तो ४ – २ = २ शेष रहा। इसे 'झ' में रखा। इसी क्रिया के अनुसार 'झ' के २ को २ से गुणा कर अंक ४ प्राप्त किया इसे अपने शीर्षांक 'ग' के ९ में से घटाने पर ५ मिला इसे 'ञ' में रखा। इसी तरह 'ञ' के ५ × २ 'घ' शीर्षांक २० मे से घटाया तो २० – १० = १० शेष रहा इसे 'ट' मे रखा। और 'ट' के १० × २ को शीर्षांक 'ङ' के ४०

मे से घटाया तो ४०–२० = २० शेष रहा इसे 'ठ' मे रखा।
बस गुरुओ की सख्या ज्ञात हो गई।

पॉचवी पक्ति के कोठे इस तरह भरे कि कि चौथी पंक्ति के कोठो के अंक ०, १, २, ५, १०, २० को दूना किया तो क्रमशः ० २ ४ १०, २०, ४० अंक मिले। इन्हे तीसरी पक्ति के अंक १, ४ ६ २० ४०, ७८ मे से घटाया तो १ २, ५, १० २०, ३८ अंक शेष रहे। इन्हे क्रमश बाईं ओर से 'ड ढ, ण, त थ, द' कोठो मे रख दिया। इस तरह लघुओ की सख्या ज्ञात हो गई।

छठी पक्ति के कोठे इस तरह भरे गये कि चौथी पक्ति के ०, १, २, ५, १०, २० मे पॉचवी पक्ति के १, २, ५, १०, २०, ३८, अको को जोडा तो क्रमश १, ३, ७, १५, ३० और ५८ अंक मिले। इन्हे छठी पक्ति के ध, न, प, फ, ब, भ मे बाईं ओर से क्रमश रख दिया। इस तरह वर्णो की संख्या ज्ञात हो गई।

अब सातवी पक्ति के कोठे भरने के लिए तीसरी पक्ति के १, ४, ९, २०, ४०, और ७८ अंको के आधे किये तो ½, २, ४½, १०, २०, और ३९ अक मिले। इनको बाईं ओर क्रमश. म, य, र, ल, व, और स कोठों मे रख दिया। बस पिड संख्या भी ज्ञात हो गई।

इस तरह इस मर्कटी से स्पष्ट हो गया कि ६ मात्राओं के कुल १३ छन्द होते है। इन छन्दो मे कुल ७८ मात्राएँ होती है, इन मे २० गुरु, और ३८ लघु होते है कुल ५८ वर्ण और ३९ पिण्ड होते है।*

वर्णिक मर्कटी की रीति

१ जितने वर्णों की मर्कटी बनानी हो उतनी ही खडी पक्तियो मे कोठे बनाओ। और इन कोठो को काटती हुई रेखाओ से सात पडी पक्तियो मे कोठे बनाओ। अब पडी पक्तियो वाले कोठो की बाई ओर पहली पक्ति के सामने वर्णों की क्रम-सख्या, दूसरी के सामने भेद-संख्या तीसरी के सामने सर्वकला, चौथी के सामने वर्ण, पॉचवी के सामने गुरु, छठो के सामने लघु तथा सातवी के सामने पिण्ड शब्द लिख दो।

२ अब पड़ी पक्तियो वाले कोठे इस प्रकार भरो कि पहली पंक्ति के कोठो मे बाईं ओर से १, २, ३ इत्यादि दिये हुए वर्णों की क्रम-सख्याएँ रख दो। दूसरी पंक्ति के कोठो मे सूची के अंक २, ४, ८, १६ इत्यादि रख दो। चौथी पक्ति के कोठे इस तरह भरो कि पहली (क्रम-सख्या वाली) तथा दूसरी

---

* ६ मात्राओं का प्रस्तार देखें।

(भेदांक वाली) पंक्ति के तले-ऊपर वाले कोठो के अ ंको के गुणन-फलो को चौथी पंक्ति के (वर्ण वाले) कोठो मे बाईं ओर से क्रमश रखदो। पाँचवी पक्ति के (गुरु वाले) कोठे इस प्रकार भरो कि चौथी पक्ति के (वर्ण वाले) कोठो के अ ंकों को आधा करके पाँचवी पक्ति के (गुरु वाले कोठो मे रखदो। छठीं पक्ति के (लघु वाले) कोठो मे क्रमश वे ही अ ंक रखलो जो (गुरु वाले) पाँचवी पक्ति के कोठो मे रखे हैं * सर्वकला वाले तीसरी पंक्ति के कोठे इस तरह भरो कि पाँचवी पंक्ति के गुरुओ के अंको के दूने मे छठी पंक्ति के लघुओ को तले-ऊपर के क्रम से जोड़ लो, और इनके योगफल को बाईं ओर से क्रमश तीसरी पंक्ति के कोठों में रख दो। सातवीं पंक्ति के पिण्ड वाले कोठो के भरने के लिए तीसरी पंक्ति के (सर्वकला वाले) कोठो के अ ंको को आधा-आधा करके बाईं ओर से क्रमश सातवीं पंक्ति के कोठों मे रखदो। बस 'मर्कटी' तैयार हो जायगी।

उदाहरण—४ वर्णों के कुल कितने छन्द होंगे, कितनी मात्राएँ, कितने वर्ण, कितने गुरु, कितने लघु और कितने पिण्ड होंगे ?

---

* वर्णिक छन्दों में प्रत्येक वर्ण के दो ही रूप होते हैं एक गुरु और दूसरा लघु रूप। इस से जो सख्या गुरुओ की होगी वही लघुओं की भी होगी।

४ वर्णों की मर्कटी

१ वर्णों की क्रम संख्याएँ	१	२	३	४
२ भेद-संख्याएँ	२	४	८	१६
३ सर्वकला,	क ३	ख १२	ग ३६	घ ९६
४ सर्ववर्ण	च २	छ ८	ज २४	झ ६४
५ गुरु	ट १	ठ ४	ड १२	ढ ३२
६. लघु	त १	थ ४	द १२	ध ३२
७ पिण्ड	प १½	फ ६	ब १८	भ ४८

क्रिया—नियमानुसार कोठे बनाकर पड़ी पंक्ति वाले कोठो की पहली पंक्ति की बाईं ओर वर्णों की क्रम-संख्या, दूसरी की बाईं ओर भेदांक, तीसरी की बाईं ओर सर्वकला, चौथी की बाईं ओर वर्ण, पाँचवीं की बाईं ओर गुरु, छठी की बाईं ओर लघु तथा सातवीं की बाईं ओर 'पिण्ड' शब्द लिख दिये।

अब नियमानुसार पडी पंक्ति वाले पहली पक्ति के कोठो मे वर्णों की १, २, ३, ४ क्रम-सख्याएँ लिख दी। दूसरी पक्ति के कोठो मे क्रमश २, ४, ८, १६ भेदाक रख दिये। अब चौथी पक्ति के कोठे इस प्रकार भरे कि पहली पक्ति के १, २, ३, ४ क्रमांको को दूसरी पक्ति के २, ४, ८, १६ भेदांको से क्रमश गुणा किया तो गुणनफल मे २, ८, २४, ६४ मिले। इन अको को 'च, छ ज, झ' कोठो मे बाई ओर से क्रमश रख दिया। अब पॉचवी पक्ति के (गुरु वाले) कोठे इस प्रकार भरे कि चौथी पक्ति वाले कोठो के २, ४, २४, ६४ अको के आधे-आधे किये तो क्रमश १, ४, १२, ३२ अंक मिले। बाईं ओर से क्रमश इन्हे 'ट, ठ, ड, ढ,' कोठों मे रख दिया। यही सख्याएँ लघुओ की भी होगी इसलिए छठी पक्ति के त, थ, द, ध' कोठो मे भी ज्योकी त्यो यही संख्याएँ रखली।

अब पाँचवी पंक्ति के गुरु अंकों के दूने † १ × २, ४ × २, १२ × २, ३२ × २ अर्थात् २, ८, २४, ६४ मे छठी पंक्ति के १, ४, १२, ३२ लघुओ को जोड कर योगफलो २ + १, ८ + ४, २४ + १२, ६४ + ३२ अर्थात् ३, १२, ३६, ९६ को तीसरी पंक्ति के कोठो मे बाई ओर से क्रमश. रख दिया। इस तरह सर्व कलाएँ ज्ञात होगईं।

---

† एक गुरु में दो लघु मात्राएँ होती है। इसी से गुरु अकों को दो से गुणा किया गया है।

अब सातवी पक्ति के कोठे भरने के लिए तीसरी पक्ति वाले कोठो के ३ १२, ३६, ६६ अको के आधे आधे किये तो क्रमश १½. ६ १८, ४८ अक मिले। इनको सातवी पक्ति के कोठो मे बाई ओर से क्रमश रखा। बस 'मर्कटी' तैयार होगई।

इस तरह इस मर्कटी से ज्ञात होगया कि ४ वर्णो के कुल छन्द १६ होते है। जिनमे कुल ६६ कलाएँ, ६४ वर्ण, ३२ गुरु ३२ लघु तथा ४८ पिण्ड होते है।

छन्द और रस

यो तो किसी भी छन्द मे किसी भी रस का वर्णन किया जा सकता है। पर कुछ छन्द ऐसे है जिनमे किसी खास रस का वर्णन ही विशेष रूप से जँच सा जाता है। यहाँ कुछ ऐसे छन्दो की संक्षिप्त सूची दी जाती है जो रस विशेष के उत्कर्ष बढ़ाने मे विशेष सहायक से सिद्ध होते हैं —

छन्द	रस
मात्रिक	
प्रसाद (शृंगार)	करुण रस
चितहंस (पीयूषवर्ष)	करुण रस
सखी	करुण रस
रूपमाला	करुण रस
प्लवंगम	करुण रस
हरिगीतिका	करुण रस
रूपमाला	शान्त रस
लावनी (राधिका)	शृंगार
तोमर	वीर रस
रोला	वीर रस
चौबोला	वीर रस
आल्हा	वीर रस
अमृत ध्वनि	वीर, रौद्र
बरवै	शृंगार, करुण, शान्त

वर्णिक:—

१ सस्कृत वृत्त

छन्द	रस
मन्द्राक्रान्ता, द्रुतविलंवित, शिखरिणी, मालिनी	शृंगार, शान्त, करुण
भुजंग प्रयात, वशस्थ विलम्, शार्दूल विक्रीडित	वीर, रौद्र, भयानक

२ हिन्दी वर्णिक—

छन्द	रस
मिताक्षरी	वीर, करुण
सवैया	करुण, शृगार, शान्त.
अनग शेखर	शृंगार, करुण
करखा	वीर
कृपाण	वीर, भयानक, रौद्र
अरिल्ल, चौपई, चौपाई, दोहा, सोरठा, घनाक्षरी	सभी रसो मे प्रयुक्त हो सकते है।

समस्यापूर्त्ति और छन्द

पूर्त्तिकार सब से पहले देखे कि समस्या के शब्द—यद्यपि अब समस्याओ का युग गया फिर भी इस पर विचार कर लेना, अनुचित नही है—समस्यापूर्त्ति करते समय अथवा वर्ण किस छन्द मे फिट बैठते है, छन्द के निर्णय मे उनके तुकान्त विशेष सहायक होते है। छन्द चुन लेने के बाद तुकान्तो की खोज करे †। यह सब होने के बाद विषय और उसके अनुकूल रस पर दृष्टिपात करे।

जिस छन्द मे समस्यापूर्त्ति की जाती है उसके चौथे चरण मे ही प्राय दी हुई समस्या के शब्द या वर्ण तुकान्त के रूप मे रखे जाते है। इसलिए सब से पहले हमे चौथा अथवा अन्तिम चरण ही रच लेना चाहिए। शेष चरणो की पूर्त्ति मे उसी विषय का प्रतिपादन करना चाहिए। ध्यान रहे कि समस्या-पूर्त्ति के चरणों मे ऐसा क्रम रखे कि चरणो मे उत्तरोत्तर उत्कर्ष बढता जाय और अन्तिम चरण सब से जोरदार सिद्ध हो। साथ ही अन्तिम चरण मे समस्या के शब्द अथवा वर्ण इस कौशल से बैठाने चाहिएँ कि सहज स्वाभाविकता का अभाव न जान पड़े। वरन यही मालूम हो कि ये 'शब्द' अथवा वर्ण स्वभावत आगये है। इन्हे यहाँ लाने का कोई प्रयत्न नही किया गया है।

---

† अतुकान्त पदों में पूर्त्ति करने पर अन्त्यानुप्रास के तलाशने के झंझट में पड़ने की भी जरूरत नहीं है। विषयानुसार रचना के अन्तिम चरण के अन्त में समस्या के शब्द अथवा वर्ण आजाने ही काफी हैं।

उर्दू के छन्द

वास्तव मे उर्दू कोई भिन्न भाषा नही है। हिन्दी की जिस शैली मे अरबी, फारसी के तत्सम शब्दो की भरमार रहती है आजकल उसे ही उर्दू कहते है। जो हो, हमारा अभीष्ट है हिन्दी छन्दो के साथ उर्दू बहरो की तुलना करना।

यदि हिन्दी के छन्द शास्त्रो की दृष्टि से उर्दू के छन्दो पर विचार किया जाय तो यह मान लेने मे तनिक भी आपत्ति नही की जा सकती कि उर्दू की सारी बहरे हिन्दी के मात्रिक छन्दो के अन्तर्गत आजाती है। यही कारण है कि आचार्य भिखारीदास जी ने मात्रा मुक्तको की कल्पना करके और नये नये नाम देकर उर्दू के प्रसिद्ध छन्दो को उसमे रख लिया है। हमने भी मात्रा मुक्तको मे इनकी चरचा करदी है।

कुछ विद्वानो का मत है कि उर्दू बहरो की—जो वास्तव मे अरबी, फारसी की बहरे है—हिन्दी के मात्रिक छन्दो मे गणना करते हुए भी यह मानना ही पडता है कि अरबी, फारसी की बहरो की अपनी शैली कुछ भिन्न अवश्य है। और वह उसी तरह जिस तरह कि संस्कृत वृत्तो की। उर्दू के छन्दो को मात्रिक तथा वर्णिक छन्दो मे स्थान देने के लिए हमारे पास इस के सिवाय और कोई चारा नही है कि गति के अनुसार निर्णय करे। महाकवि नाथूराम 'शंकर' शर्मा ने उर्दू बहरो का नाम रखा है 'राजगीत', मात्रिक अथवा वर्णिक जिस छन्द से किसी राजगीत की गति मिलती है उसी के नाम के साथ

राजगीत ' शब्द जोड़ कर उन्होने उर्दू बहरो के नाम रखे है, जैसे, 'शुद्धगा राजगीत' 'स्रग्विस्यात्मक राजगीत' इत्यादि।

अब यहाँ हम उर्दू छन्दशास्त्र की मोटी मोटी बातें 'सक्षेप मे' दिखा कर आगे उन छन्दो के नाम दिये देते है, जिनकी गति हिन्दी के छन्दो से मिलती जुलती है ।

छन्दो के नियमो को उर्दू मे ' इल्मेउरूज कहते है। चरणो की सख्या के विचार से एक चरण वाले छन्द को 'मिसरा' दो वाले को ' शेर या बेत ', तीन वाले को ' मुसल्लिस ', चार वाले को ' मुरब्बा ', पॉच वाले को ' मुखम्मस ' छः वाले को ' मुसद्दस ', सात वाले को ' मुसब्बा ', आठ वाले को ' मुसम्मन ', नौ वाले को ' मुतस्सा ', और दस वाले को ' मुअश्शर ', कहते है।

छन्द के आरम्भ के 'शेर' को 'मतला' और अन्तिम शेर को 'मकता' कहते हैं।

छन्द के चरणो की जॉचने की रीति को 'तकतीअ' कहते हैं।

रदीफ़ और क़ाफ़िया

चरणान्त मे निरन्तर आने वाले शब्द को 'रदीफ' कहते है। इसका अर्थ भी सदा एक ही रहता है। रदीफ़ प्राय मतला के दोनो ही चरणो मे आता है, और आगे चलकर प्रत्येक शेर के दूसरे मिशरे मे आता है। यह एक वर्ण से लेकर कितने ही वर्णों तक का हो सकता है।

रदीफ से पहले आने वाले सानुप्रास शब्द को 'काफिया' कहते है। यह विषम चरणो मे सयोग से परन्तु सम चरणो मे तो जरूर आया करता है। मतले क दोनो चरणो मे ही प्राय' काफिया आता है। यह सदा बदलता रहता है और इसका अर्थ भी बदलता रहता है। रदीफ और क़ाफिया समझने के लिए यहाॅ एक दो उदाहरण दे दिये जाते है —

(१)

बरसो से हो रहा है बरहम 'समाॅ" "हमारा"।
दुनिया से मिट रहा है नामो"निशाॅं" "हमारा' ॥ १ ॥
कुछ कम नही अजल से ख्वाबे"गराॅ' "हमारा"।
इक लाश बे कफन है 'हिन्दोस्ताॅ" 'हमारा" ॥ २ ॥
इल्मो कमाल ईमाॅ बरबाद "हो" "रहे हैं"।
ऐशोतरब के बन्दे गफ़लत मे "सो" "रहे हैं" ॥ ३ ॥
ऐ सूर हुब्बे क़ौमी इस ख्वाब से 'जगा" "दे"।
भूला हुआ फिसाना कानो को फिर 'सुना" "दे" ॥ ४ ॥
मुर्दा तबीयतो की अफसुर्दगी "मिटा" "दे"।
उठतेहुए शरारे इस राख से "दिखा" "दे" ॥ ५ ॥

—चकवस्त

(२)

कह रहा है आसमाॅ यह सब 'समाॅ" "कुछ भी नही"।
पीस दूँगा एक गर्दिश मे "जहाॅ" "कुछ भी नही" ॥
रोती है शबनम कि नैरगे "जहाॅ" 'कुछ भी नही"।
चीखती है बुलबुले गुल का 'निशाॅ" "कुछ भी नही' ॥

तख्तवालो का पता देते हैं तख्ते गोर के।
खोज मिलता है यहाँ तक बाद "अजाँ" "कुछ भी नही" ॥
जिनकी नौबत की सदा से गूँजते थे "आसमाँ"।
दम बखुद हैं मक़बरो मे "हूँ न हाँ" "कुछ भी नही" ॥
जिनके महलों मे हज़ारों रंग के फ़ानूस थे।
झाड़ उनकी क़ब्र पर हैं और "निशाँ" "कुछ भी नही" ॥
—अज्ञात

आयो मन हाथ तब आयबो रह्यो न कछू,
भायो गुरु ज्ञान फेरि "भायबो" "कहा रह्यो"।
कहै 'पद्माकर' सुगध की तरंग जैसे,
पायो सतसंग फेरि "पायबो" "कहा रह्यो" ॥
दान बलवान बल विविध वितान बल,
छायो जस पुंज फेरि "छायबो" "कहा रह्यो"।
ध्यायो राम रूप तब ध्यायबो रह्यो न कछू,
गायो राम नाम तब "गायबो" "कहा रह्यो" ॥
—पद्माकर

टिप्पणी—यहाँ पहले छन्द के पहले दूसरे शेरो मे 'समाँ', 'निशाँ', 'गराँ', 'हिन्दोस्ताँ', तीसरे मे 'हो, 'सो', चौथे मे 'जगा', 'सुना', और पाँचवे मे 'मिटा', 'दिखा'† रदीफ हैं जो बराबर बदल

---

† जगा, सुना, मिटा, दिखा, आदि में अकार स्वर होने से ये शब्द रदीफ माने जावेगे क्योकि स्वर-साम्य होना भी अनुप्रास के अन्तर्गत है।

रहे है और इनके अर्थ भी बदले हुए है। और क्रमश हमारा, 'रहे है','दे', क़ाफ़िया हैं जिनके एक ही अर्थ हैं और जो बराबर वही आ रहे हैं।

इसी तरह दूसरे छन्द मे 'समाँ, 'जहाँ', 'निशाँ, 'अजाँ, 'हूँ न हाँ' रदीफ और 'कुछ भी नही' काफिया है।

तीसरा छन्द हिन्दी का मनहरण छन्द है। इस मे 'भायबो', 'पायबो','छायबो ,'गायबो , रदीफ और 'कहा रह्यो' क़ाफिया है।

छन्द मे जब अकार के बाद कोई अन्य स्वर आ जाता है तो कभी कभी आवश्यकतानुसार इस अकार का लोप कर देते हैं, और अकार वाले व्यंजन मे आगे का स्वर मिल जाता है यह 'अलिफ़े वस्ल का विकार' कहलाता है, जैसे —'उठालूँ सख्तियाँ लाखों कडी 'बात' उठ नही सकती।' —बेताब

इस मिसरे मे 'बात' के अकार का लोप किया तो 'त्' रूप रह गया। इसमें आगे का 'उ' मिलाया तो यह रूप हुआ— 'कड़ी बातुठ नही सकती' इसी तरह इसकी 'तक़तीअ़' भी की जायगी। ध्यान रहे कि 'ऐन' का उच्चारण भी 'अलिफ़' (अ) वत् होता है पर वह लोप नही होता।

गण को उर्दू मे रुक्न और गणों को अरकान कहते है। ये मुतहर्रिक और साकिन इन दो तरह के वर्णों से बनते हैं। जिन वर्णों पर ज़बर (अ), ज़ेर (इ) और पेश (उ) रहते है वे वर्ण मुतहर्रिक कहलाते है और शब्द के अन्त मे रहने वाले स्वर रहित (हलन्त) व्यंजन को साकिन कहते हैं। परन्तु निस्बत (सम्बन्ध वाची) वाले प्रयोगो मे पहले शब्द का साकिन वर्ण

भी जेर (इ) लगने के कारण मुतहर्रिक हो जाता है , जैसे — 'गुल्'. मे 'गु' मुतहर्रिक और 'ल्' साकिन है परन्तु जब 'गुल-नरगिस—गुले नरगिस पढ़ा जायगा तब 'गुल' का 'ल' भी मुतहर्रिक ही माना जायगा।

जिस प्रकार हिन्दी के छन्दशास्त्र का सारा दारोमदार गुरु-लघु पर है। इसी तरह उर्दू मे साकिन और मुतहर्रिक पर है। जिस तरह लघु गुरु के उलटफेर से हिन्दी मे लघु गुरु और आठ गण मिलकर पिंगल के ये दशाक्षर सारे छन्दशास्त्र के मूल मे व्याप्त रहते है। ठीक उसी तरह साकिन और मुतहर्रिको के हेर-फेर से उर्दू मे भी दस अरकान बन जाते है , यथा :—

हिन्दी गण	रूप	उर्दू नाम	उदाहरण
मगण	ऽऽऽ	मफऊलुन	पैमाना
यगण	।ऽऽ	फऊलुन	हमेशा, करम कर †
रगण	ऽ।ऽ	फायलुन्	श्याम का, कर करम
सगण	।।ऽ	फय्लुन्	जगना, जगकर
तगण	ऽऽ।	मफऊल	बाजार
जगण	।ऽ।	फऊल	कमाल
भगण	ऽ।।	फा (फे) लुन	बाहर, बेहतर
नगण	।।।	फ़अल	महल, नफर
लघु	।	फ	अ
गुरु	ऽ	फे	आ

† 'करम् , के 'म' का हलवत् उच्चारण होने से 'र' गुरु हो जायगा और 'कर' मे 'र' का हलवत् उच्चारण होने से 'क' का गुरुवत् उच्चारण हो जायगा। इस तरह 'करम कर' का 'करम् कर' होने से 'यगण' का रूप बन जायगा।

किसी 'गुरु' वर्ण के स्थान पर उर्दू मे दो लघु वर्ण कर लेने का कायदा है, परन्तु इसके साथ ही यह कैद भी है कि दो लघु वर्णों के पहले लघु मे कोई भी ह्रस्व स्वर रह सकता है परन्तु दूसरे मे 'इ, उ, ऋ' नही रह सकते। केवल अकार (अ) ही रह सकता है। वह भी ऐसा हो कि जिसे हलवत् पढ़ सके, जैसे —हम, तुम मे 'म' हलवत् 'म्' पढा जा सकता है।

हम पहले बतला आये है कि उर्दू के जिस छन्द की गति हिन्दी के किसी मात्रिक छन्द से मिलती हो तो उसे मात्रिक छन्द मे मानलो और जिसकी गति वर्णिक छन्द से मिलती हो उसे वर्णिक छन्दो मे मानलो। जैसा कि महाकवि नाथूराम शकर शर्मा ने किया है। हम उदाहरणार्थ यहाँ कुछ ऐसे ही थोड़े से छन्दो के उदाहरण दिये देते है* —

(१)

१ मफाईलुन् मफाईलुन् फ़ऊलुन्
ISSS ISSS ISS
कहाँ हो ऐ हमारे राम प्यारे।
मुझे तुम छोड़कर बनको सिधारे॥
—भारतेन्दु

टिप्पणी— इसका हिन्दी नाम—'सुमेरु' है।

२ फायलातुन फायलातुन फायलातुन फायलुन
SISS SISS SISS SIS

---

* उर्दू के छन्द-शास्त्र का पूरा अध्ययन किसी बडी पुस्तक से करना चाहिए।

दिल इबादत से चुराना और जन्नत की तलब।
कामचोर इस काम पर किस मुँह से उजरत की तलब ॥

टिप्पणी—हिन्दी मे इसे 'गीतिका' कहते हैं।

३ मफाईलुन् मफाईलुन्, मफाईलुन्, मफाईलुन्,
। ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ ऽ, । ऽ ऽ ऽ, । ऽ ऽ ऽ
गुनहगारो मे शामिल हैं गुनाहो से नही वाक़िफ।
सजा को जानते हैं हम ख़ुदा जाने ख़ता क्या है ॥

टिप्पणी—यह हिन्दी मे 'विधाता' कहलाता है।

४ मफऊल, फायलातुन, मफऊल, फायलातुन।
ऽ ऽ ।, ऽ । ऽ ऽ, ऽ ऽ ।, ऽ । ऽ ।
वह पास ही खडा है, पर दूर मानता है।
किस भूल मे पड़ा है, कुछ भी न जानता है ॥
—नाथूराम शंकर शर्मा

टिप्पणी—यह दिग्पाल छन्द है। शंकर जी ने इसका नाम 'सुन्दरात्मक राजगीत' रखा है।

५ मुस्तफ़्इलुन्, मुस्तफ़्इलुन्, मुस्तफ़्इलुन, मुस्तफ़्इलुन्।
ऽ ऽ । ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ ऽ । ऽ
मैं समझता था कहीं भी, कुछ पता तेरा नहीं।
आज 'शंकर' तू मिला तो, कुछ पता मेरा नहीं ॥
—'शंकर'

टिप्पणी—हिन्दी मे इसे 'हरिगीतिका' कहते हैं। नाथूराम शंकर शर्मा ने इस का 'मित्र मिलाप साखी' नाम रखा है।

मफऊल, मफ़ाईल, मफ़ाईल फ़ऊलुन
ऽ ऽ ।, । ऽ ऽ ।, । ऽ ऽ ।, । ऽ ऽ

जिसको तेरी आँखो से सरोकार रहेगा।
विलफर्ज जिया भी तो वो बीमार रहेगा॥

टिप्पणी—हिन्दी मे ये 'बिहारी' छन्द कहलाता है।

७ फाइलातुन, फाइलातुन, फायलुन
SISS, SISS, SIS
सुबह गुजरी शाम होने आई 'मीर'।
तू न चेता और बहुत दिन कम रहा॥
—मीर

टिप्पणी—इसे हिन्दी में 'पीयूषवर्ष' कहते है।

८ फ़ऊलुन्, फ़ऊलुन्, फ़ऊलुन्, फ़ऊलुन्
ISS, ISS, ISS, ISS
समाया है जब से तू आँखो मे मेरी।
जिधर देखता हूँ उधर तू ही तू है॥

टिप्पणी—हिन्दी मे इसे 'भुजगप्रयात' कहते हैं।

९ फ़ऊलुन्, फ़ऊलुन्, फ़ऊलुन्, फ़अल्।
ISS, ISS, ISS, IS
महादेव को भूल जाना नहीं।
किसी और से लौ लगाना नहीं॥
बनो ब्रह्मचारी पढ़ो वेद को।
द्विजाभास कोरे कहाना नहीं॥
—नाथूराम शंकर शर्मा

टिप्पणी—हिन्दी मे इसे 'भुजंगी' कहते हैं। 'शंकर' जीने इसका नाम 'भुजंगात्मक राजगीत' रखा है।

विषय वर्णन के विचार से उर्दू छन्दों के कुछ नाम

ग़ज़ल— गजल उन शेरो को कहते है, जिन मे प्रेम विषयक वर्णन रहते है। इन शेरो मे प्रेम के विभिन्न भागो पर प्रकाश डाला जाता है। आजकल सौंदर्य, प्रकृति-वर्णन, शान्तरस और देश-भक्ति के वर्णन भी गजलो मे किए जाने लगे है।

गजलो की चरण संख्या विषम होती है। साधरणतया पॉच से लेकर ग्यारह चरण तक लिखने की चाल है। पर ग्यारह से अधिक शेर रहने मे भी कोई दोष नहीं है।

क़सीदा—कसीदा वे शेर हैं जिनमे किसी व्यक्तिविशेष वस्तु या विषय विशेष की स्तुति या निन्दा की जाती है। कसीदे लिखने वाला अच्छा अनुभवी होना चाहिए।

मसनवी—किसी व्यक्ति विशेष की जीवनी अथवा काल्पनिक कथा को पद्य-बद्ध करना ही मसनवी कहलाता है।

मरसिया—जो करुणाजनक (शोकपूर्ण) वर्णन शेरो मे लिखे जाते हैं उन्हे मरसिया कहते है।

रुबाई—रुबाई चार चरण वाला छन्द विशेष होता है, जिस तरह दोहो मे प्रायः नीति और उपदेशपूर्ण विषय लिखे जाते हैं ठीक उसी तरह उर्दू में रुबाई भी नीति और उपदेश की बातें लिखने में काम आती है।

रेखता—बोलचाल की भाषा में लिखी जाने वाली कविता को रेखता कहते हैं।

छन्द और अनुप्रास

छन्दो के लक्षणो मे प्राय. तुकान्त की बार बार चरचा आई है। और तुकान्त एक प्रकार का अनुप्रास ही है। साथ ही मनहरण आदि छन्द ऐसे हैं जो अनुप्रासो से ही रुचिकर जँचते हैं। इसीलिए अलकार का विषय होते हुए भी इनकी यहाँ संक्षेप मे चरचा कर देना असंगत नही जान पड़ता। अस्तु —

अनुप्रास

केवल वर्ण अथवा स्वर-सहित वर्ण-समता को अनुप्रास कहते हैं।

छेक, वृत्ति, लाट, श्रुति और अन्त्य अनुप्रास के भेद हैं। कोई यमक को अलग से शब्दालंकार का भेद मानते हैं और कोई इसे भी अनुप्रास ही के अन्तर्गत। जो हो हमारा तात्पर्य यहाँ इन मुख्य शब्दालंकारों की चरचा करना है।

१. छेक

जहाँ एक या अनेक वर्णों की स्वर सहित अथवा केवल वर्ण-मात्र की समता हो वहाँ छेकानुप्रास होता है :—

'राम राज्य अभिषेक सुनि, हिय हरषे नरनारि।'

टिप्पणी—यहाँ 'राम' और 'राज्य' के 'रा' मे 'आ' स्वर सहित 'र' की और 'हिय' 'हरषे' मे केवल 'ह' वर्ण की तथा 'नर' 'नारि' मे 'र वर्ण की समता है।

२. वृत्ति

जहाँ वृत्तियो के नियमित वर्णानुसार एक या अनेक वर्णों का स्वर-सहित या केवल वर्ण का कई बार सादृश्य होता है वहाँ वृत्त्यनुप्रास होता है।

इसके तीन भेद है—उपनागरिका 'परुषा' और कोमला।

अ. उपनागरिका—जिसमे टवर्ग को छोड़कर कवर्ग से पवर्ग तक अथवा इन्ही वर्णों के पंचम वर्णयुक्त जो वर्ण हो वह माधुर्यगुण-प्रकाशक कहलाते हैं। इनमे से कई वर्णों का कई बार सादृश्य हो वहाँ उपनागरिका-वृत्ति होती है —

चातक चलि कोकिल ललित, बोलत मधुरे बोल।
कूकि कूकि केकी कलित, कुजन करत कलोल॥

—अलंकार-प्रबोध

टिप्पणी—इसमे 'क' की आवृत्ति से 'उपनागरिका-वृत्ति' है।

आ. परुषा—ट वर्ग के सब वर्ण तथा 'श,ष'और कवर्गादि के पहले, तीसरे और दूसरे चौथे वर्णों के संयोग ओज-प्रकाशक वर्ण कहलाते हैं। ओज-प्रकाशक वर्णों की कई बार सादृश्यता में परुषा-वृत्ति होती है --

जहाँ रुण्डन पै रुण्ड मुण्ड झुण्डनि के झुण्ड कटैं,
कोटिन वितुण्ड जनु बन्धुकी समान।
तहाँ सेवक दिसान भीम रुद्र के समान,
हरि शंकर सुजान झुकि झारी किरवान॥

—अलंकार-प्रबोध

टिप्पणी--इस छन्द मे 'ड' की आवृत्ति से 'परुषा-वृत्ति' है।

इ. कोमला—ओज और माधुर्य प्रकाशक वर्णो के अतिरिक्त जहाँ अन्य वर्णो की आवृत्ति हो उसे कोमला-वृत्ति कहते है --

इहि असार ससार मे, सार चार कह ब्यास।
गंग-सलिल सत-संग सिव-सेवन कासी बास ॥

--भारती भूषण

टिप्पणी—इसमे 'स' कार की अनेक आवृत्तियाँ हैं। जो माधुर्य और ओज गुण से रहित हैं।

२. लाट

एक से पद वा पद समूह वा वाक्य एक ही अर्थ में अन्वय की पृथकता से दो या कई बार आवे अर्थात् शब्द और अर्थ मे भेद न हो केवल तात्पर्य मे भेद हो, उसे लाटानुप्रास कहते हैं :—

वाक्यावृत्ति—पूत कपूत तो क्यो धन संचय।
पूत सपूत तो क्यो धन संचय ॥

—अलंकार-प्रबोध

टिप्पणी—यहाँ शब्द और अर्थ मे भेद नही है। केवल पूर्वार्द्ध के (कपूत) 'क' और उत्तरार्द्ध के (सपूत) 'स' के साथ अन्वय करने से तात्पर्यों मे भिन्नता हुई। यह वाक्य-वृत्ति है।

शब्दावृत्ति—कीन्हहु "कृपा कृपायतन' दीन्हहु दुर्लभ देह।
अब अधमन-सिरमौर लखि, तोरन लगे सनेहु॥
—भारती-भूषण

टिप्पणी—इस दोहे मे 'कृपा' शब्द का लाट है। पहला 'कृपा' समास रहित और दूसरा समास सहित है। पहले का 'कीन्हहु' शब्द से और दूसरे का 'आयतन' से अन्वय होने के कारण तात्पर्य मे अन्तर हुआ है।

४. श्रुति

जहाँ तालु कण्ठ इत्यादि से उच्चरित होने वाले व्यंजनो अर्थात् एक स्थानोत्पन्न वर्णों को समता पाई जावे उसे श्रुत्यनुप्रास कहते है —

'जयति द्वारिकाधीस जय, जय सन्तन संताप हर।'

इसमे 'द, स, न, त' आदि दन्त्य अक्षर है अत: इस पद मे श्रुत्यनुप्रास हुआ।

५ अन्त्यानुप्रास

प्रत्येक छन्द के चरणो के अन्त्याक्षर को तुकान्त कहते है। इसी अन्त्याक्षर का नाम अन्त्यानुप्रास है। भाषा मे इस तुकान्त के चरण भेद से छः भेद किये गये है। तुक प्रकरण मे ४३ वे पृष्ठ पर देखो।

६ यमक

भिन्न भिन्न अर्थ वाले अथवा बिना अर्थ वाले सुनने मे एक से पद-खण्ड, पद वा पद-समूह दो वा कई बार आवें तो यमकालकार होता है :—

भजन कह्यो तासो भज्यो, भज्यो न एको बार।
दूर भजन जा सों कह्यो, सो ते भज्यो गँवार॥

—बिहारी

यहाँ भजन और 'भज्यो' शब्दो मे यमक है। पहले 'भजन' का अर्थ 'स्मरण करना' और दूसरे का भागना है। इसी तरह पहले 'भज्यो' का अर्थ 'भागने' का है। दूसरे, तीसरे भज्यो शब्द का अर्थ 'स्मरण' भजन है।

छन्द और मुक्तकाव्य

आज कल खड़ी बोली की कविता का प्रवाह मुक्तकाव्य की ओर है। इसलिए उसकी संक्षेप मे चरचा कर देना असंगत नही होगा। छन्दशास्त्र की दृष्टि से आजकल के विद्वान् काव्य के मुख्य दो भेद करते हैं—बद्धकाव्य और मुक्तकाव्य। जो काव्य आदि से अन्त तक विशेष छन्दो की गति से बँधा रहता है उसे बद्धकाव्य कहते हैं फिर चाहे वह तुकान्त हो अथवा अतुकान्त। 'मुक्त' शब्द का अर्थ है 'स्वतत्र'! इसलिए मुक्तकाव्य का सीधा सादा यही लक्षण हो सकता है कि 'जो काव्य छन्दो की जकड-बंदी से मुक्त होता है वही मुक्तकाव्य है। अर्थात् मुक्तकाव्य मे न तो अनुप्रासो का बन्धन होता है और न उसे किसी विशेष छन्द की गति मे ही चलना पड़ता है। इच्छानुसार पक्ति पक्ति मे यति, गति और मात्राओं का हेरफेर किया जा सकता है, वर्णों की न्यूनाधिकता की जा सकती है। बस यह समझ लेना चाहिए कि मुक्तकाव्य और गद्य मे इतना ही अन्तर रहता है कि मुक्तकाव्य मे एक प्रकार की लय रहती है और गद्य मे नही रहती। अधिक स्पष्टता के लिए यहाँ तीनो ही के उदाहरण दे दिये जाते हैं :—

१. गद्य

'लक्ष्य-सिद्धि के लिए कठिन साधनाओ को आलिङ्गन करना पड़ता है। वह साधक क्या, जिसने अपने को साधनामय नहीं बना लिया।'

टिप्पणी—यह वाक्य गतिहीन है।

२. गतिमय

हम मे बल था, मगर संगठन नही था। इसीलिए हम-दबे, और गिर भी गये। बस यही एक अभिशाप हमे ले डूबा।

इस गद्य की गति इस प्रकार है—

हम मे बल था मगर सगठन नही था,
इसीलिए हम दबे और गिर भी गये।
बस यही एक अपराध हमे ले डूबा!

कविता—

जहाँ रस मे असीम उल्लास,
सुरभि मे है मतवाला पन,
भ्रमर के गुंजन मे संगीत
मलय के झोको मे कम्पन;
सुधामय बसुधा के भाण्डार
यहाँ हँसते शत शत मधुवन!

—भगवती चरण बर्म्मा

मुक्तकाव्य—

कहाँ?
मेरा अधिवास कहाँ?
क्या कहा?—रुकती है गति जहाँ?
भला इस गति का शेष—
सम्भव क्या है—
करुण स्वर का जब तक मुझ मे रहता आवेश?

मै ने 'मै' शैली अपनाई
देखा दुखी एक निज भाई,
दुख की छाया पड़ी हृदय मे मेरे
झट उमड वेदना आई ·· ··।

—अनामिका

इन उदाहरणो से गद्य, पद्य और मुक्तकाव्य का अन्तर भलीभॉति स्पष्ट हो गया होगा।

हम ऊपर बतला आये हैं कि 'ध्वनि या लयप्रधान पद छन्दहीन तथा अन्त्यानुप्रासहीन काव्य को मुक्तकाव्य कहते है।' अब केवल यह बताना शेष है कि इसकी रचना के कौन कौन ढग है। मुक्तकाव्य मात्रिक तथा वर्णिक दोनो ही प्रकार के लिखे जाते है। वर्णिको मे बंगला अमित्राक्षरपन रहता है और मात्रिको मे मात्रिक छन्दो का हिन्दीपन। मात्रिक मुक्तको मे एक प्रकार का राग रहता है। अमित्राक्षरो मे इसका लाना कठिन होता है। यहाँ दोनो का एक एक उदाहरण देकर यह विषय समाप्त किया जाता है—

वर्णिक (अमित्राक्षर)

जयसिंह!
अगर हो शानदार,
जानदार है यदि अश्व वेगवान,
बाहुओ मे बहता है

क्षत्रियो का खून यदि,
हृदय मे जागती है वीर यदि
माता क्षत्राणी की दिव्य मूर्त्ति,
स्फूर्ति यदि अग-अग को है उकसा रही,
आ रही है याद यदि अपनी मरजाद की,
चाहते हो यदि कुछ प्रतिकार
तुम रहते तलवार के म्यान मे,
आओ वीर स्वागत है
सादर बुलाता हूँ ।*

—परिमल

मात्रिक

(१)

प्रणति मे है निर्वाण,
पतन मे अभ्युत्थान,
    जलद-ज्योत्स्ना के गान !
    अटल हो यदि चरणो मे ध्यान,
        शिलोच्चय के गौरव संघात ।
        विश्व है कर्म प्रधान ।

—पल्लव

---

* इस छन्द मे कवित्त की पुट सी जान पडती है । इस का जन्म ही घनाक्षरियो से है ।

(२)

डोलती नाव प्रखर है धार,
सँभालो जीवन-खेवनहार।
तिर तिर फिर फिर
प्रबल तरंगों में
घिरती है,
डोले पग जल पर
डगमग डगमग
फिरती है,
टूट गई पतवार—
जीवन—खेवनहार।
भय में हूँ तन्मय
थर थर कम्पन
तन्मयता
छन छन में
बढ़ती ही जाती है
अतिशयता,
पारावार अपार
जीवन-खेवनहार।

—परिमल

एक बात और ध्यान देने की है कि खडी बोली की कविताओ मे क्रियाओ और विशेषत संयुक्त-क्रियाओ का प्रयोग कुशलता पूर्वक करना चाहिए, नहीं तो कविता का स्वर शिथिल पड़ जाता है। साथ ही समासो का भी बहुत ही कम प्रयोग करना चाहिए ।

॥ इति ॥

परिशिष्ट भाग

पृष्ठ १३२ पर सप्तपदी तक मात्रिक छंद है। षोडस मात्रिक प्रसाद छंद मे अपनी रचना पं० ठाकुर प्रसाद शर्मा एम० ए० ने सन् १९१६ मे लोकमान्य के आगरे के स्वागत मे पढी थी। आप के प्रसाद के संगठन मे बारह पद है अत उस का नाम प्रसाद-द्वादशपदी है।

प्रसाद-द्वादशपदी

देश का बीज शक्ति का धाम,
पडा है यहाँ लगाए आस।
सरस-हृदयो के माली वीर,
सींच कर उस का करो विकास।
यातनाओ का तर्जन घोर,
विपद् मेघो का रव गंभीर।
करेगा लीन देश की शुद्ध—
धूल मे उसका विमल शरीर।
गलेगा बीज उगेगा पेड़,
बढ़ेगा नव भारत उद्यान।
रहेगा प्रति पत्ते पर लेख,
"देश-सम्मान," "आत्म-वलिदान"॥

—ठाकुर प्रसाद शर्मा एम०ए०

पुस्तक तयार हो जाने के पीछे हमे पं० ब्रजमोहन तिवारी एम० ए० की लिखी हुई **झलक** नाम कविता की पुस्तक मिली। तिवारी जी ने अँगरेजी शैली पर चतुर्दशपदी कविताएँ लिखी है अँगरेजी मे इन्हे **'सॉनेट्स'** कहते है। तिवारी जी ने चतुर्दशपदी मे रौला छद का प्रयोग किया है।

चतुर्दशपदी

(१)

'आ कां क्षा'

बनी हुई हो एक कुटी सुरसरि के तट पर,
लता द्रुमो की मृदु छाया हो नेह भरी सी,
श्रान्त पथिक आश्रय पा सके वहाँ पर आकर,
सेवा-प्रेम भावनाओ की हो जाग्रत श्री,
नित आ ऊषा कुटिया मे मुसक्या भरदे बस,
नित प्रभात का सूर्य्य ज्योति से पावन करदे,
त्रिविध समीर बहे नित लाकर अपना सर्वस,
कलिकाओ का खिल खिलकर हँसना मन भरदे,
चरखा चले नित्यही, भगवत चर्चा हो नित,
दीनों दुखियो, पतितो के प्रति स्वजन-भाव हो,
उनके दुख से दुखी रहे मेरा दुखिया चित,
आत्मत्याग से भरा रहूँ ऐसा स्वभाव हो,

प्रभु! वर दो सहृदयता ही मेरा प्रिय धन हो।
उसकी सतत वृद्धि मे ही जीवन-यापन हो॥

(२)

'प्रेम'

जगजीवन की अमर व्याप्ति प्रिय प्रकृति नृत्य हे !
मनुष्यत्व की चिर-जाग्रति, करुणा-अभिलाषा,
सब धर्मों के प्रिय स्फूर्ति तुम पुण्य कृत्य हे !
आत्म-त्याग के चरम विजय की हो परिभाषा,
तुम ईसा की सहनशीलता के सर्वस हो,
गाँधी के हो सत्य बुद्ध की दया प्रभामय,
गीता की समबुद्धि ज्ञान के सुयश सरस हो,
तुमही हो सौन्दर्य्य-तृप्ति, तुम शान्ति सुधामय
दीनो दुखियो को तुमही तो हृदय लगाते,
'तत्त्वमसि का तुमने ही सदेश सुनाया,
राम कृष्ण बन तुमही जीवन-ज्योति जगाते,
तुमने ही बन आदिस्रोत सबको अपनाया,

सावित्रो के हो सतीत्व सीता के बल हो,
दमयन्ती के नल हो, आशा के अचल हो।

—ब्रजमोहन तिवारी एम० ए०

अभी अनेक बाते और कहने को है यदि हिन्दी-जनता ने इस कृति का स्वागत किया तो दूसरे सस्करण मे उन बातो को पाठको की भेट करेंगे।

—लेखक

उदाहृत-पद्य-कवि-सूची

उदाहृत-पद्य-ग्रन्थ-सूची

शुद्धाशुद्ध पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३६	१३	लघु	'ल'
५५	१२	इहं	हईं
३६	११	धूम	धूप
७१	२	सफल	सकल
८६	४	लँगडी	खडी
११०	१७	कम होने से	घट-बढ़ जाने से
१२४	१४	गाना गणनायक	गणनायक वर
१२४	१५	मब जब	सब जग
१२५	१३	लहरो	बहरो
१३२	१	अमाद् मिलिन्दपाद उदाहरण २	आनद् 'मकर मिलिन्दपाद पृष्ठ १०२
१३५	४	S S | S | में कूद मग्न (५) + (६)	S S | S | मं कू द मग्न (५) + (६)
१३४	५	| S | S S | बडे बडे अश्रु (४) + (५ ६)	| S | S S | बड़े ब डे अ श्रु * (४) + (५) + (६)
१३६	१७	न[१]	व[२]
१२६	१६	व	य
१३६	१८	तीसरी	पहली
१३७	४	मधन-कानन भी	मधन-गहन कानन भी

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१३८	५	दल मे मात्राओ के	दल मे बीस-बीस मात्राओं के
१४५	१३	×	(भ ग ग)
१५३	१४	की	को
१५४	२०	ऽढत	बढ़वत
१६१	२०	पारि जगत्	पारी जग
१६२	२	(त ज ज ल ग)	(न ज ज ल ग)
१६८	२२	मारि	नारि
१७६	५	हम	हय
१७७	५	मुक्ति	युक्ति
१७७	१५	मालिती	मालिनी
१७९	४	मुख	मुखै
१८२	११	धारज	धीरज
१८९	३	ओध	ओव
१८९	६	कहौ गहौ	गहौ गहौ
१८९	६	(त न स स ग)	(न न स स ग)
१८९	१२	खण्डा	खण्डी
१९१	६	शुभ-रानी	शम्भु-रानी
१९२	१०	माहन	मोहन
१९७	१७	अथ	अब
१९७	१८	यहि	महि
२०७	१३	ज्यों	त्यों
२०९	१२	आज लौ लगी है	आज लौ लौ लगी है।
२१०	१८	बिलम	बिमल
२१३	५	सुधी न एकौ	सुधीनि इकौ
२१३	१८	मूली	मूली

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२१९	८	नचैं ग्वालिनी	नचैं ग्वालिनि
२२०	१०	···त ग	······ल ग
२२२	६	भज नद	भजे नँद
२२४	१४	रनि धनि धनि	धनि धनि धनि धनि
२२७	४	रहित	रहति
२२७	१२	हन	हनैं
२२९	१	आलसा	अलसा
२२९	३	पठाय पठाय क	पठान पठाय नै
२३०	१३	रसियो की	रसिकों की
२३०	१६	या	पा
२३४	१४	उ इ इ उ (हर्सा)	उइउइ (हसी)
२३५	७	गुण श्रेयन्ति	गुणा श्रयन्ति
२३६	१७	सर्वंगुण	सर्वे गुणा
२३७	१६	इमको	हम को
२३९	१०	जो निमित्त	जो नीतिमत्त
२३९	११	धर्मात्मा है सुधी जो उदार	धर्मात्मा, त्यागी, सुधी जो उदार,
२४०	५	दया[3]	दया[2]
२४३	३	चयड वृद्धि प्रयान	चयड वृष्टि प्रपात
२४५	११	सु आनैन	सु प्रानै न
२४५	२०	हाँ मिलै	हाँ, मिलैं
२४५	२१	कवीनन	कवीतन
२४६	४	सुसदा	अपने
२४६	१४	बरहि बरहि अरि अमिन कलनि कीर	बरहि बरह धरि अमित कलनि करि
२४७	२१	का कर	का करैं

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२४७	२३	अशोक मञ्जरी	अशोकपुष्प मञ्जरी
२४८	१	का कर	का करै
२४८	१०	जलौ भरौ	भलौ भरौ
२४८	११	जान	जाल
२४८	१७	पिये	दिये
२४९	१६	टकी लगी निहारियै	टकी लगी तिहारिये
२५१	५	मगण	यगण
२५१	१३	समपद	शब्द पद
२५३	२०	अक्षर	अक्षरों
२५४	१	अमद हँकारे देत	अगद हकारे देत
२५४	४	नन भर के	नैन भर के
२५४	८	मुँदै नन	मुँदै नैन
२५४	१७	जगण (ऽ।ऽ)	जगण (।ऽ।)
२५६	४	दिव्य दह	दिव्य देह
२५६	१२	निकसि जति	निकसि जाति
२५६	१४	ब्यारो	ब्यारी
२५७	१०	गुरु लघु अथवा लघु रहता है	गुरु लघु रहता है
२५७	१७	भूमि	भूमि
२५७	२१	फुटनोट 'रूप घनाक्षरी' पृष्ठ २५७	फुट नोट 'जलहरण' पृष्ठ २५९
२५७	२२	पद्माकर के उदाहरण मे दिये हुए तीसरे छन्द	उदाहरण मे दिये हुए पद्माकर के छन्द
२५८	३	आकुल है	आकुल ह्वै
२५८	१०	(३) उदाहरण रूप घनाक्षरीका ३ पृष्ठ २५८	(२) उदाहरण 'जलहरण' का २ पृष्ठ २५९
२५९	१२	दो लघु	दो लघु* (नीचे २५७ पृष्ठ वाला फुटनोट)

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२६०	८	है के	है कै
२६१	१६	मचाव	मचावै
२६२	१	अनुष्ठुप	अनुष्टुप
२६२	४	। और सातवाँ वर्ण सदा लघु रहता है ।°	। और यदि सातवाँ वर्ण भी गुरु हो तो अच्छा होता है। इसी तरह दूसरे और चौथे चरण का सातवाँ वर्ण सदा लघु रहता है।
२६४	१६	गति	यति
२६५	१३	शब्दो	छन्दो
२६६	१	परेउ	परयो
२७०	१०	बर वा	पर वा
२७२	१७	मजुमाधवी को	मंजुमाधवी नाम से
२७७	६	उसकी	उनकी
२७६	२१	दिखाते हैं :—	दिखाओ।
२६६	१६	चार पक्तियो मे उतने कोठे	छ पक्तियो मे उतने कोठे
३०४	१६	अको मे	अको को
३०५	१	और अब ' ''छोर पर रखे है।	× †
३०८	२०	कोठे	खाली कोठे
३१३	२	आडी पक्ति	पड़ी पंक्ति
३२०	११	म, य	प य
३२०	१३	प म के	प य के
३२०	१६	म के	य के
३२१	६	परन्तु ध्यान रहे कि'' '' ' शून्य ही रखा जायगा।	

† जहाँ × यह चिन्ह है वहाँ समझो कि कुछ नही लिखा है।